स्मारिका
१९७४

दिनभर की थकान ✚

☐ बदल जाती है ☐

✚ मुस्कान में

●

"फरिश्ता उपहार"

卐

साबुन से–

■ नहा कर !! ■

:: निर्माता

दूरभाष : ५६२०८१-८२ ◎ चरखा सोप मिल्ज़

देहली ११००३५

✲ ✲ वितरक ✲ ✲

:: के० सी० गल्होत्रा एण्ड कम्पनी ::

रासबिहारी मार्ग, दिल्ली–११००३५

स्मारिका

मौरिशस आर्य-महासम्मेलन

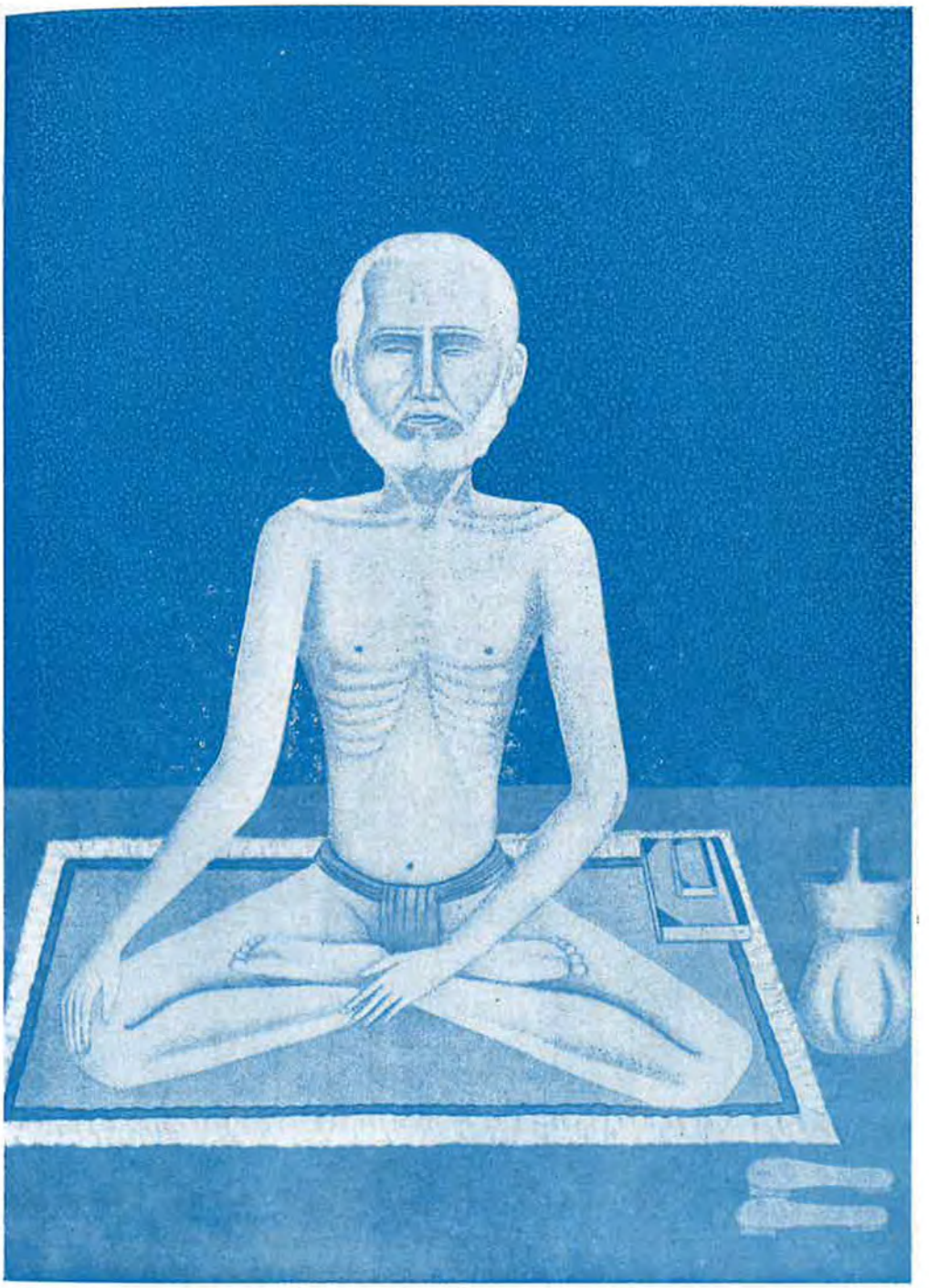

गुरुवर स्वामी विरजानन्द दण्डी

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती

ओ३म्

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी प्रकाशन

स्मारिका

१२वाँ सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन मौरिशस

प्रकाशक

सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा नई दिल्ली-१

१९७४

स्मारिका सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन मौरिशस

सम्पादक :
क्षितीश वेदालंकार

प्रकाशक :
मंत्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा,
महर्षि दयानन्द भवन
रामलीला मैदान, नई दिल्ली - १

मूल्य : १५ रु०

सन् १९७४

मुद्रक :
कुं० महेन्द्रसिंह सिकरवार
जनशक्ति मुद्रण यंत्रालय, शाहदरा, दिल्ली - ३२

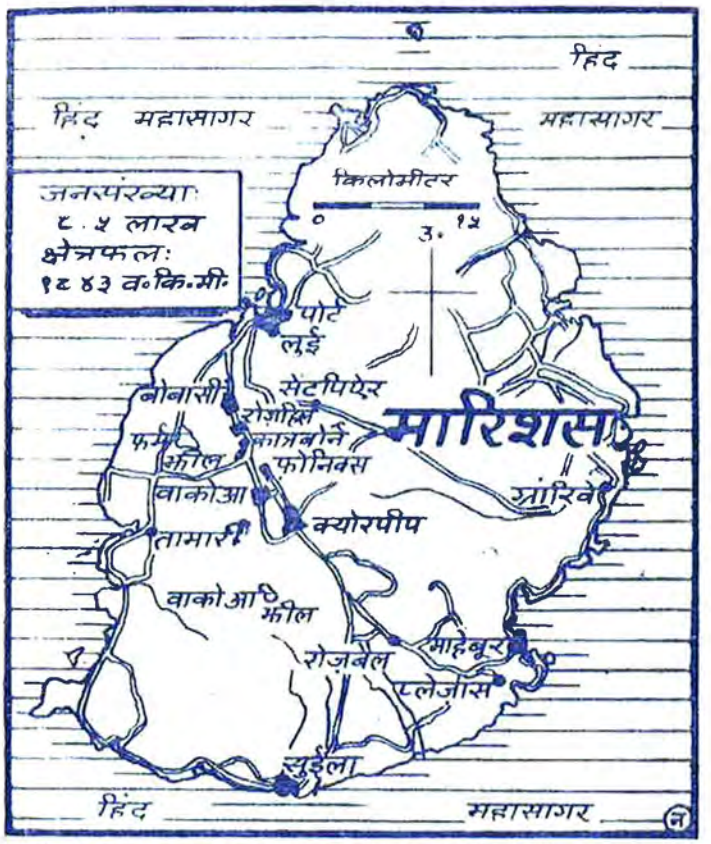
हिंद
हिंद महासागर
महासागर
जनसंख्या:
८.५ लाख
क्षेत्रफल:
१८४३ व.कि.मी.
किलोमीटर
0
3. १५
पोर्ट लुई
सेंटपिऐर
नोबासी
रोज़हिल
कातबर्ने
फ़ोनिक्स
फ़ील
वाकोआ
मारिशस
ग्रांरिवे
क्योरपीप
तामारिन
वाकोआ फ़ील
रोज़बेल
माहेबूर
प्लेज़ांस
सुईला
हिंद
महासागर

मारिशस की जनसंख्या का प्रतिशत
भारत वंशीय ७० %
क्रियोल २५.५ %
चीन वंशीय ३ %
यूरोप वंशीय १.५ %

भारत
अफ्रीका
हिंद महासागर
मारिशस

मौरिशस के प्रधानमंत्री डा० सर शिवसागर रामगुलाम

संदेश

आर्यसमाज का सबसे महत्वपूर्ण एवं सुविख्यात स्वरूप बताना अभीष्ट हो तो कहना होगा कि आर्य समाज उस धर्म का प्रचार करता है जो यद्यपि भावनाओं, मान्यताओं और विषय की दृष्टि से पुराना है तथापि युग की भावना के अनुरूप है। यह धर्म आडम्बर-शून्य एकेश्वरवाद का पृष्ठ पोषक है। अन्य विश्वासों से परिपूर्ण धार्मिक अनुष्ठानों का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है। यह रहस्यवाद और चमत्कारों में आस्था रखने के सर्वथा विरुद्ध है। यह विश्वबन्धुत्व की शिक्षा देता है और मानव को अपने शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक और नैतिक उत्थान के लिए अधिक से अधिक जितना सम्भव हो सकता है, अवसर प्रदान करता है। स्वामी जी वैदिक धर्म को उस के प्राचीन विशुद्ध स्वरूप में पुनरुज्जीवित करना और विश्व भर में उसका प्रचार करना चाहते थे।

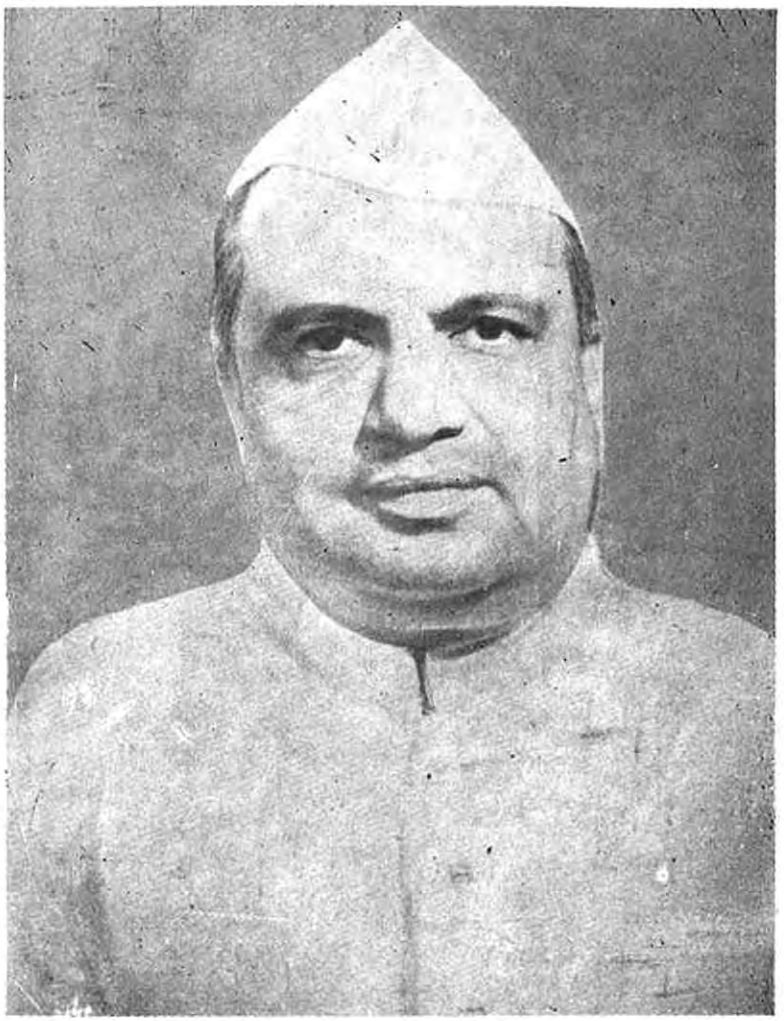

द्वादस आर्य महासम्मेलन मौरिशथ के
मनोनीत अध्यक्ष,
सार्वदेशिक सभा के भूतपूर्व प्रधान,
श्री भाई प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास,
बम्बई

पूर्वी अफ्रीका के प्रतिनिधि श्री अछरूराम अध्यक्ष महोदय
का स्वागत करते हुए

श्री आनन्दस्वामी जी महाराज अध्यक्ष को
आशीर्वाद देते हुए

द्वादश आर्य महासम्मेलन में उपस्थित भारतीय प्रतिनिधियों की ओर से संदेश का वाचन करते हुए सार्वदेशिक सभा के उपमंत्री श्री भगवान् देव शर्मा

महासम्मेलन में ऋषि दयानन्द की गीतमयी जीवन गाथा का गायन करती हुई आर्यकन्या महाविद्यालय बड़ौदा की कुमारी प्रतिभा पण्डित

श्री प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास
द्वादश आर्य महासम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण
देते हुए

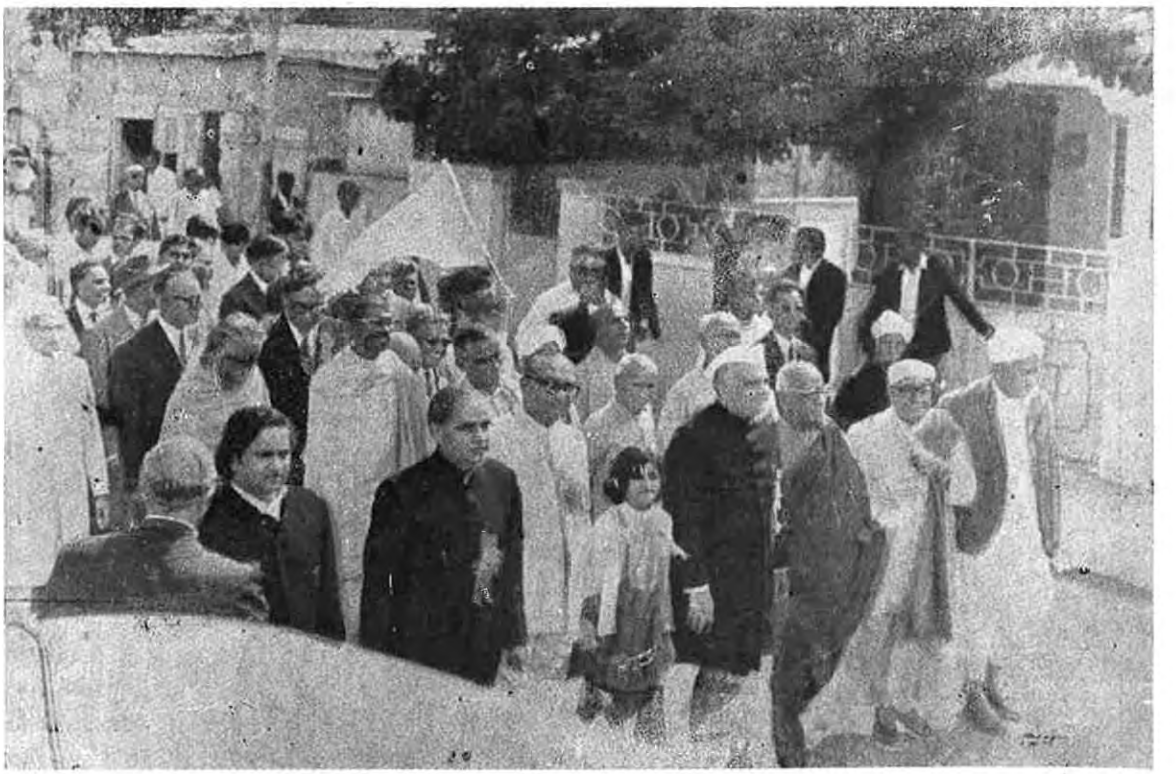

पोर्टलुई में भव्य शोभायात्रा की एक झलक

प्रथम रश्मि

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं

नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम् ।

सहस्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां

ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती ॥

अथर्ववेद—१२।१।४५

—विविध प्रकार की भाषाएँ बोलने वाले और अनेक धर्मों को धारण करने वाले जन-समुदायों को एक घर में रहने वाले भाइयों के समान यह भूमि धारण करती है। यह भूमि हमें धन की हजारों धाराएँ देती रहे, जैसे दुहने के समय इधर-उधर न हिलने वाली गाय दूध देती है।

मौरिशस—

हिन्द महासागर का मोती

भौगोलिक और ऐतिहासिक परिवेश

प्रवासियों की करुण गाथा

राजनैतिक चेतना से स्वाधीनता की ओर

प्रकाशकीय वक्तव्य

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन का १२वां अधिवेशन जो २४ अगस्त से २६ अगस्त (१९७३) तक मौरिशस की राजधानी पोर्टलुईस में हुआ था आर्य समाज और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के इतिहास की एक विशिष्ट घटना है, जिसने इन दोनों के इतिहास में बड़ा उज्ज्वल अध्याय जोड़ा और जिसके कारण आर्य समाज का सार्वभौम स्वरूप दुनियां के लोगों के सामने प्रथम बार स्थूल रूप में आया है ।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारी आर्य समाज स्थापना शताब्दी महोत्सव के संदर्भ में भारत से बाहर एक विशाल आर्य महासम्मेलन करने के लिए उत्सुक थे । सभा के कार्यालय से भारत से बाहर की आर्य प्रतिनिधि सभाओं को इस सम्मेलन का आयोजन करने की प्रेरणा की गई । प्रसन्नता है कि कई देशों से उसके लिए निमन्त्रण सभा के पास आये परन्तु आर्य सभा मौरिशस ने सर्वप्रथम इस प्रेरणा का स्वीकारात्मक उत्तर दिया । फलतः १२वें आर्य महासम्मेलन के वहीं किए जाने का निर्णय सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग ने अपनी २८-११-७१ की बैठक में कर दिया ।

मौरिशस में आर्य महासम्मेलन हुआ और बड़ी सफलता और शान के साथ हुआ । सम्मेलन की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध आर्य नेता सार्वदेशिक सभा के उप-प्रधान श्री भाई प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास ने की । सम्मेलन में जो प्रस्ताव पारित हुए वे मुख्यतः विदेश की आवश्यकता और वातावरण को लक्ष्य में रखकर प्रस्तुत किए गए थे ।

इस सम्मेलन को सफल बनाने में आर्य सभा मौरिशस, वेद प्रचारिणी सभा मौरिशस, मौरिशस सरकार, पोर्टलुइस के नगर निगम ने हमें जो योग दिया वह भुलाया न जा सकेगा । मौरिशस के प्रशासन, भारत स्थित मौरिशस हाई कमीशन और नगर निगम ने एक प्रकार से इसे अपना ही सम्मेलन समझकर इसे सफल बनाया । मैं हृदय से इन सबको धन्यवाद देता हूं । मौरिशस के प्रधान मंत्री मान्य श्री डा० शिवसागर राम गुलाम जी, तथा मौरिशस के हाई कमिश्नर श्री रवीन्द्र घरभरन जी, का हमें विशेष सहयोग प्राप्त रहा । मौरिशस के कार्यवाहक प्रधान मंत्री-माननीय श्री अब्दुल रजाक ने सम्मेलन में उपस्थित होकर अपना सारगर्भित संदेश दिया तथागवर्नरजनरल-माननीय श्री सर रहमान उसमान ने उद्घाटन किया । मौरिशस स्थित भारतीय दूतावास के हाई कमिश्नर श्री कृष्णदयाल शर्मा ने, नगर निगम के अध्यक्ष-लार्ड मेयर श्री गुईसन जुवल ने भी उपस्थित होकर संदेश देने की कृपा की । आकाशवाणी, टेलीविजन आदि सभी सम्मेलन के प्रबन्धकों के निर्णय पर थे । मौरिशस राज्य के अनेक मंत्री अपने ही थे । उनके सहयोग के संबंध में मेरा कुछ भी लिखना व्यर्थ है । उनके मूल्यवान सहयोग के लिए हम सबके हृदय में बड़ा आदर है । आर्य सभा मौरिशस के मंत्री श्री टी० कालीचरण तथा स्वागत मंत्री श्री मोहनलाल जी मोहित तथा उनके सहकारियों का उत्साह कर्त्तव्य परायणता, और कार्यकुशलता देखते ही बनते थे । उन सबकी प्रशंसा के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं । मौरिशस वासियों का आतिथ्य एवं भारत माता के प्रति प्रेम पग पग पर दृष्टिगोचर होता था ।

दक्षिण अफ्रीका तथा पूर्वी अफ्रीका आदि के बहु संख्यक आर्य नर-नारियों और आर्य नेताओं ने सम्मेलन में भाग लेकर सम्मेलन की सफलता में चार चाँद लगाए । इन सबके प्रति भी मैं आभार प्रदर्शित करता हूं ।

सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए भारत से लगभग ७०० आर्य बंधु और बहिनें जलपोत तथा वायुयान से मौरिशस गए थे। सम्मेलन के प्रतिनिधियों की कुल संख्या १२०० के लगभग थी। इन भाई बहिनों ने भी हमारी योजना को सफल बनाने में मूल्यवान योग दिया।

भारत सरकार के विदेश मंत्री माननीय श्री सरदार स्वर्णसिंह, जहाजरानी के मंत्री श्री राजबहादुर जी, रीजनल पास्पोर्ट आफिसों के अधिकारियो, मुगललाइन्स के मैनेजर श्री एस० जी सग्गी ने अपने सहकर्मियों और सहयोगियों के साथ हमारी इस यात्रा को सुगम और सुखद बनाने में हमारा हाथ बटाया। इन सबको भी मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

सम्मेलन के समय ही मांग की गई थी कि इस सम्मेलन की एक अच्छी स्मारिका प्रकाशित की जाय। इस मांग में बल था। अतः सभा ने इस कार्य को अपने हाथ में लिया। इसे तैयार करने के लिए श्री पं० क्षितीश कुमार जी वेदालंकार, सह संपादक हिन्दुस्तान नई दिल्ली से प्रार्थना की गई। वह स्वयं मौरिशस सम्मेलन में हमारे निमंत्रण पर नव भारत टाइम्स के श्री फतहचन्द शर्मा आराधक एवं हिन्दुस्तान समाचार के सर्वेसर्वा श्री वालेश्वर जी अग्रवाल के साथ गए थे। श्री पंडित जी सिद्धहस्त लेखक और आर्य समाज की गतिविधियों के पूर्ण जानकार हैं। उन्होंने अल्पकाल में ही यह अच्छी स्मारिका संपादित करके हमें दी इसके लिए मैं हृदय से उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

श्री पंडित नरेन्द्र जी (हैदराबाद) ने अपनी देख-रेख में इस स्मारिका को छपवाने और अधिक से अधिक आकर्षक बनाने का पूरा-पूरा यत्न किया है। इसके लिए मैं पंडित जी का विशेष आभारी हूँ।

सम्मेलन की विस्तृत कार्यवाही तथा इसके इतिहास पर सार्वदेशिक में विस्तार से प्रकाश डाला गया था वह आगे के पृष्ठों में दिया जाता है जिससे कि पूरा चित्र एक स्थल पर ही पाठकों के समक्ष आ जाय, वैसे विविध स्थलों पर पाठकों को ये विवरण पढ़ने को मिलेंगे।

हमारी प्रेरणा पर अनेक यात्री बंधुओं ने अपने अनुभव तथा सुझाव लिखकर भेजे हैं। उनसे हम यथोचित् लाभ उठायेंगे। कागज की कमी से उत्पन्न स्थानाभाव की कमी के कारण खेद है हम उन्हें प्रकाशित करने की स्थिति में नहीं है।

आशा है आर्य जनता इस प्रयत्न का यथोचित आदर करके इसे अपनायेगी और इसे अलभ्य अभिलेख के रूप में सुरक्षित रखेगी।

ओम्प्रकाश त्यागी
मंत्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली
२५-६-१९७४

महर्षि दयानन्द भवन,
रामलीला मैदान, नई दिल्ली-१

१२वां सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन मौरिशस

एक दृष्टि में

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन का १२वाँ अधिवेशन २४ से २६ अगस्त १९७३ तक श्रीयुत प्रतापसिंह शूरजी बल्लभदास (बम्बई) की अध्यक्षता में मौरिशस की राजधानी पोर्ट लुइस में सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ। भारत और मौरिशस के समस्त भागों के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त दक्षिण अफ्रीका, पूर्वी अफ्रीका-कीनिया, तंजानियां, जंजीवार आदि के प्रतिनिधियों ने भी भारी संख्या में सम्मेलन में भाग लिया। प्रतिनिधियों की कुल संख्या १२०० थी। २५ और २६ अगस्त को आर्य सभा मौरिशस के भव्य भवन में विषय निर्धारिणी समिति की बैठक हुई और रात्रि में २ खुले अधिवेशन हुए। सम्मेलन में विविध सामयिक एवं आवश्यक विषयों पर ८ प्रस्ताव पारित हुए।

एक प्रस्ताव में मौरिशस, गायना, फिजी, दक्षिण अफ्रीका, पूर्वी अफ्रीका, थाईलैंड, मलेशिया, ब्रह्मदेश आदि के प्रवासी आर्य बन्धुओं को विषम परिस्थितियों में से गुजर कर भी आर्य संस्कृति की ज्योति को प्रज्वलित रखने और आर्यसमाज के कार्य को आगे बढ़ाने के लिए बधाई दी गई। उन्हें प्रचार कार्य को प्रगति देने के साथ-साथ मूल निवासियों में भी वैदिक धर्म के प्रचार की ओर विशेष ध्यान देने की प्रेरणा की गई। साथ ही भारत से बाहर अब तक जो कार्य हुआ है उसका इतिहास लिखकर प्रचारित किये जाने का भी निश्चय किया गया।

एक दूसरे प्रस्ताव में जीवन को सुखी और शान्त बनाने के निमित्त भौतिकवाद और वैदिक अध्यात्मवाद के समन्वय पर बल दिया गया। आर्य समाजों को प्रेरणा की गई कि वे अपने मंच से वैदिक अध्यात्मवाद के प्रचार पर भी विशेष ध्यान दें और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा (दयानन्द भवन) दिल्ली द्वारा जो अध्यात्म शिविर लगाए जा रहे हैं उनसे अधिकाधिक लाभ उठाएं। दो प्रस्तावों में धर्म और आध्यात्मिकता का वास्तविक स्वरूप बताकर संसार से अशान्ति, कलह, पारस्परिक अविश्वास एवं मनमुटाव की अवस्थाओं को मिटाकर सुख और शान्ति की अवस्था लाने की मानव समाज से अपील की गई और इसके उपाय के रूप में वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित समाज-व्यवस्था को अपनाने का आह्वान किया गया। एक अन्य प्रस्ताव के द्वारा मातृ शक्ति को उचित सम्मान एवं अधिकार दिये जाने पर बल दिया गया। दो प्रमुख प्रस्तावों में मुख्यतः आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह को सफल बनाने के कार्य में अधिकाधिक मनोयोग एवं उत्साह से जुट जाने और डेढ़ करोड़ की राशि को जो इस कार्यक्रम की पूर्ति के लिए निर्धारित की गई है शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण करने की आर्यों एवं आर्य समाजों को प्रेरणा की गई। एक प्रस्ताव के द्वारा राष्ट्रसंघ (यूनाइटेड नेशन्स) से मांग की गई कि वह आर्यभाषा (हिन्दी) को भी अपनी स्वीकृत भाषाओं में स्थान दे और भारत सरकार को भी कहा गया है कि वह अपने प्रभाव को काम में लाकर इस मांग की पूर्ति कराए।

सम्मेलन की कार्यवाही २२-८-७३ को यजुर्वेद पारायण यज्ञ तथा ध्वजारोहण के साथ प्रारम्भ हो गई थी। यज्ञ के ब्रह्मा श्री आचार्य कृष्ण जी थे। ध्वजारोहण श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी के द्वारा हुआ। सम्मेलन में सर्वश्री

आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री, आचार्य कृष्ण जी, महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज, स्वामी ब्रह्मानन्द जी दण्डी, आचार्य रामानन्द जी शास्त्री, स्वामी सत्यप्रकाश जी आदि-आदि महानुभावों के प्रवचन एवं व्याख्यान होते रहे। श्री वेगराज जी, श्री वीरेन्द्रसिंह वीर जी तथा कुमारी प्रतिभा एम० ए० (बड़ौदा) और दक्षिण अफ्रीका की बहनों के मधुर संगीत से भी जनता लाभान्वित हुई। डी० ए० वी० कालेज पोर्ट लुइस में तथा नगर में (हिन्दी साहित्य प्रदर्शिनी) दो प्रदर्शिनियों का सुन्दर आयोजन किया गया था। डी० ए० वी कालेज की प्रदर्शिनी का उद्घाटन भारत के उच्चायुक्त माननीय श्री कृष्ण दयाल जी शर्मा द्वारा हुआ।

२४ अगस्त को सायंकाल ७॥ बजे भव्य पंडाल में विशाल जनसमूह की उपस्थिति में मुख्य सम्मेलन की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। सर्व प्रथम सार्वदेशिक सभा के उपमन्त्री श्रीयुत भगवानदेव शर्मा ने भारतीय आर्य नर नारियों की ओर से मौरिशस के आर्य बन्धुओं के प्रति शुभ कामनाओं का मर्म स्पर्शी लिखित सन्देश पढ़कर सुनाया। अध्यक्ष पद के लिए आर्य सभा मौरिशस के प्रधान श्री डा० हरिदत्त घूरा जी ने प्रतापसिंह शूरजी बल्लभदास के नाम का प्रस्ताव किया और देश विदेश की प्रान्तीय सभाओं के अधिकारियों ने अनुमोदन किया तथा मालाएं अर्पण की। इस समारोह का उद्घाटन मौरिशस के प्रधान मन्त्री माननीय श्री सर शिवसागर रामगुलाम जी को करना था परन्तु उनके अचानक जापान की राजकीय यात्रा पर चले जाने के कारण इसका उद्घाटन मौरिशस के गवर्नर जनरल माननीय श्रीसर रहमान उस्मान ने किया। इस अवसर पर मौरिशस के कार्यवाहक प्रधान मन्त्री माननीय श्री अब्दुल रज़ाक मुहम्मद भारत के उच्चायुक्त माननीय श्री कृष्ण-दयाल शर्मा तथा पोर्ट लुइस के लार्ड मेयर (फ्रैंच) भी उपस्थित थे। इन सबने अपनी शुभ कामनाओं के सन्देश पढ़कर सुनाए। कार्यवाहक प्रधान मन्त्री ने अपने भाषण में इस ऐतिहासिक सम्मेलन के लिए जो भारत से बाहर प्रथम बार हुआ था मौरिशस को चुनने और इस प्रकार उसे गौरवान्वित करने के लिये सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को बधाई देते और प्रतिनिधियों का अभिनन्दन करते हुए कहा कि—"मौरिशस में आर्यसमाज का आन्दोलन उस द्वीप के इतिहास का अंग बन चुका है और आर्यसमाज ने उनके राष्ट्रीय जीवन के विविध क्षेत्रों में महान योग दिया है।" आर्यसमाज ने सुधार और शिक्षा के क्षेत्र में जो सफल योगदान दिया है वह बेजोड़ है। स्वामी दयानन्द महान आध्यात्मिक नेता थे और उन्होंने सामाजिक एकता और न्याय के आधार पर सब मनुष्यों को आपस में मिलाने एवं कृत्रिम भेदभाव को मिटाने का प्रशंसनीय प्रयास किया।

गवर्नर जनरल महोदय ने सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन का १२वां अधिवेशन मौरिशस में रखने पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को बधाई देते हुए कहा—"मौरिशस में इस आयोजन के किये जाने से हम अपने को गौरवान्वित अनुभव करते हैं।"

उन्होंने स्वामी दयानन्द द्वारा संस्थापित आर्यसमाज के मुख्यतम उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुये कहा कि—

"यह सब मनुष्यों को आपस में मिलाने के लिये स्थापित किया गया था। महर्षि दयानन्द ने इस संस्था को प्रकाश स्तम्भ का रूप दिया जिसका प्रकाश मानव समाज को सद्भाव, ऐक्य एवं सहयोग की दिशा में प्रेरित करता रहेगा।"

"आज का जगत् भय, अज्ञान रोग और निर्धनता से पीड़ित है और सर्वत्र अशान्ति, अविश्वास, असन्तोष, वैमनस्य और अनैक्य व्याप्त है। जन्मना, जात-पांत मजहब और रंग-भेद ने मानव को मानव से पृथक कर दिया है। मानव ने वे समस्याएं पैदा कर ली हैं जिनका समाधान वह कर नहीं पा रहा है। इसका प्रभावशाली उपाय धर्म है।

"आर्यसमाज लोगों को आस्तिक बनाने और ईश्वर के नियमों पर चलने का मार्ग दिखाने के लिये यत्नशील है। मौरिशस के भाग्य निर्माण में आर्यसमाज का योगदान सर्वोपरि रहा है।"

भारत के उच्चायुक्त श्री कृष्ण दयाल ने अपने सन्देश में कहा कि "मौरिशस वासियों के हृदय में भारत के लिए प्रेम, स्नेह और मित्रता का अगाध समुद्र लहराता है। भारत भी मौरिशस की मित्रता पर गर्व करता है।"

"मौरिशस में भी भारतीय आए और बस गए। उन्होंने भारतीय संस्कृति को प्राणों से भी अधिक मूल्यवान मानकर उसे जीवित रखा है। भारतीय संस्कृति समन्वय समता एवं एकता में विश्वास करती है।"

लार्ड मेयर गुईसन जुवल ने प्रतिनिधियों का अभिनन्दन करते हुए कहा कि "मौरिशस भारतीय यात्रियों का दूसरा घर है। आर्यसमाज ने समाज-सुधार और जात-पांत आदि की कृत्रिम दीवारों को ढाने की दिशा में प्रशंसनीय कार्य किया है।

"मौरिशस में हजारों मील दूर से (भारत से) प्रकाश चमक रहा है।"

इस अवसर के लिए देश-विदेश से प्राप्त अनेक सद्-भावना सूचक सन्देश आर्य सभा मौरिशस के मन्त्री श्री टी० 'कालीचरण' जी द्वारा सुनाए गए जिनमें एक सन्देश कांग्रेस प्रेजीडेण्ट श्री शंकर दयाल जी शर्मा का भी था। स्वागता-ध्यक्ष श्री मोहनलाल जी मोहित के भाषण के उपरान्त सम्मे-लन के अध्यक्ष मान्य श्री प्रतापसिंह जी शूरजी बल्लभदास ने अपना भाषण पढ़ा जिसमें आर्यसमाज के उद्देश्य उसकी सफलताओं तथा भावी कार्यक्रम पर बड़ा अच्छा प्रकाश डाला गया था। प्रधान जी के व्यक्तित्व एवं उनके भाषण का बहुत उत्तम प्रभाव लोगों पर पड़ा।

अधिवेशन की यह प्रथम बैठक बड़े उत्साह पूर्ण वाता-वरण में हुई। कैमरा मैनों एवं पत्रकारों की एक बड़ी टुकड़ी कार्यरत थी। यह कार्यवाही टेलीविजन पर साथ-साथ दिखाई जा रही थी।

इस अधिवेशन के प्रसंग में कवि सम्मेलन, राष्ट्र एकता सम्मेलन, शिक्षा सम्मेलन, आर्य नवयुवक सम्मेलन, वेद सम्मेलन महिला सम्मेलन क्रमशः सुप्रसिद्ध साहित्य सेवी एवं कवि श्री क्षेमचन्दजी सुमन (दिल्ली) माननीय सत्यकाम जी बुलेल, कृषि मन्त्री मौरिशस राज्य, श्री डा० डी० राम जी प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री ओ३म् प्रकाश जी त्यागी संसद सदस्य एवं मन्त्री सार्वदेशिक सभा, श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री, श्रीमती शकुन्तला जी गोयल (उ० प्र०) की अध्यक्षता में सम्पन्न हुए।

राष्ट्र एकता सम्मेलन का उद्घाटन योजना एवं विकास मन्त्री श्री जगतसिंह ने किया। शिक्षा सम्मेलन का उद्घाटन मौरिशस के शिक्षा मंत्री श्री राजमोहन सिंह जोमाधर के द्वारा हुआ। आर्य नव युवक सम्मेलन का उद्घाटन माननीय श्री दयानन्द बसन्तराय मन्त्री मौरिशस राज्य ने किया। महिला सम्मेलन का उद्घाटन श्रीमती सुशीला विद्यालंकृता (हैदराबाद) के द्वारा हुआ। आर्य-युवक समेलन के संयोजक राजस्थान के सुप्रसिद्ध आर्य नेता प्रतिनिधि सभा राजस्थान के प्रधान तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उप प्रधान श्री छोटूसिंह जी एडवोकेट (अलवर) तथा वेद सम्मेलन के संयोजक श्री नरदेव जी वेदालंकार दक्षिण अफ्रीका थे, जिनके बड़े सारगर्भित भाषण हुए। श्री छोटूसिंह जी ने आर्य युवक शक्ति को संगठित किये जाने और उन्हें आर्य संस्कृति के श्रेष्ठ नमूने बनाये जाने पर बल दिया। वेद सम्मेलन भी बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न हुआ। उसके अध्यक्ष और संयोजक तथा अन्य वक्ताओं के भाषण बड़े गभीर और गवेषणापूर्ण और वेद ज्ञान के प्रति रुचि उत्पन्न करने वाले थे। श्रीयुत क्षेमचन्द जी सुमन ने अपने भाषण में मौरिशस में आर्य समाज की प्रशस्त भूमिका पर प्रकाश डालते हुए कहा—

"आर्य समाज के माध्यम से इस द्वीप में सांस्कृतिक जागरण और हिन्दी प्रचार का जो कार्य हुआ उसका सुपरिणाम यही है कि आज मौरिशस स्वतन्त्र देश के रूप में उभर कर सामने आया है।"

महिला सम्मेलन के प्रति देवियों में बड़ा उत्साह दृष्टि-गोचर हुआ। सम्मेलन की अध्यक्षा श्रीमती शकुन्तला जी गोयल के भाषण के अतिरिक्त भारत के उच्चायुक्त माननीय कृष्ण दयाल जी शर्मा की धर्मपत्नी श्रीमती वीणा शर्मा तथा मौरिशस की सुप्रसिद्ध महिला कार्यकर्तृ श्रीमती लखा-वती हरिगोविन्द जी के भाषण बड़े प्रभावशाली हुए। श्रीमती वीणा शर्मा ने वैदिक काल में नारी जाति की उच्च स्थिति पर बड़े सुन्दर शब्दों में प्रकाश डाला।

२६ अगस्त १९७३ को आर्यसभा भवन में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिनिधि सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन की उपस्थिति १११ थी। श्री नरदेव जी वेदालंकार (दक्षिण अफ्रीका) श्री रामप्रसादजी उपप्रधान आर्य सभा मौरिशस, श्री अच्छ-रादास जी (नैरोबी) श्रीकृष्ण रावल (तंजानियां) श्री पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार (कीनिया) आदि-आदि महानु-भावों ने अपने-अपने देशों में आर्यसमाज की स्थिति और अपनी कठिनाइयों का वर्णन किया और सार्वदेशिक सभा से प्रचार कार्य को आगे बढ़ाने एवं सम्पत्ति की सुरक्षा के लिये आवश्यक मार्गदर्शन एवं सहायता की मांग की।

सार्वदेशिक सभा की ओर से श्री प्रतापसिंह शूरजी बल्लभदास, श्री डा० डी० राम जी प्रधान सार्वदेशिक सभा तथा श्री ओ३म् प्रकाश त्यागी सभा मन्त्री ने आवश्यक सहायता एवं सहयोग देने का आश्वासन दिया।

इस अवसर पर २६-८-७३ को प्रातः १० बजे से १२ बजे (मध्यान्ह) पोर्ट लुइस नगर में आर्यों का एक भव्य एवं विशाल जलूस निकला जिसकी नगर निवासियों एवं दर्शकों पर बड़ी गहरी छाप पड़ी। इसमें मौरिशस एवं भारतीय आर्य नर-नारियों आर्य समाजों एवं संस्थाओं के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त दक्षिण एवं पूर्वी अफ्रीका के आर्य भाइयों ने भी भाग लिया। मौरिशस एवं भारत आदि के बड़े २ आर्य नेताओं एवं कार्य कर्ताओं ने भाग लेकर इसके महत्व को बढ़ाया। जलूस परम्परा के अनुसार अनुशासनबद्ध था। दर्शक गण स्थान २ पर जलूस का अभिनन्दन कर रहे थे जिनमें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, चीनी, तमिल,अंग्रेज व फ्रांसीसी सम्मिलित थे। जलूस के लिए नारे पहले से ही चुन लिए गए थे। 'वैदिक धर्म की जय' 'आर्य समाज अमर रहे,' 'भारत मौरिशस मैत्री अमर रहे,' महर्षि दयानन्द सरस्वती की जय' 'मर्यादा पुरुषोत्तम राम की जय' 'योगिराज श्री कृष्ण जी महाराज की जय' आदि-आदि प्रमुख नारे थे। जलूस का नेतृत्व सम्मेलन के अध्यक्ष श्रीयुत प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास, सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री डा० डी० राम जी, मन्त्री, श्री ओ३म् प्रकाश जी त्यागी, आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री, महात्मा आनन्द स्वामी जी, स्वामी सत्यप्रकाश जी आर्य सभा मौरिशस के मंत्री श्री टी० कालीचरण जी, स्वागताध्यक्ष, श्री मोहनलाल जी मोहित तथा स्वागत मन्त्री श्री रामलाल जी गुमानी, श्री गोतम तिलक आदि महानुभाव कर रहे थे।

सम्मेलन का स्थान आर्य सभा के भव्य भवन एवं डी० ए० वी० कालेज के निकट ताहेर बाग (दयानन्द नगर) था। इसका निर्माण श्री पण्डित नरेन्द्र जी के निर्देशन में हुआ। लगभग ४००० कुर्सियों की व्यवस्था की गई थी। पंडाल तथा मंच भली-भांति सजाए गए थे। लोगों में बड़ा उत्साह व्याप्त था। अधिवेशनों की कार्यवाही का संचालन मुख्यतः सार्वदेशिक सभा के मंत्री श्री ओ३म् प्रकाश जी त्यागी ने किया। सभा प्रधान श्री डा० डी० रामजी निरन्तर उपस्थित रहकर मनोनीत प्रधान तथा सभामन्त्री को अपना मूल्यवान मार्ग दर्शन एवं सहयोग देते रहे। २४ से २६ अगस्त तक भोजन की व्यवस्था आर्य रवि वेद प्रचारिणी सभा पोर्ट लुइस के भव्य भवन में रही जो बड़ी संतोषजनक और अच्छी थी।

२६ की रात्रि को खुले अधिवेशन के बाद १० बजे सम्मेलन की समाप्ति हुई। इससे पूर्व महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का 'आत्म तत्व' विषय पर प्रभावशाली प्रवचन हुआ। आर्य सभा के उपमन्त्री श्री मोती तोरल ने उन सभी को धन्यवाद दिया जिन्होंने सम्मेलन के आयोजन को सफल बनाने के लिये उन्हें नैतिक एवं आर्थिक हर प्रकार का सहयोग दिया था।

मौरिशस प्रशासन एवं नगर पालिका के योग की उन्होंने विशेष सराहना की जिन्होंने इस आयोजन के प्रति अपनत्व की भावना प्रदर्शित करते हुए इसे सफल बनाने में अपनी हर प्रकार की सहायता दी थी। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि सम्मेलन का सुसज्जित पंडाल नगर पालिका ने ही अपनी ओर से अपने व्यय पर बनवाया था।

भारतीय प्रतिनिधियों एवं यात्रियों की संख्या लगभग ७०० थी जिनमें से ६३७ मुगल लाइन्स के सुप्रसिद्ध एवं विशाल जलपोत "अकबर" से गए थे। यह जलपोत १६ अगस्त १९७३ को बम्बई के बन्दरगाह से सायंकाल ७ बजे मौरिशस के लिए रवाना हुआ था और २४।८।७३ को २७०० मील की दूरी तय करके २ बजे मध्याह्न पोर्ट लुइस के "क्वे" नामक डैक पर जाकर लगा था। जहाज में खान-पान और रहन-सहन की व्यवस्था अच्छी थी। जहाज के अधिकारियों का व्यवहार सौजन्य पूर्ण था और वे यात्रियों की सुख-सुविधा का विशेष ध्यान रखते थे। यात्रियों ने भी अपने परम्परागत सद्व्यवहार और अनुशासन प्रियता का भव्य परिचय दिया। इस यात्रा के प्रमुख संयोजक श्री रामलाल जी मलिक (ठेकेदार) दिल्ली ने बड़े त्याग और परिश्रम से सार्वदेशिक सभा की ओर से यह यात्रा सुलभ एवं सफल बनाई थी और बड़ा भारी बोझ अपने ऊपर लिया था। उन्होंने इस दायित्व को खूबसूरती के साथ निवाहा। जहाज पर श्रीयुत भगवानदेव

जी शर्मा उपमन्त्री सार्वदेशिक सभा, पं० सच्चिदानन्द जी शास्त्री, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उ० प्र० श्री डा० सुरेशचन्द्र शास्त्री कार्यवाहक मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उ० प्र०, श्री राजगुरु जी शर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य भारत, श्री बाल रेड्डी जी मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद श्री छगनलाल जी विजयवर्गीय श्री प्रियव्रत दास जी इंजिनियर उड़ीसा, श्री जयसिंह गायकवाड़ उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश श्रीमती कमला आर्या (लुधियाना) श्रीमती शकुन्तला आर्य्या (दिल्ली) श्री नारायणदास जी कपूर, श्री हेतराम जी (अलवर) श्री सुखदेव जी आर्य जोधपुर श्री परशुराम जी दूधात बम्बई आदि ने भी जहाज पर यात्रियों की सुख-सुविधा के कार्य में अपना प्रशंसनीय योग दिया। आन्तरिक व्यवस्था का दायित्व मुख्य रूप से श्री छोटूसिंह जी सभा उपप्रधान के ऊपर रहा और उन्होंने बड़ी सुन्दरता से इसका निर्वाह किया। डा० सुरेशचन्द्र जी झांसी ने यात्रियों की चिकित्सा उपचार में सर्वाधिक योग दिया।

१३-८-७३ को एक स्पेशल ट्रेन यात्रियों को लेकर दिन के पौने दो बजे नई दिल्ली से रवाना हुई। मार्ग में भरतपुर स्टेशन पर यात्रियों का अभिनन्दन किया गया और उपाहार वितरित किया गया। यह आयोजन भरतपुर समाज के प्रधान श्री संतोषीलाल जी के कुशल नेतृत्व में किया गया था। बड़ौदा स्टेशन पर श्री आनन्दप्रिय जी के नेतृत्व में आर्य कन्या महाविद्यालय की ओर से स्वागत किया गया और जलपान की व्यवस्था की गई। बम्बई में आर्यसमाज काकड़वाड़ी की ओर से दोनों ओर से यात्रियों के निवास और भोजन की सुव्यवस्था की गई थी जिसमें श्री प्रतापसिंह शूरजी श्री जयदेव जी आर्य श्री भगवती प्रसाद जी गुप्त एवं श्री गुलजारी लाल जी श्री ओंकार नाथ जी, पं० देवव्रत जी आर्य ने हर प्रकार का सहयोग दिया और यात्रियों की सुख-सुविधा का विशेष ध्यान रखा। १६-८-७३ को अकबर जहाज के रवाना होने से पूर्व भारत सरकार के जहाज रानी मन्त्री श्री राजबहादुर जी ने विदाई दी। भारत सरकार के विदेश मन्त्री श्री स्वर्णसिंह जी ने इस अभियान की सफलता के लिए सार्वदेशिक सभा को अपना मूल्यवान योग दिया। दिल्ली में ट्रेन के यात्रियों को विदाई देने के लिए प्रायः सभी प्रमुख आर्य नेता एकत्र हुए थे जिनमें महात्मा आनन्द स्वामी जी श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी, श्री लाला रामगोपाल जी शालवाले, श्री सोमनाथ जी मरवाह एडवोकेट कोषाध्यक्ष सार्वदेशिक सभा, श्री पं० देवव्रत जी धर्मेन्दु, श्री लाला ओम्प्रकाश जी कपड़े वाले, श्री लाला चतुरसेन जी गुप्त आदि आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। श्री पं० क्षितीश कुमार जी वेदालंकार सह सम्पादक हिन्दुस्तान, श्री फतहचन्द जी शर्मा आराधक (नवभारत टाइम्स) तथा हिन्दुस्तान समाचार समिति के संचालक श्री बालेश्वर जी अग्रवाल तथा अन्यान्य कैमरामैन एवं पत्रकार भी इस यात्रा में सम्मिलित थे जिन्होंने प्रचार कार्य में बड़ी सहायता दी।

मौरिशस के निवासियों पर यात्रियों के व्यवहार एवं वेष भूषा विशेषतः जोधपुर के यात्रियों की रँग-विरंगी पगड़ियों का गहरा प्रभाव पड़ा। मौरिशस टाइम्सपत्र ने जो फ्रेंच भाषा में निकलता है इन पगड़ियों का विशेष रूप से उल्लेख किया था।

सार्वदेशिक सभा का कार्यालय आर्य सभा मोरिशस के भवन के निकट डी० ए० वी० कालेज में रखा गया था। इन पंक्तियों के लेखक के अतिरिक्त श्री रामभूल जी शर्मा एकाउण्टेट, श्री दानसिंहजी मेहरा टाइपिस्ट सभा एवं श्री प्रेमचन्द जी शर्मा भूतपूर्व एकाउण्टेट सभा कार्यालय के अंग थे। इन सबने मनोयोग पूर्वक काम किया। श्री प्रेमचन्द शर्मा का सहयोग बड़ा वांछनीय सिद्ध हुआ। इससे पूर्व लगभग ४ मास तक सभा का समस्त कार्यालय श्री केदार नाथ जी कार्यालयाध्यक्ष की देख-रेख में इस आयोजन के कार्य में अत्यधिक व्यस्त रह चुका था।

२७ और २८ अगस्त १९७३ को महात्मा आनन्द स्वामी जी की अध्यक्षता में आर्य सभा भवन में अध्यात्म शिविर लगा जिसमें लगभग ६० साधकों ने भाग लेकर लाभ उठाया। इस शिविर का आयोजन सार्वदेशिक सभा के उपमन्त्री श्री भगवानदेव जी शर्मा ने किया था। श्री शर्मा जी के वैज्ञानिक ढंग से सिखाए गए योगासनों से साधक प्रभावित हुए।

प्रबन्ध में सहयोग देने तथा सब व्यवस्था ठीक करने और पृष्ठभूमि बनाने के लिए श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री, श्री पं० नरेन्द्र जी हैदराबाद, श्री आचार्य कृष्णजी, वायुयान द्वारा अगस्त के प्रारम्भ में ही मौरिशस जाकर बैठ गए थे जिनकी उपस्थिति तथा सहयोग से प्रबन्ध व्यवस्था और प्रचार कार्य में मौरिशस के संयोजकों को बड़ी सहायता मिली। श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री के हिन्दी, अंग्रेजी में टेलीवीजन पर हुए वार्तालाप, भाषण तथा समाजों के दौरे और व्याख्यानों ने सम्मेलन की सफलता में प्रशस्त भूमिका निभाई। इन महानुभावों का सहयोग बड़ा प्रशंसनीय रहा।

दक्षिण और पूर्वी अफ्रीका के आर्य बन्धुओं ने जिनमें सर्वश्री नरदेव जी वेदालंकार सुखराज दी छुटाई, अच्छरदास श्री मंत्री आ० स० नैरोबी पं० सत्यदेव जी विद्यालंकार नैरोबी, कृष्ण रावत दारासलाम, शिशुपाल रामभरोस (दक्षिण अफ्रीका) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं इस सम्मेलन में भाग लेकर अपने कर्त्तव्य का पालन किया और मौरिशस के आर्य बन्धुओं को प्रोत्साहित किया।

हम मौरिशस से बड़ी सुखद स्मृतियां लेकर लौटे जो मौरिशस में आर्य समाज के प्रसार, प्रभाव, आर्य बन्धुओं के आतिथ्य, मौरिशस वासियों के सद्व्यवहार, द्वीप के प्राकृतिक सौन्दर्य, सर्वत्र, व्याप्त मनोरम हरियाली, नगरों एवं ग्रामों की सुघड़ता, और शान्त वातावरण से स्पंदित है। मौरिशस का सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन आर्य-समाज के इतिहास की अनूठी घटना है जिसने सार्वदेशिक सभा के सार्वदेशिक स्वरूप को निखारा, उसमें चार चांद लगाए और उसके इतिहास में एक स्वर्णिम पृष्ठ जोड़ा है।

—रघुनाथ प्रसाद पाठक

१. युवा वो है जो वयस्क समाज के पाखंडों से संघर्ष करने की क्षमता रखता है।

२. युवा वो है जो सड़े गले विचार प्रवाह के विरुद्ध चलने की हिम्मत रखता हो।

३. युवा वो है जो जीवन के साधन नहीं लक्ष्य प्राप्त करता है।

भौगोलिक और ऐतिहासिक परिवेश

हिन्दमहासागर में भारत से पश्चिम की ओर मौरिशस एक छोटा सा द्वीप है। इसकी लम्बाई उत्तर से दक्षिण तक ४० मील और चौड़ाई पूर्व से पश्चिम तक ३० मील है। क्षेत्रफल है ७२० वर्गमील। यह द्वीप बम्बई से लगभग ढाई हजार मील, नेटाल (दक्षिणी अफ़्रीका) से लगभग डेढ़ हजार मील, मेलबोर्न (आस्ट्रेलिया) से साढ़े चार हजार मील, मदगास्कर से ६०० मील और मोम्बासा से ११२० मील दूर है।

इस द्वीप को 'हिन्दमहासागर का मोती', 'हिन्दमहासागर का तारा' और 'हिन्दमहासागर का रत्न' आदि विशेषणों से सम्बोधित किया गया है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि यह द्वीप प्रायः सब ओर से मूँगे की चट्टानों की शृंखला से घिरा है। प्रवाल रेखा और समुद्रतट के मध्यसागर का जल मरकत मणि और नीलमणि के समान झिलमिल-झिलमिल करता रहता है। समुद्रतट की सफेद बालुका के कारण इसे 'श्वेत रेत का द्वीप' भी कहा जाता है।

टापू के मध्य में लगभग २,००० फुट की ऊँचाई का समतल मैदान है जो तीन ओर पर्वतों से घिरा है। पर्वतों की उंचाई ढाई हजार फुट से अधिक नहीं है, इसलिए वहाँ कभी बर्फ नहीं पड़ती। चारों ओर पर्वत, बीच में मैदान और टापू के चारों ओर समुद्र—इस भौगोलिक परिस्थिति ने इस लघुद्वीप के जलवायु को अत्यन्त मनोरम बना दिया है। इसी कारण चाहे कोई ऋतु हो, यहाँ का दिन और रात दोनों सुहावने होते हैं। यहाँ का रमणीक समुद्रतट सागर-स्नान और सूर्य-स्नान के इच्छुक लोगों के लिए आकर्षण का केन्द्र है।

कुछ विद्वानों का कहना है कि भारतीय संस्कृत साहित्य में जो श्वेतद्वीप का नाम आता है, वह इसी टापू के लिए है, क्योंकि 'सफेद रेत के टापू' के नाम से तो यह आज भी सम्बोधित किया ही जाता है। जिन भारतीय मनीषियों ने मिस्र में बहने वाली नील नदी के उद्गम का उल्लेख पुराणों में किया है (उसी उल्लेख के आधार पर बाद में नील नदी के उद्गम की खोज की गई), वे इस द्वीप से परिचित रहे हों तो आश्चर्य नहीं। मौरिशस की वर्तमान भारतीय जनता तो 'मारीच द्वीप' के नाम से भी इस द्वीप को संबोधित करती है और रामायण-काल के मारीच नामक स्वर्णमृग से उसका सम्बन्ध जोड़ती है। लोकश्रुति है कि श्रीराम ने मारीच को मारकर समुद्र में डाल दिया था और उसे हिन्दमहासागर के इस भूभाग में प्रकट होने का वरदान दिया था। स्वर्णद्वीप और रूप्यक द्वीप के नाम से इस टापू की जो ख्याति रही है, वह इस प्रकार की अनुश्रुतियों को बल प्रदान करती है।

परन्तु मौरिशस का प्रचलित नाम यूरोपीय जातियों की देन है। पन्द्रहवीं और सोलहवीं सदी में यूरोप के साहसी नाविकों ने अपने परिचित प्रदेश से बाहर निकल कर नए-नए प्रदेशों की खोज करने का अभियान प्रारम्भ किया था। उसी सिलसिले में कोलम्बस ने अमरीका की खोज की और वास्कोडिगामा गोवा के समुद्र तट तक पहुँचा। अमरीका की खोज भी मूलतः भारत की खोज के भ्रम में ही हुई। तभी तो वहां के निवासियों को 'इण्डियन' (रैड) कहा गया। जब यूरोपीय जातियां अन्धकार युग में थीं, तब एशिया, और खास कर भारत, समृद्धि के शिखर पर था। भारत उस समय 'सोने की चिड़िया' के नाम से

मशहूर था और समृद्धि के इच्छुक सभी देश भारत से व्यापार करने और उससे सम्पर्क बढ़ाने को लालायित रहते थे। सब से पहले कुछ साहसी पुर्तगाली नाविक ही उत्तमाशा अन्तरीप (केप आफ गुड होप) होकर भारत की ओर अभियान के प्रसंग में इस टापू पर पहुंचे। यह बात सन् १५०७ की है। इस निर्जन द्वीप में उन्होंने एक पक्षी देखा जो आकृति में राजहंस जैसा था, पर वह उड़ना नहीं जानता था। शायद इसीलिए उन्होंने उस पक्षी का नाम 'डोडो' रखा, जो उनकी भाषा में नासमझ और गावदी का पर्यायवाची है। वे इस टापू को डोडो अर्थात् राजहंसों का द्वीप कहते रहे।

परन्तु पुर्तगाली यहां अधिक समय तक नहीं टिके। उनके आगमन का अब कोई चिन्ह मौरिशस में ढूँढ़ने पर भी शायद ही मिले। लगभग सोलहवीं सदी के अन्त में डच नाविक इस टापू पर आए। वास्तव में तो एक समुद्री तूफान में फंस जाने के बाद उससे बचने के लिए ही उन्होंने इस टापू की शरण ली थी। धीरे-धीरे और डच लोग आते रहे। उन्हें यह टापू उपयोगी प्रतीत हुआ और उन्होंने इसे आबाद करके अपना उपनिवेश बनाने की सोची। उन्होंने ही अपने देश के राजकुमार के सम्मान के लिए उसके नाम पर इस टापू का नाम मौरिस रखा और सन् १६८१ में बाकायदा इसे अपना उपनिवेश घोषित किया।

सघन बनों से आच्छादित मौरिशस की भूमि में उस समय आबनूस और सागवान के वृक्ष बहुतायत से थे। डच लोगों ने इस कीमती इमारती लकड़ी को यूरोप भेजना शुरू किया। यूरोप में उस उमय इसकी खूब माँग थी। जंगलों को साफ करने के लिए वे कुछ कैदियों को और अफ्रीका के गुलामों को लाये। पर मुख्य रूप से वे इस टापू को कृषि-प्रधान उपनिवेश बनाना चाहते थे। उन्होंने ही यहां ईख की खेती शुरू की। पर उसमें उन्हें विशेष सफलता नहीं मिली। चूहों का आधिक्य था। वे सारी फसल नष्ट कर देते। इन्हीं चूहों के कारण सन् १७१२ में ऐसी भयंकर प्लेग फैली कि अन्त में तंग आकर डचों ने इस टापू को छोड़ जाने में ही अपना कल्याण समझा। डचों ने ही अन्य खाद्य पदार्थों के अभाव में डोडो नामक पक्षी का इस बेरहमी से शिकार किया कि अब संसार में इस पक्षी की नस्ल ही नामशेष हो गई जिसका संकेत अंग्रेजी में 'डैड ऐज़ डोडो' नामक शब्द-विन्यास में मिलता है।

यूरोप के इतिहास का अध्ययन करने से एक बात स्पष्ट होती है। उस युग में पुर्तगाली; डच, फ़्रांसीसी और अंग्रेज अपनी-अपनी सामुद्रिक शक्ति और सैन्य-शक्ति के विस्तार के लिए परस्पर संघर्ष कर रहे थे और अफ्रीका तथा एशिया में अपने साम्राज्य-विस्तार के स्वप्नों को चरितार्थ करने में लगे हुए थे। इस संघर्ष में सबसे पहले आगे बढ़े पुर्तगाली। १६वीं सदी स्पेन और पुर्तगाल के वर्चस्व की सदी कही जा सकती है। उसके बाद नम्बर आता है डचों का। १७वीं सदी डचों के प्रभुत्व-विस्तार की सदी है। अगला नम्बर है फ़्रांसीसियों का। १८वीं सदी में ही नेपोलियन ने यूरोप को पादाक्रान्त करके मिस्र तक अपने आधिपत्य का विस्तार किया था। १८वीं सदी असंदिग्ध रूप से फ़्रांसीसियों के वर्चस्व की सदी है। पर १८वीं सदी का अन्त होते होते नेपोलियन का अन्त हो गया और फ्रांस की प्रभुता भी समाप्त हो गई। उन्नीसवीं सदी अंग्रेजों की सदी। इस सदी में अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य का जितना विस्तार किया वह अभूतपूर्व था। इतिहासकारों ने यहां तक कहा कि अंग्रेजों के साम्राज्य में कभी सूर्यास्त नहीं होता। परन्तु १९वीं सदी का अन्त होते-होते ब्रिटिश साम्राज्य ह्रास को प्राप्त होने लगा और बीसवीं सदी के मध्य तक तो ब्रिटेन संसार की महाशक्ति के सिंहासन से ही च्युत हो गया। क्या काल-पुरुष ने इन यूरोपीय शक्तियों की जीवनावधि केवल एक एक शताब्दी ही नियत की है?

फ्रांसीसी शासन

इतिहास के इसी कालक्रम में, १८वीं सदी के प्रारम्भ में ही फ्रांसीसी इस टापू में उतरे। सन् १७१५ में उन्होंने इस पर अधिकार किया। प्रतिरोध का कहीं प्रश्न ही नहीं था। स्वेज नहर के अभाव में तथा अरबीय स्थल मार्गों पर अरबों का एकाधिकार होने से यूरोपीय व्यापारियों को पूर्वी एशिया के देशों में आने के लिए समस्त अफ्रीकी समुद्र

तट का चक्कर लगा कर आशा अन्तरीप होते हुए आना पड़ता था। इसी मार्ग के बीच में पड़ता था मौरिशस। जहाजों की मरम्मत, राशन और पेयजल की व्यवस्था के लिए मौरिशस से बढ़कर उपयोगी स्थान नहीं था। अतः फ्रांसीसियों ने मन लगा कर इस उपनिवेश को आबाद करने का प्रयत्न किया और इसका नाम भी उन्होंने 'आइल दे फ्रांस'—'फ्रांस का द्वीप' रख दिया।

फ्रांसीसियों के काल में यह टापू व्यवस्थित रूप से आबाद हुआ। उनके शासन के चालीस वर्षों बाद ही यह एक सम्पन्न फ्रेंच उपनिवेश बन गया। फ्रांसीसियों ने मौरिशस को कृषि-प्रधान प्रदेश के रूप में विकसित किया, यहां सामरिक अड्डा बनाया। मौरिशस के निर्माण में जिन फ्रांसीसी लोगों का हाथ है, उनमें लाबुर्दोने का नाम ऐसा है जिसे वहां के निवासी बहुत श्रद्धा और प्रेम से याद करते हैं। यह तेजस्वी सेनानायक सन् १७३५ में मौरिशस का गवर्नर बना था। इसी ने भारतीय तट पर आक्रमण करके पाण्डीचेरी और मद्रास पर फ्रेंच आधिपत्य स्थापित किया था। सुदूर मद्रास पर आक्रमण करने के लिए वह मौरिशस से ही समुद्री बेड़ा लेकर चला था। वह न केवल कुशल सेनानायक था, प्रत्युत कुशल शासक भी था। इसी ने पोर्टलुई को मौरिशस की राजधानी बनाकर पाण्डीचेरी और मद्रास से गए भारतीय इंजीनियरों की सहायता से वहां मुख्य-मुख्य सरकारी इमारतों का निर्माण कराया। बंदरगाह बनाया, चौड़ी-चौड़ी सड़कें बनाईं, अपने निवास स्थान के साथ ही पेम्लामाउस का विश्वविख्यात वनस्पति उद्यान बनाया। तम्बाकू, नील, मक्का, कपास आदि की खेती प्रारम्भ की, ईख की खेती का खूब विस्तार किया। उसके शासन-काल में ही पहली चीनी मिल का निर्माण हुआ।

इसी के शासन-काल में विख्यात फ्रेंच लेखक सें प्येर मौरिशस आया। तीन साल तक टापू में रहकर, मौरिशस के समग्र मानवीय और भौगोलिक परिवेश को हृदयंगम करके मौरिशस की पृष्ठभूमि पर उसने "पाल और विर्जिनी" नामक उपन्यास के रूप में जो रम्य रचना लिखी उससे उसकी ख्याति को तो चार चांद लगे ही, मौरिशस का नाम भी समस्त संसार के साहित्य-सेवियों और बुद्धिजीवियों तक पहुंच गया। इस उपन्यास ने विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर को भी प्रभावित किया था। स्वयं मौरिशसवासियों के हृदयों को इस उपन्यास ने इतना प्रभावित किया कि यह जैसे उनके इतिहास का अंग बन गया।

परन्तु मौरिशस की सामरिक उपयोगिता अंग्रेजों के लिए और भी अधिक थी। जिस तरह पूर्व में वे सिंगापुर को भारत की सुरक्षा की चाबी समझते थे, उसी तरह पश्चिम में मौरिशस को। नेपोलियन अंग्रेजों का कट्टर शत्रु था और यूरोप को जीतने के पश्चात् पूर्वी देशों की ओर अपना विजय-अभियान प्रारंभ करने के लिए उसे मौरिशस की महत्ता समझ में आती थी। भारत में मैसूर-नरेश टीपू सुलतान अंग्रेजों से खार खाता था। उसने फ्रांस से मैत्री बढ़ाने के लिए अपने तीन प्रतिनिधि मौरिशस भेजे। नेपोलियन के साथ उसका पत्र-व्यवहार भी हुआ था। बड़ौदा के सयाजीराव गायकवाड़ से भी नेपोलियन का पत्रव्यवहार हुआ था। जब अंग्रेजों को इसकी भनक पड़ी तब उनके और कान खड़े हो गए। जिस लार्ड वेल्जली ने टीपू सुल्तान को हराया था, उसी ने एक पत्र में लिखा था, "मौरिशस जब तक फ्रांसीसियों के अधिकार में रहेगा, तब तक भारत में ब्रिटेन कभी सुरक्षित नहीं रह सकता।" लार्ड मिण्टो ने पूर्वीय देशों पर विजय के निमित्त नेपोलियन की एक गुप्त योजना का उल्लेख किया था जिसमें मौरिशस होकर भारत के पश्चिमी तट पर आक्रमण की बात थी। फलतः सन् १८०९ में अंग्रेजों ने मौरिशस के निकटवर्ती द्वीप रोड्रिग पर कब्जा करके मौरिशस की मुख्य भूमि पर हमले की योजना बनाई। बूर्बों द्वीप (जो अब रियूनियन द्वीप है) पर भी अंग्रेजों का कब्जा आसानी से हो गया। पर मुख्य भूमि पर आक्रमण में उन्हें मुँह की खानी पड़ी।

तब अंग्रेजों ने भारत से भारी संख्या में भारतीय सेना की कुमुक मंगवाई। मौरिशस से फ्रांस बहुत दूर था। वहां से इतनी जल्दी सेना आ नहीं सकती थी। इस भारतीय सेना और अंग्रेजी सेना को लेकर अंग्रेजों ने मौरिशस पर आक्रमण किया। फ्रेंच सेना-नायक बहुत कुशल था, पर अंग्रेजों की १६,००० सैनिकों की सेना के सामने उसके २,००० सैनिक कहां तक टिकते। उसे पराजय स्वीकार करनी पड़ी। सन् १८१० में मौरिशस पर यूनियन जैक फहराने लगा।

ब्रिटिश शासन

यह बात याद रखने की है कि जिस भारतीय सेना के बल पर अंग्रेजों ने प्रथम विश्वयुद्ध और द्वितीय विश्वयुद्ध जीता था, जो भारतीय सेना मिस्र, सुमालीलैण्ड, बर्मा मलाया तथा चीन की लड़ाई में अंग्रेजों की ओर से लड़ी थी, उसी भारतीय सेना ने सन् १८१० में मौरिशस की विजय में भी अपनी वीरता का परिचय दिया था। यह और भी आश्चर्य की बात है कि भारत की रक्षा के लिए ही अंग्रेजों ने मौरिशस पर अधिकार किया था और इस विजय में भारतीय सेना ने ही प्रमुख भूमिका अदा की। इधर सन् १८१५ में वाटरलू के युद्ध में नेपोलियन भी पराजित हो गया। अठारहवीं सदी क्या समाप्त हुई, फ्रांस की प्रभुता का सौभाग्य-सूर्य अस्त हो गया। उन्नीसवीं सदी के आगमन के साथ ही अंग्रेजों का सौभाग्य-सूर्य अपने प्रखर प्रताप से चमकने लगा।

पराजित होने पर फ्रांसीसी सेनानायक के साथ अंग्रेजों की जो संधि हुई उसमें यह तय हुआ कि सब फ्रांसीसी सैनिक अपने हथियारों और साज सामान के साथ अंग्रेजों के खर्च पर वापिस फ्रांस चले जाएंगे, जो फ्रांसीसी जमींदार मौरिशस में रहना चाहेंगे, उनमें से किसी की भी जमीन जायदाद छीनी नहीं जाएगी, फ्रांसीसी संस्कृति, फ्रांसीसी भाषा और रोमन कैथोलिक चर्च की रक्षा की जाएगी। अंग्रेजों ने ही इस द्वीप के पुराने डच नाम 'मौरिस' को थोड़ा संशोधित करके 'मौरिशस' नाम दिया और तब से यह द्वीप इसी नाम से संसार में प्रचलित है।

अंग्रेजों के शासनकाल में इस द्वीप में काफी सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन हुए। पहले इस द्वीप से किसी भी वस्तु का निर्यात नहीं होता था। ब्रिटिश काल में मौरिशस चीनी उद्योग के लिए संसार में विख्यात हो गया। जिस समय फ्रेंच शासक इस द्वीप को छोड़ कर गए, उस समय यहां की आबादी लगभग ८० हजार थी, जिसमें लगभग ६८००० अफ्रीकी गुलाम, ७००० गोरे फ्रांसीसी तथा लगभग ५००० भारतीय थे। इन भारतीयों में हिन्दू और मुसलमान दोनों शामिल हैं। ये लोग प्रायः घरेलू नौकर थे या छोटी-मोटी मजदूरी, बढ़ईगीरी और मोची और सुनार आदि का काम करते थे। ● ●

पाद-टिप्पणी :—

महाकवि बाण भट्ट ने अपने अमर ग्रन्थ 'कादम्बरी' में भारतीय पृथ्वी के विस्तार का वर्णन करते हुए उसके अन्तर्गत अठारह द्वीपों की गणना की है। ("अष्टादश द्वीप मालिनी मेदिनी"—कादम्बरी, अनुच्छेद २४६)। 'हर्ष चरित' में इसी प्रकार का काव्यमय उल्लेख तीन बार आया है। सर्व प्रथम महाकवि कालिदास ने ही अठारह द्वीपों का उल्लेख किया था ("अष्टादश द्वीप निखातयूपः" —रघुवंश ६।३८)। गुप्तकाल के भारतीय भूगोल में पूर्वी तथा पश्चिमी प्रदेशों के भिन्न भिन्न द्वीपों की गणना इस प्रकार होने लगी थी—कुमारी द्वीप (भारतवर्ष), सिंहलद्वीप (लंका), नग्न या नारिकेल द्वीप (निकोबार), इन्द्रद्युम्न द्वीप (अन्दमान), कटाह द्वीप (मलय के पश्चिम में केडा), मलय द्वीप (मलयेशिया), स्वर्ण द्वीप (सुमात्रा), यवद्वीप (जावा), वारूषक द्वीप (सुमात्रा के पश्चिम में बरोस), वारुण द्वीप (बोर्नियो), बलि द्वीप (बाली), कमल द्वीप (कम्बोडिया), कर्पूर द्वीप और चर्म द्वीप। कर्पूर द्वीप और चर्म द्वीप का स्थान अभी तक संदिग्ध है। श्री वासुदेवशरण अग्रवाल ने कर्पूर द्वीप को बोर्नियो और चर्म द्वीप को मलय द्वीप के अन्तर्गत कोई स्थान मानने का सुझाव दिया है। पर जब स्वामी स्वतंत्रानन्द सन् १९१४ में मौरिशस गए थे, तब उन्होंने अनेक घरों में कपूर की लकड़ी जलती देखी थी और लोगों ने उन्हें बताया था कि कपूर के वृक्ष यहां इतनी अधिक मात्रा में पाए जाते हैं कि उसकी लकड़ी को लोग ईंधन की तरह प्रयुक्त करते हैं। फिर बोर्नियो तो वारुण द्वीप है ही। क्या कर्पूर द्वीप मौरिशस नहीं हो सकता? सम्भवतः श्वेत द्वीप नाम कपूर की अधिकता के कारण ही पड़ा हो! अगर यह कल्पना ठीक हो तो सरलता से माना जा सकता है कि गुप्त काल के भारतीयों को इस द्वीप का परिचय था।

इसके अतिरिक्त विश्रुत इतिहास-वेत्ता श्री जयचन्द्र विद्यालंकार का कहना है कि ईसा की प्रथम शताब्दी से ही मदगास्कर आदि द्वीपों में भारतीयों का आना-जाना प्रारम्भ हो गया था। तब मौरिशस द्वीप से भी भारतीय परिचित रहे हों तो क्या आश्चर्य है!

—सम्पादक

प्रवासियों की करुण गाथा

फ्रांस की राज्यक्रान्ति के परिणामस्वरूप सारे यूरोप में समानता, स्वतंत्रता और बन्धुता की नई विचारधारा ने जन-मानस को आन्दोलित कर दिया। ब्रिटेन में भी दास-प्रथा के विरुद्ध आवाज उठने लगी। जेम्स मिल के मानवमात्र की समानता के उद्घोष ने और विलियम विल्बर फोर्स द्वारा दासों के प्रति किए जाने वाले दुर्व्यवहार के चित्रण ने ब्रिटेन में दास प्रथा का अन्त और शीघ्र करवा दिया। पर ब्रिटिश उपनिवेशों में दास-प्रथा अभी तक विद्यमान थी। अन्ततः जनमत के दबाव के आगे ब्रिटिश सरकार को भी झुकना पड़ा। अनेक वर्षों के संघर्ष के बाद ब्रिटिश पार्लियामेन्ट में दास-प्रथा के विरुद्ध कानून पास हुआ और उसके एक साल बाद ही मौरिशस में गुलामों को मुक्त कर दिया गया। इन दासों के मालिकों को ब्रिटिश संसद ने हरजाने के रूप में २१ लाख पौण्ड की रकम दी। फ्रेंच जमींदारों का इन गुलामों के प्रति जैसा रवैया था, उसके कारण सभी गुलाम मन-ही-मन उनसे बहुत क्षुब्ध थे। गुलामी प्रथा से कानूनन मुक्ति मिलते ही उन्होंने अपने मालिकों के खेतों में काम करने से इन्कार कर दिया।

तब एक नई समस्या पैदा हुई। मौरिशस का चीनी उद्योग और गन्ने की खेती इन्हीं गुलामों पर निर्भर थी। अब क्या किया जाएं। तब गोरे जमींदारों का ध्यान भारत की ओर गया। इन जमींदारों ने अंग्रेज सरकार के सहयोग से भारत से शर्तबन्द कुलीप्रथा के अधीन मजदूरों को भर्ती करके मौरिशस लाना शुरू कर दिया। इस प्रथा के अधीन सबसे पहले सन् १८३४ में जो भारतीय मजदूर मोरिशस पहुंचे, उनकी संख्या ७४ थी।

गोरे जमींदारों ने कुछ भारतीयों को ही अपना कारिन्दा बनाया। ये कारिन्दे अरकाटिये कहलाते। मद्रास राज्य में अरकाट नामक एक छोटी-सी मुस्लिम रियासत थी। संभवतः ये कारिन्दे उसी रियासत के रहे होंगे। कुछ अर्से तक मद्रास में फ्रांसीसियों का आधिपत्य भी रहा है। पाण्डीचेरी में तो भारत के स्वतंत्र होने के बाद तक फ्रांस का शासन था। ये अरकाटिये मद्रास, आन्ध्रप्रदेश, उत्तर-प्रदेश और बिहार के गांवों में जाकर भोले ग्रामीणों को सोने, चांदी का प्रलोभन देते, उनके सामने परदेश में जाकर अनायास समृद्ध होने का चित्र खींचते और गरीब देहाती लोग फुसलावे में आ जाते। इस प्रकार भर्ती किए गए ये मजदूर गिरमिटिये कहलाते। इन मजदूरों के साथ जो एग्रीमेंट होता उससे बँधे होने के कारण ही ये एग्रीमेन्टिये या गिरमिटिये कहलाए।

इस एग्रीमेन्ट में उन्हें पाँच साल के बाद वापिस भारत भेजने की शर्त होती, साथ में उचित मजदूरी, भोजन और कपड़ा तथा निवास-स्थान देने की भी शर्त रहती। गरीब देहाती सोचता—केवल ५ साल की ही तो बात है—किसी-न-किसी तरह दुखम-सुखम ५ साल काट लेंगे और फिर वापिस अपने वतन आ ही जाना है। ५ साल की औकात ही क्या है—'दिवस जात नहिं लागहिं वारा।' यों भर्ती होने वाले मजदूरों की संख्या आए साल बढ़ती ही जाती। मौरिशस जाने वाले इन मजदूरों की संख्या किस प्रकार बढ़ती जाती थी, इसका अंदाज इस बात से लगाया जा सकता है कि सन् १९२० तक चार लाख भारतीय मजदूर वहाँ पहुंच चुके थे।

शोषण और उत्पीड़न

परन्तु कागज पर लिखी उन शर्तों का कभी पालन नहीं हुआ। जहाज में उन्हें पशुओं की तरह ठूँस दिया जाता। रास्ते में बीमार होने पर उनकी चिकित्सा का कोई प्रश्न था ही नहीं। टापू में पहुंचने पर उन्हें सुबह से शाम तक कड़ा परिश्रम करना पड़ता। ऊपर से गोरे मालिकों की फटकार और तरह-तरह का दुर्व्यवहार। गुलामी की प्रथा समाप्त हो जाने पर भी गोरे मालिक अपनी आदत के अनुसार उनसे गुलामों जैसा ही व्यवहार करते। तरह-तरह से उन्हें ईसाई बनने के लिए और हब्शी औरतों से शादी करने के लिए प्रेरित किया जाता। उस घृणित सामाजिक उत्पीड़न की कल्पना करिए जब भारतीय पुरुषों के मुकाबले भारतीय स्त्रियों की संख्या जानबूझ कर बहुत-थोड़ी रखी जाती। इस विषम परिस्थिति का अन्दाज भी इसी बात से लगाया जा सकता है कि जब वहाँ भारतीय पुरुषों की संख्या २५००० थी तब वहाँ स्त्रियों की संख्या केवल ४०० थी।

इन प्रवासी भारतीयों की करुण गाथा का अनुमान उनकी काम करने की परिस्थिति से भी लगाया जा सकता है। उनके रहने का स्थान अस्वास्थ्यकर, भोजन और वस्त्र अपर्याप्त और महीने में ५ रु० मासिक वेतन। साल में एक धोती, एक चादर, एक दरी और दो तश्तरियाँ। इस कष्टदायक परिस्थिति में मजदूर जल्दी ही ऊब जाते और पिंजरे में बन्द पक्षी के समान उन्हें अपनी मातृभूमि की याद सताने लगती। पर मातृभूमि से ढाई-तीन हजार मील दूर स्थल और जल की सीमा से अवरुद्ध अब वे जाएं कहाँ? बहुत थोड़े लोग ही वापिस भारत आ पाए।

अपनी गरीबी से तंग आकर, धन कमाने के प्रलोभन से, जो लोग भर्ती होकर जाते, उनके मन में यह अन्ध-विश्वास भी रहता कि समुद्रयात्रा धर्म-विरुद्ध है। इसलिए जहाज पर सवार होते ही वे प्रायः अपना जनेऊ समुद्र के अर्पण कर देते ताकि जनेऊ तो भ्रष्ट होने से बचे, हमारी नैया तो भगवान पता नहीं किस किनारे लगावेगा। मन में अरकाटियों द्वारा जमाया यह खयाली पुलाव कि मौरिशस में चट्टानों के नीचे सोना और रेत के कणों में चाँदी बिखरी पड़ी है, पर मौरिशस में पहुंचते ही निर्जन जंगलों की भांय-भांय, खेतों में कड़ा परिश्रम, सड़कें बनाने के लिए कठोर चट्टानों से जूझना और ऊपर से गोरे मालिकों का दुःसह व्यवहार ही उन्हें मिलता। ये सब उनको मन से तोड़ देने के लिए काफी था। पर उनकी आस्तिक बुद्धि ने और भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता ने उन्हें काफी हद तक धैर्य प्रदान किया।

इन प्रवासी भारतीयों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए कैदियों की तरह अपने पास परमिट रखना पड़ता था। कोई बच्चा यदि खेत पर अपने माता-पिता के लिए भोजन पहुंचाने जाता तो उसे परमिट साथ रखना पड़ता। किसी को अपने किसी बीमार रिश्तेदार से मिलने जाना हो, तब भी परमिट चाहिए। परमिट पर मजदूर का फोटो भी लगा होता। यदि यह परमिट गुम हो जाता तो नया परमिट बनवाने के लिए २२ शिलिंग लगते, जो उस मजदूर के लिए दो मास के वेतन के बराबर होते। परमिट बनवाने के लिए कभी-कभी मजदूरों को १००-१०० मील तक की यात्रा करनी पड़ जाती। किसी के पास परमिट न होने पर उसे बिना वारण्ट के ही गिरफ्तार कर लिया जाता। इस प्रकार सन् १८६० में तीस हजार मजदूरों को गिरफ्तार किया गया था और तीन साल में लगभग साठ हजार मजदूरों को नजरबंद किया गया था।

यह विवरण कपोलकल्पित नहीं है, बल्कि उस रायल कमीशन की रिपोर्ट के आधार पर है जो मजदूरों की स्थिति की जाँच के लिए ब्रिटिश पार्लियामेन्ट द्वारा नियुक्त किया गया था। कमीशन की उसी रिपोर्ट में एक ऐसी घटना का वर्णन किया गया है जिसे पढ़कर हृदय द्रवीभूत हुए बिना नहीं रहता।

एक उदाहरण

कूपेन नामक एक व्यक्ति ने पुलिस के सामने बयान दिया कि उसका एक साथी, चिन्ना वीरेन नामक मजदूर, बीमार होने पर इलाज के लिए तरसता रहा और मजदूरों के लिए किसी डाक्टर की व्यवस्था न होने के कारण वह मर गया। सरकारी कानून के अनुसार प्रत्येक मिल मालिक

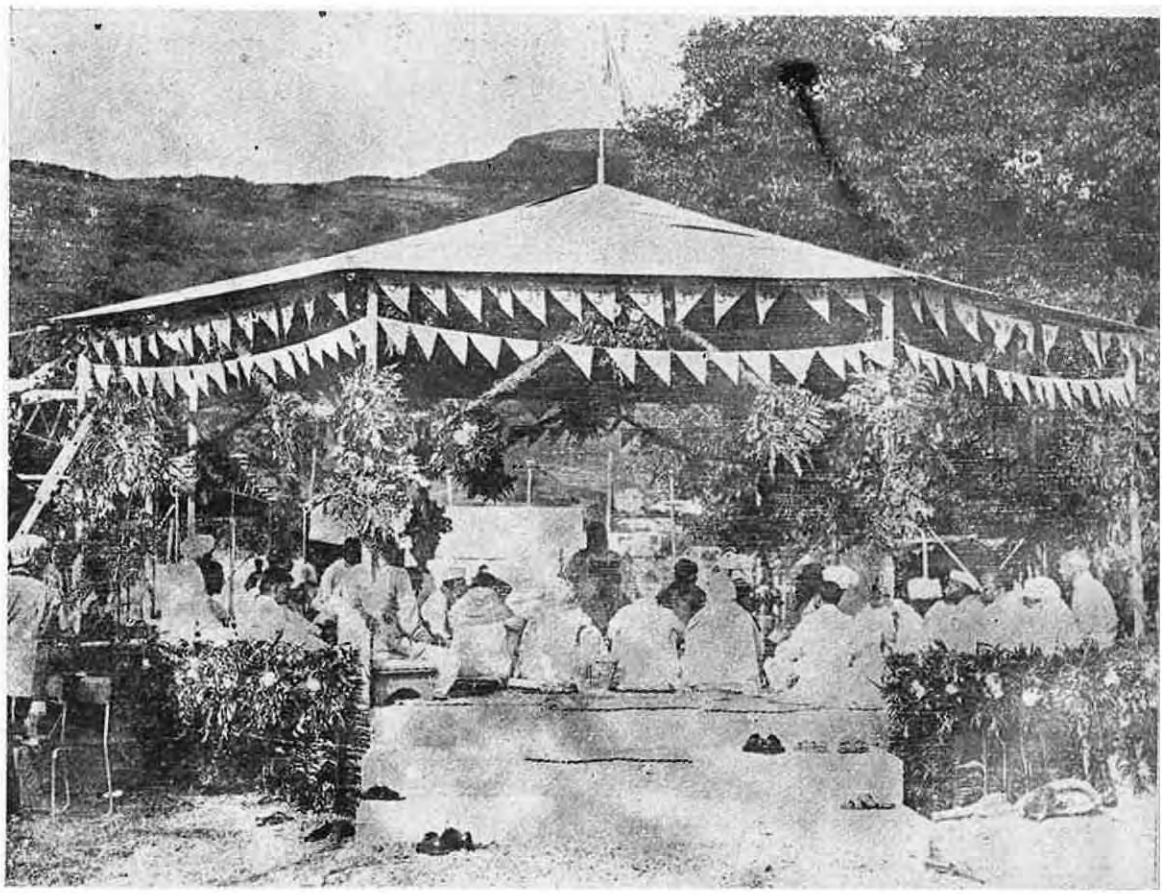

महासम्मेलन के पण्डाल में भव्य यज्ञशाला जहां आचार्य कृष्ण की अध्यक्षता में वेद-पारायण यज्ञ हुआ

महासम्मेलन के पण्डाल का भव्य द्वार

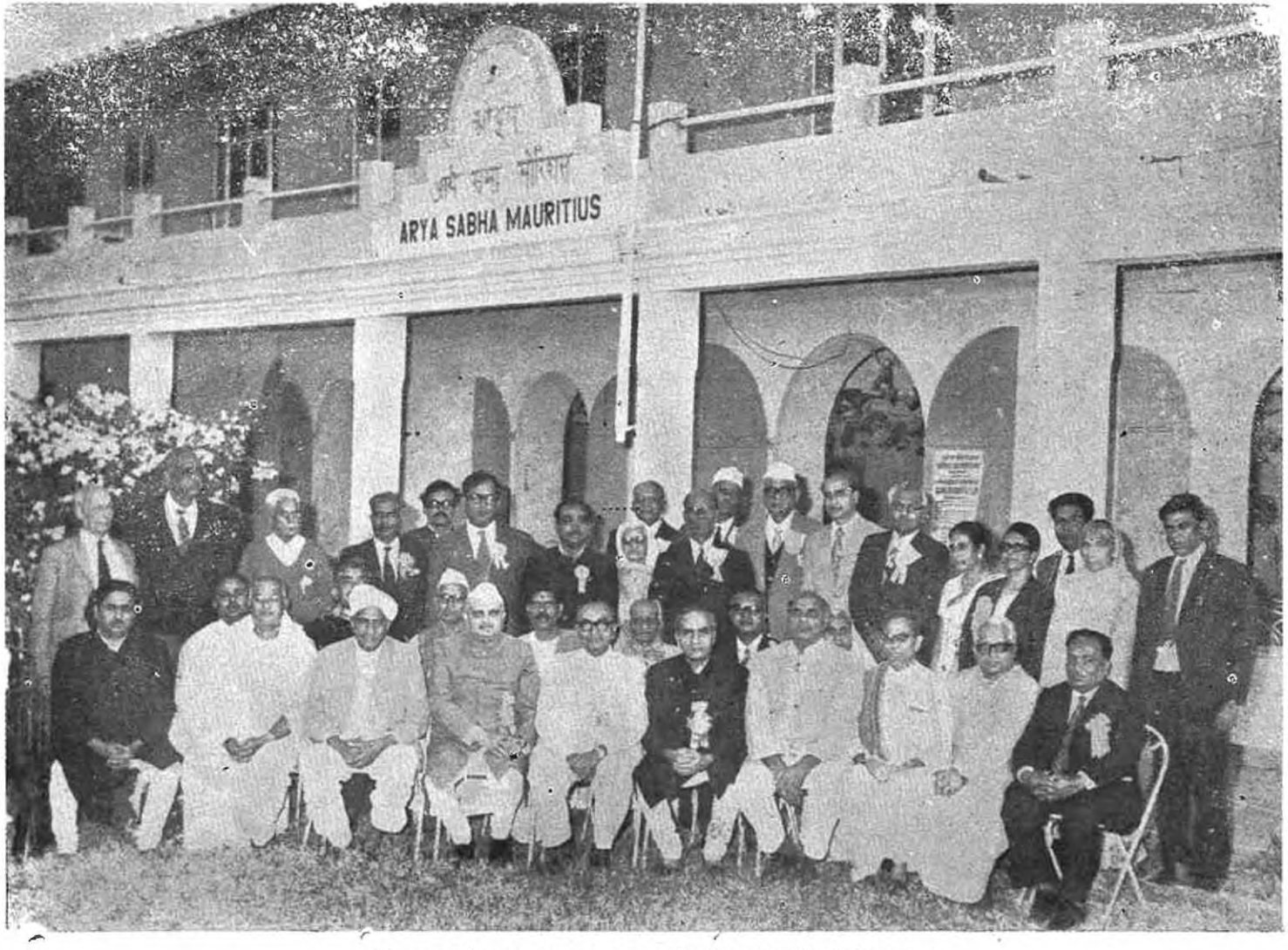

मौरिशस आर्य सभा का भव्य भवन और विषय निर्धारिणी के सदस्य

या फार्म के मालिक को मजदूरों के निवास स्थान पर डाक्टरी चिकित्सा की व्यवस्था करना अनिवार्य है पर इन मजदूरों के निवास-स्थान पर साल भर से कोई मजदूर नहीं था। जब इन मजदूरों के पूले नामक फ्रांसीसी मालिक को पता लगा कि कूपेन मजदूर ने पुलिस में शिकायत की है, तब उसने अपने शिकारी कुत्ते लेकर उसका पीछा किया। पूले उसके घर पहुंचा। कूपेन की पत्नी येलम्मा ने अपने पति से कहा कि मालिक तुम्हें तलाश करने आए हैं। इस पर पहले से ही गुस्से में भरा पूले इतना आग-बबूला हो उठा कि उसने येलम्मा को ही पीटना शुरू कर दिया। येलम्मा गर्भवती थी, पर उसने उसे इस बुरी तरह मारा कि अगले दिन वह एक मृत शिशु को जन्म देकर परलोक सिधार गई। अदालत इस मामले को एक साल तक टालती रही। अन्त में पूले को तीन महीने की सजा हुई। पर गवर्नर ने अपने विशेषाधिकार से यह सजा भी तीन मास से घटाकर केवल तीन सप्ताह की रहने दी। जब पूले तीन सप्ताह बाद जेल से लौटा तो उसने कूपेन तथा उसके ६ अन्य साथियों पर चोरी का झूठा इल्जाम लगाकर उन्हें एक-एक साल के लिए जेल भिजवा दिया। कूपेन इस अत्याचार से इतना मर्माहत हो गया कि जेल से छूटने के कुछ अर्से बाद ही उसने दम तोड़ दिया।

रायल कमीशन ने जेल में बंद भारतीयों के भी बयान लिए और उनकी करुणाजनक दशा की ओर ब्रिटिश पार्लियामेन्ट का ध्यान खींचा।

जब साम्राज्य-विस्तार की अदम्य लालसा में ब्रिटेन संसार भर में अपने उपनिवेशों का विस्तार कर रहा था, तब अधिकांश ब्रिटिश उपनिवेशों की कमोवेश यही हालत थी। ब्रिटेन जैसे भारत में भारतीयों के साथ भेदभाद की और अमानवीय पक्षपात की नीति बरत रहा था, वही नीति उसने अपने उपनिवेशों में भी अपनाई थी। अंग्रेजों ने जहां-जहां उपनिवेश बसाये, प्रवासी भारतीयों के परिश्रम के बल पर बसाये, पर उन्हें बराबरी का दर्जा देने में उनकी गोरी चमड़ी सदा बाधक बनी रही। उन्नीसवीं सदी के अन्तिम चरण में महात्मा गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह के अमोघ अस्त्र द्वारा वहाँ के प्रवासियों की दशा की ओर संसार का ध्यान खींचा।

गांधी जी का आगमन

सन् १९०१ में गांधी जी दक्षिण अफ्रीका से भारत आते हुए अकस्मात् मौरिशस पहुंचे। जिस 'नौशेरा' नामक जहाज से वे आ रहे थे, उसे ईंधन पानी के आलावा मरम्मत के लिए भी मौरिशस के तट पर रुकना पड़ा। गांधी जी उस समय २१ दिन ठहरे और वहां की स्थिति का उन्होंने अच्छी तरह अध्ययन किया। उस ममय मौरिशस के गवर्नर थे—श्री चार्ल्स ब्रूस। वे संस्कृत के अच्छे विद्वान थे और उन्होंने अथर्ववेद के कुछ मंत्रों का अंग्रेजी में अनुवाद भी किया था। गांधी जी एक दिन उसके मेहमान भी बने थे। तब ब्रूस भी क्या जानता था कि वह इस आतिथ्य के लिए जन्म भर अपने को गौरवान्वित अनुभव करता रहेगा।

महात्मा गांधी ने मौरिशस के प्रवासी भारतीयों को विद्या का महत्व समझाया और उन्हें अपने बच्चों को शिक्षित करने की सलाह दी। साथ ही उन्होंने राजनीति में दिलचस्पी लेने और उन्हें भारत में घटित होने वाले घटनाचक्र से अवगत रहने को भी कहा।

श्री मणिलाल की जन-सेवा

भारत आकर भी महात्मा गांधी मौरिशस को और वहां के निवासियों को भूले नहीं। उन्होंने भारत से बैरिस्टर मणिलाल को प्रवासी भारतीयों में जागृति लाने और उनकी सहायता के लिए भेजा। पहले अंग्रेज और फ्रांसीसी समझते थे कि भारतीय केवल कुली और मजदूर ही हो सकते हैं, इससे अधिक योग्यता इनके बस की नहीं। पर बैरिस्टर मणिलाल जैसे सुयोग्य, कानून की उच्चतम ब्रिटिश उपाधि धारण करने वाले, परोपकारी और समाज-सेवी के वहां पहुँचने से न केवल भारतीयों में आत्म-विश्वास की भावना पैदा हुई, प्रत्युत शासक दल में भी भारतीयों की योग्यता के प्रति आस्था बढ़ी।

श्री मणिलाल सन् १९०७ में वहां पहुंचे थे। वे पांच साल तक वहां रहे। उन्होंने वहां के मजदूरों की स्थिति का विस्तृत अध्ययन किया और दूसरा रायल कमीशन

नियुक्त करने की मांग की। इसके लिए उन्हें काफी संघर्ष करना पड़ा। अन्त में दूसरा रायल कमीशन नियुक्त हुआ। श्री मणिलाल ने इस कमीशन के सामने जो मांगें पेश कीं, वे इस प्रकार थीं : मजदूरों के साथ होने वाले अत्याचारों की जांच के लिए मजिस्ट्रेट नियुक्त किए जाएं। मिलों पर गन्ने की तुलाई में होने वाली धांधली रोकी जाए, किसानों की सहायता के लिए सहकारी संस्थाएं बनाई जाएं, विधान परिषद् में भारतीयों को प्रतिनिधित्व दिया जाए और सरकारी स्कूलों में प्रमुख भारतीय भाषाओं की पढ़ाई की व्यवस्था की जाए। ये मांगें इतनी युक्ति-युक्त थीं कि कमीशन ने सभी मांगों को मानने की सिफारिश की।

श्री मणिलाल ने प्रवासी भारतीयों की जो सेवा की उस के कारण आज भी मौरिशस-वासी उन्हें श्रद्धा सहित स्मरण करते हैं। वे निर्धन प्रवासियों की निःशुल्क पैरवी करते थे और गोरों के अत्याचारों से उन्हें बचाने का प्रयत्न करते थे। जिस आर्यसमाज ने इस द्वीप का काया-पलट कर दिया उसे संस्था के रूप में विधिवत्-स्थापित करने का का श्रेय भी श्री मणिलाल को ही है। इतना ही क्यों, उन्होंने प्रथम भारतीय प्रेस स्थापित किया और स्वयं गुजराती होते हुए भी 'हिन्दुस्तानी' नामक एक साप्ताहिक पत्र निकाला जो हिन्दी और अंग्रेजी में निकलता था। इस पत्र को मौरिशस का प्रथम हिन्दी-पत्र कहा जा सकता है। पर धीरे-धीरे अंग्रेजी और फ्रांसीसी गोरों द्वारा उन का इतना अधिक विरोध किया जाने लगा कि उनका वहां रहना मुश्किल हो गया। तब सन् १९१२ में वे वहाँ से लौट आए।

इस प्रकार लगभग एक शताब्दी तक शर्तबन्दी की प्रथा के अन्तर्गत भारत से मजदूर जाते रहे। बीच-बीच में कई बार सरकार ने मजदूरों को लाना बन्द कर दिया परन्तु हर बार गोरों के दबाव में आकर सरकार को झुकना पड़ा। अन्त में सन् १९२४ में तत्कालीन भारत सरकार ने सर महाराजसिंह को मौरिशस के मजदूरों की हालत का अध्ययन करने के लिए भेजा। मजदूरों के प्रति किए जाने वाले व्यवहार से वे सन्तुष्ट नहीं हुए और उन्होंने भारत सरकार को यह शर्तबन्दी प्रथा समाप्त करने की सलाह दी। उनकी रिपोर्ट पर ही सरकार ने वह प्रथा समाप्त की और तब प्रवासियों की करुण-गाथा का यह अध्याय समाप्त हुआ। ● ●

☐ यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मत में पाये जाते हैं, (परन्तु यदि) वे पक्षपात छोड़ कर सर्वतन्त्र सिद्धान्त को स्वीकार करें जो जो बातें सब के अनुकूल हैं और सब में सत्य हैं उनको ग्रहण करें और जो बातें एक दूसरे से विरुद्ध पाई जाती हैं उनको त्याग कर, परस्पर प्रीति से वर्तें वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित हो जावेगा। विद्वानों के विरोध ही से अविद्वानों में विरोध बढ़ कर विविध दुःखों की वृद्धि और सुखों की हानि होती है। यह हानि स्वार्थी मनुष्यों को प्यारी है, परन्तु इसने सर्व साधारण को दुःख-सागर में डुबो दिया।

—ऋषि दयानन्द वचनामृत

राजनैतिक चेतना से स्वाधीनता की ओर

बीसवीं सदी के प्रथम दशक तक मौरिशस के प्रवासी भारतीयों में कोई राजनैतिक चेतना नहीं थी। इसके कुछ कारण आन्तरिक थे और कुछ बाह्य। बाह्य कारणों में प्रमुख थे साम्राज्यवादियों द्वारा उपनिवेशीकरण और गोरे जमींदारों द्वारा दमन की प्रवृत्ति। आन्तरिक कारण भी कम महत्पूर्ण नहीं थे। वास्तव में तो किसी जाति की पराधीनता का कारण यदि आत्म-अवमानना होता है, तो स्वाधीनता का कारण होता है आत्म-विकास। पराधीन भारत से जो लोग प्रवासी बन कर गए थे, वे अपने साथ इसी आत्म-अवमानना की भावना साथ लेकर गए थे। ऊपर से अविद्या के कारण वे अन्ध विश्वासों के शिकार थे। गरीबी की मार पहले से थी ही। सामाजिक असमानता और छूआ छूत की भावना ने कभी सामाजिक रूप से उन्हें संगठित होने ही नहीं दिया। धार्मिक संकीर्णता उन को ऊपर उठने ही नहीं देती थी। यद्यपि मौरिशस में आने वाले प्रवासी राम, कृष्ण और हनुमान को भूले नहीं थे, न ही भूले थे वे रामायण और महाभारत को। प्रत्युत संकट की घड़ियों में उन्हें 'निर्बल के बलराम' ही दिखाई देते थे। निर्बल आत्माओं को सबल बनाने वाले राम के नाम को जीवित जागृत रखने में तुलसी रामायण का महत्व भी कम नहीं है। पर प्रसुप्त प्रवासियों को झकझोर कर जगाने में और उन्हें नवयुग की आवश्यकताओं के अनुसार सन्नद्ध करने में जो भूमिका आर्यसमाज ने निभाई है वह किसी और के द्वारा संभव नहीं हुई।

ऊपर हमने शिथिलता के जिन आन्तरिक कारणों का उल्लेख किया है उन पर तो आर्य समाज ने सीधा प्रहार किया ही, बाह्य कारणों पर भी जैसा प्रहार आर्यसमाज ने किया, वैसा किसी अन्य संस्था द्वारा नहीं हुआ। जो बात भारतीय परिवेश के लिए सही है, वही बात मौरिशस के लिए भी सही है। स्वराज्य के यथार्थ मंत्रद्रष्टा ऋषि दयानन्द ही थे। उन्होंने ही अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा था : "उत्तम से उत्तम विदेशी राज्य से भी स्वदेशी राज्य अच्छा होता है।" इससे बढ़कर प्रखर राष्ट्रवाद और कहां मिलेगा ? इस विचार ने कितने ही राजनैतिक चिन्तकों की विचार धारा में आमूलचूल परिवर्तन कर दिया।

मौरिशस में राजनैतिक चेतना की कहानी भारत की राजनैतिक चेतना के इतिहास के साथ अविच्छिन रूप से जुड़ी है। कुछ इस बात के संकेत भी हैं कि भारत के राजनैतिक धरातल पर सामूहिक रूप से चलने वाले अहिंसात्मक सत्याग्रह और असहयोग आन्दोलन की तरह भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन की छाया भी मौरिशस पर पड़ी, पर विवशता के क्षणों में वह उभर कर सामने नहीं आ पाई।

पुर्तगालियों और डचों के काल में तो कोई सुव्यवस्थित शासन-पद्धति वहां थी ही नहीं, पर फ्रांस के आधिपत्य में जब शासन व्यवस्थित रूप से चलने लगा, तब भी प्रशासन में जनता का प्रतिनिधित्व नहीं था। उस समय समस्त प्रशासनिक अधिकार केवल इने-गिने गोरों के हाथ में थे। फ्रांस की राज्य क्रान्ति की फलश्रुति के रूप में जो तीन जयघोष दिग्दिगंत में गुंजित हुए थे—समानता, स्वतंत्रता और बन्धुता के, वे केवल थोथे नारे भर बन कर रह गए थे, क्योंकि मौरिशस के दासों के लिए उस शासन में कहीं कोई स्थान नहीं था।

सांविधानिक स्थिति

१८१० में जब अंग्रेजों ने इस टापू पर अपना आधिपत्य स्थापित किया, तब उन्होंने भी फ्रांसीसी शासन-व्यवस्था को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया और उस में कोई सांविधानिक परिवर्तन नहीं किया। उस समय एक सैनिक कमाण्डर और तीन सरकारी अधिकारी शासन का कार्यभार संभालते थे। बाद में सन् १८२७ में एक कोलोनियल कमेटी बनी जिसमें कोई सरकारी अधिकारी नहीं होता था। यह समिति द्वीप के सम्पन्न गोरों और सरकार के बीच संबंध बनाकर रखने के सिवाय और कुछ नहीं करती थी। आगे चल कर एक व्यापक परिषद् बनी जो द्वीप के प्रशासनिक मामलों में गवर्नर को सलाह दिया करती थी। सन् १८८६ के बाद इस परिषद् का पुनर्गठन किया गया और जनता को प्रतिनिधित्व देने का सिलसिला प्रारम्भ हुआ। इस नई समिति में भी आठ सरकारी अधिकारी, एक निर्वाचित सदस्य तथा दस मनोनीत सदस्य रखे गए किन्तु मताधिकार तब भी गोरों को ही प्राप्त था जिनकी, संख्या एक प्रतिशत से अधिक नहीं थी। यह व्यवस्था सन् १९४८ तक चलती रही।

परन्तु इस बीच मौरिशस के नागरिकों में सामाजिक और राजनैतिक चेतना तीव्रता से बढ़ती जा रही थी। आर्य समाज के आन्दोलन और मजदूरों के संगठन के कारण लोग शासन-व्यवस्था में हिस्सा लेने के अपने अधिकार के महत्व को समझते जा रहे थे। जब पहला रायल कमीशन नियुक्त हुआ था तब उसने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि भारतीयों के प्रतिनिधित्व के बिना शासन चलाने वाली कोई भी परिषद् पूर्ण नहीं हो सकती, क्योंकि टापू की जनसंख्या में दो तिहाई संख्या भारतीयों की है। कमीशन ने यह भी लिखा था कि भारतीयों के परिश्रम से ही इस टापू का रूप निखरा है, इसलिए भारतीयों का प्रतिनिधित्व वांछनीय है। परन्तु कमीशन की इन सिफारिशों पर किसी ने ध्यान नहीं दिया।

डा० मणिलाल के आन्दोलन और आर्यसमाज के विद्या-प्रचार के कार्य के कारण बीसवीं सदी के प्रथम चरण में मौरिशस की राजनीति में उबाल आया। टापू के क्रियोलों के हितों की रक्षा के लिए एक राजनीतिक आन्दोलन चलाया गया जिसके नेता यद्यपि गैर-भारतीय थे, किन्तु वे गोरों के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाते थे, इसलिए भारतीयों ने उसे पूर्ण सहयोग दिया। १९११ और १९२१ के चुनावों में दो-दो भारतीयों ने चुनाव लड़ा, पर वे सफल न हो सके। १९२६ में भारतीयों की स्थिति सुधर गई। इस बार के चुनाव में चार भारतीय खड़े हुए थे, जिनमें से दो सफल हुए और दो असफल। सफल उम्मीदवारों का आर्य परोपकारिणी सभा की ओर से स्वागत किया गया, क्योंकि उनकी सफलता में आर्यसमाज का बड़ा हाथ था।

सन् १९३५ का महत्व

मौरिशस के इतिहास में सन् १९३५ का विशेष महत्व है। इसी साल मौरिशस के गवर्नर ने स्वीकार किया था कि यह टापू अपने विकास के लिए भारतीयों का चिर-ऋणी रहेगा। इसी साल मौरिशस में भारतीयों के आगमन की शताब्दी बड़ी धूमधाम से मनाई गई।

इस घटना के स्मारक के रूप में एक शिलास्तम्भ की स्थापना की गई जो आज भी पोर्टलुई के आर्यसभा भवन में देखा जा सकता है। इसी साल डा० शिवसागर रामगुलाम इंग्लैंड से डाक्टरी की शिक्षा पूरी करके और इंग्लैण्ड के तत्कालीन वातावरण में व्याप्त राजनैतिक चेतना से उद्दीप्त तरुण मन लेकर स्वदेश लौटे थे। इसी वर्ष डा० मौरिशस कूरे और पण्डित सहदेव आदि नेताओं ने मिलकर लेबर पार्टी की स्थापना की और मजदूरों के हितों के लिए आन्दोलन प्रारम्भ किया। इसी वर्ष हिन्दी प्रचारिणी सभा की स्थापना हुई।

धीरे-धीरे लेबर पार्टी का आन्दोलन उग्र से उग्रतर होता गया और टापू के क्रियोल तथा भारतीय सभी मजदूर इस पार्टी के झण्डे के नीचे एकत्र होने लगे। बढ़ते-बढ़ते आन्दोलन गोरों का सिरदर्द बन गया। १९३७ में मजदूरों ने हड़ताल की। मिल मालिकों ने हड़ताल को दबाने के लिए मजदूरों पर गोली चलवाई, जिससे मजदूर और उत्तेजित हो गए। सरकार ने लेबर पार्टी को अवैध घोषित कर दिया और इसके सदस्यों को देश-निर्वासन का दण्ड दिया। इससे इस आन्दोलन में थोड़ी देर के लिए मन्दता तो आई, पर

मौरिशस की भूमि में पार्टी की जड़ मजबूत हो गई। इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप सन् १९४० में गवर्नर ने डा० शिवसागर रामगुलाम को मजदूरों के प्रतिनिधि के रूप में परिषद् का सदस्य मनोनीत कर लिया।

सन् १९३९ में पण्डित वासुदेव विष्णुदयाल लाहौर के डी० ए० वी० कालेज से बी० ए० और कलकत्ता विश्वविद्यालय से एम० ए० करके स्वदेश लौटे। पहले ये और इनके बड़े भाई सुग्रीव विष्णुदयाल आर्यकुमार सभा के कर्मठ पदाधिकारी रह चुके थे। स्वदेश लौटने के पश्चात् इन्होंने महात्मा गांधी के ढंग का अहिंसात्मक सत्याग्रह आन्दोलन चलाया जिससे जनता में और जागृति हुई।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान

उधर सन् ३९ में द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो चुका था। हिटलर के प्रताप से दिशाएं दोलायमान थीं। अंग्रेजों की नैया डगमगा रही थी। ब्रिटेन की बागडोर चर्चिल के हाथ में थी, जिसे भारत के स्वातंत्र्य-आन्दोलन से चिढ़ थी। उसे हिन्दुस्तान के नाम से इतनी घृणा थी, कि कहते हैं, यदि उसे कभी हिन्दुस्तान शब्द का मुख से उच्चारण करना पड़ जाता तो वह पोटाशियम परमेंगनेट से कुल्ला करके मुँह साफ किया करता था। ज्यों-ज्यों अंग्रेज लड़ाई में उलझते जाते थे, त्यों-त्यों भारत में स्वातंत्र्य आन्दोलन जोर पकड़ता जाता था। अन्ततः सन् १९४२ में महात्मा गांधी ने अंग्रेजों को 'भारत छोड़ो' और भारतीयों को 'करो या मरो' का आदेश दिया। भारत क्रान्ति के अग्नि-पथ पर तेजी से बढ़ चला। राजनैतिक मंच पर नेता जी सुभाषचन्द्र बोस का उल्का की तरह आगमन, फिर अंग्रेजों की आंखों में धूल झोंककर उनका जर्मनी-प्रयाण, फिर आजाद हिन्द फौज की स्थापना और अंग्रेजों से दो-दो हाथ करने की पूरी तैयारी—इस प्रकार एक के बाद एक घटनाचक्र इस तेजी से घटित हो रहा था कि समस्त भारतीय प्रवासी दम साधे इसे देख रहे थे। जब भारत के अन्य राजनैतिक आन्दोलनों की छाया मौरिशस पर पड़ती थी, तब द्रुतगति से परिवर्तनशील और अनन्त सम्भावनाओं से गर्भित इस घटनाचक्र की छाया मौरिशस की जनता पर कैसे न पड़ती? पर वह प्रतिक्रिया हिंसात्मक नहीं थी, वरन् सात्विक और परम्परागत ढंग से जाति को संगठित करने वाली थी।

पण्डित वासुदेव विष्णुदयाल ने सन् १९४३ में एक विशाल यज्ञ का आयोजन किया। यह यज्ञ इतने बड़े पैमाने पर हुआ, कि कहते हैं, इतने बड़े पैमाने पर इससे पहले कोई मेला भी मौरिशस में नहीं भरा था। इस यज्ञ में साठ हजार व्यक्ति सम्मिलित हुए। पौराणिक कथानक के अनुसार जैसे किसी ऋषि के विराट् यज्ञ से इन्द्र का आसन डगमगा जाता है, वैसे ही मौरिशस के गवर्नर का आसन इतने बड़े जन-समुदाय को एकत्र देखकर डगमगा गया। गोरे अधिकारियों ने समझ लिया कि अब भारतीय संगठित हो गए हैं, भविष्य में इनकी आवाज की उपेक्षा नहीं की जा सकेगी। इस विशाल धार्मिक आयोजन का राजनीति पर भी प्रभाव पड़ा। इसी साल भारतीय मजदूरों ने गोरों की कोठियों पर प्रदर्शन किये। गोरों ने प्रदर्शनकारियों पर गोली चलाई जिसमें अंजलि नामक एक भारतीय महिला की मृत्यु हो गई। मजदूर और अधिक उत्तेजित हो गए।

संविधान में संशोधन करने के लिए गवर्नर ने एक सलाहकार समिति बनाई। सन् १९४९ में, डा० शिवसागर रामगुलाम के प्रयत्न से उस समिति ने सर्वसम्मति से यह सिफारिश की कि मौरिशस के प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति को, भले ही उसे केवल भारतीय भाषाओं का ही ज्ञान हो, मतदान का अधिकार मिलना चाहिए। इस सिफारिश के अमल में आते ही मौरिशस के राजनैतिक वातावरण में चमत्कार पैदा हो गया। वहां अब तक केवल फ्रेंचभाषी या अंग्रेजीभाषी गोरों को ही मताधिकार प्राप्त था। पर अब देखते-देखते समस्त शिक्षित भारतीयों को भी मताधिकार प्राप्त हो गया। तब महात्मा गांधी द्वारा भारतीयों को शिक्षा-प्राप्ति की सलाह और आर्यसमाज द्वारा स्थान-स्थान पर रात्रि पाठशालाएं खोलकर लोगों को निःशुल्क हिन्दी सिखाने और शिक्षा-प्रसार पर अनवरत जोर देने का महत्व उजागर हुआ। तुरन्त एक रात में ही मतदाताओं की संख्या सात हजार से बढ़ कर सत्तर हजार तक पहुंच गई। इस नए संविधान के अन्तर्गत सन् १९४९ में आम चुनाव हुआ। इसी चुनाव में

देश की बहुसंयख्क जनता को पहली बार उचित प्रतिनिधित्व मिला। इस चुनाव में ११ भारतीय, ८ क्रियोल और केवल एक गोरा निर्वाचित हुआ, जबकि इससे पहले सब स्थान निर्विवाद रूप से गोरों को ही मिलते थे। इस चुनाव ने मौरिशस के सांविधानिक इतिहास में एक नए युग का सूत्रपात किया।

इस चुनाव के बाद से प्रत्येक चुनाव में निर्वाचित भारतीयों की संख्या बढ़ने लगी। लेबर पार्टी मौरिशस का सबसे शक्तिशाली राजनैतिक दल बन गया। उसे ही बहुमत प्राप्त हुआ।

हिन्दू धर्म को मान्यता

यहीं एक और बात का उल्लेख कर देना आवश्यक है। भारतीय संस्कृति के सहिष्णुता-प्रधान होने के कारण सर्व-धर्म-सम-भाव और सम्प्रदाय-निरपेक्षता की परम्परा भारत को विरासत में मिली है। यह आदर्श भारत में जितनी आसानी से स्वीकार कर लिया गया है, अन्य देशों के लिए वह उतना सहजस्वीकरणीय नहीं है। फिर जिस ब्रिटेन के राजा को 'डिफेण्डर आफ दि फेथ' (धर्म-रक्षक) के विशेषण से सम्बोधित किया जाता हो, उस ब्रिटेन के उपनिवेशों में वह आदर्श उतना सहजस्वीकरणीय कैसे होता। फ्रांसीसी शासन के समय यदि रोमन कैथोलिक चर्च को सरकार की ओर से सब तरह से प्राथमिकता दी जाती थी, तो ब्रिटेन के शासन में प्रोटेस्टेन्ट चर्च को और स्काटलैण्ड चर्च को प्राथमिकता दी जाने लगी। सरकार की ओर से ईसाइयत के प्रचार के निमित्त सहायता देने में दोनों शासनों में कभी कोई कसर नहीं रही। मौरिशस के प्रधान पादरी को गवर्नर के समान सम्मान प्राप्त था। सरकार उसको गवर्नर की तरह ही निवास के लिए साज-सामान से सुसज्जित आलीशान कोठी देती, गवर्नर के समान ही प्रभूत मासिक वेतन देती और उसका समस्त यात्रा-व्यय भी सरकार ही देती। इसके अलावा प्रति व्यक्ति दो रुपए के हिसाब से ईसाइयों को लाखों रु० की वार्षिक सहायता भी मिलती। इस सारे वातावरण में सब धर्मों के प्रति समानता के बर्ताव का सिद्धान्त स्वीकार करवाने के लिए वहां की जनता को कितना संघर्ष करना पड़ा होगा, इसकी कल्पना की जा सकती है। सन् १९५३ में डा० विष्णुदयाल के प्रयत्न से विधान सभा में सब धर्मों को समान स्तर प्रदान करने का प्रस्ताव पास हुआ। इसे भी एक तरह से आर्यसमाज की विजय ही समझना चाहिए। सरकारी आर्थिक सहायता के बल पर ही गरीब मजदूरों को ईसाई बनाने में आसानी होती थी। सब धर्मों की समानता का सिद्धांत स्वीकार किए जाने पर ईसाईयों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता तो बन्द नहीं हुई, पर हिन्दुओं को भी आर्थिक सहायता देने के लिए सरकार को बाध्य होना पड़ा।

स्वतन्त्रता की ओर

पर अभी मौरिशस की आजादी का दिन दूर था। आजादी कहां, अभी तो वयस्क मताधिकार की बात भी वहां पूरी नहीं हुई थी। पूर्ण स्वतंत्रता से पहले इस अधिकार को प्राप्त करना आवश्यक था। अब इस के लिए संघर्ष प्रारंभ हुआ। सभी राजनैतिक दलों ने जब इस अधिकार की मांग की तो सरकार को यह मांग भी माननी पड़ी। सन् १९५९ का जो चुनाव हुआ, वह वयस्क मताधिकार के आधार पर ही हुआ। इसी समय प्रथम बार मन्त्रिमंडल का गठन हुआ। डा० रामगुलाम मंत्रिमंडल के प्रमुख बने और अनेक प्रवासी भारतीय भी मंत्री बने।

अब आजादी की मांग का रास्ता खुल गया। जनता के मन रूपी थर्मामीटर में धीरे-धीरे राजनैतिक चेतना का पारा ऊपर चढ़ता गया। लेबर पार्टी के अलावा अन्य राजनैतिक दलों का भी जन्म हुआ। जिन नए दलों का जन्म हुआ उनके नाम हैं: इंडिपेंडेन्ट फार्वर्ड ब्लाक, मुस्लिम ऐक्शन कमेटी और पार्टी मौरिशियां। इन दलों में से पार्टी मौरिशियां श्वेत और अश्वेत तथा मिश्रित रक्त के ईसाईयों का और फ्रांसीसी तथा अंग्रेज जमींदारों का प्रतिनिधित्व करती थी। गोरे जमींदार वहां अर्से से सर्वशक्तिमान् थे। अब उनको आजादी की मांग के पीछे अपनी सर्वशक्तिमत्ता झुलसती दिखती थी। उनको स्पष्ट रूप से भय था कि यदि मौरिशस स्वतंत्र हो गया तो हम अल्पसंख्यक होकर भी जो यहां राज्य और राजसी सुख का उपभोग करते हैं, वह छिन जायगा, क्योंकि आजाद होने पर मौरिशस प्रजातंत्र के मार्ग पर चलेगा। प्रजातंत्र का अर्थ ही है बहुसंख्यक समुदाय का वर्चस्व।

मानसिक रूप से भी उन्हें ब्रिटेन और फ्रांस से अधिक लगाव था। उन्होंने अपने धर्म, संस्कृति और भाषा को खतरा होने का हौआ खड़ा किया और स्वतंत्रता की मांग का प्रबल विरोध किया। जितना-जितना स्वतंत्रता की मांग का विरोध बढ़ता गया, उतना ही उतना अन्य दलों द्वारा उसका समर्थन भी जुटता गया। पार्टी मौरिशियां को छोड़कर शेष सभी राजनैतिक दलों ने स्वतंत्रता की मांग का जबर्दस्त समर्थन किया। यह प्रसन्नता की बात है कि उस समय मुस्लिम ऐक्शन कमेटी भी स्वतंत्रता की माँग में लेबर पार्टी के साथ रही। भारत में मुस्लिम लीग द्वारा अपनाए गए राष्ट्रविरोधी रवैये का दुष्परिणाम भी शायद उनके सामने था। जब स्वतंत्रता की मांग ने अधिक जोर पकड़ा तब लन्दन में एक सांविधानिक कान्फ्रेंस हुई और उसमें ब्रिटिश सरकार ने अपना यह इरादा घोषित किया कि यदि मौरिशस की विधान सभा स्वतंत्रता संबन्धी प्रस्ताव पास कर देगी तो ब्रिटिश सरकार द्वीप को स्वतंत्र कर देगी।

सन् १९६७ में नए संविधान के अन्तर्गत आम चुनाव हुए। उसमें पार्टी मौरिशियां को पूर्णतः पराजय का मुंह देखना पड़ा। तब नई विधानसभा में मौरिशस की स्वतंत्रता का प्रस्ताव पास हुआ। अंग्रेजों ने भारत की तरह वहां भी अपने वचन का पालन किया और जिस प्रकार १५ अगस्त सन् १९४७ को भारत ब्रिटेन की दो सौ साल की दासता से मुक्त हुआ था, उसी प्रकार मौरिशस भी १२ मार्च, १९६८ को ब्रिटेन की डेढ़ सौ साल की गुलामी से मुक्त हो गया। उसी दिन मौरिशस में भारतीय दूतावास के भव्य भवन का शिलान्यास डा० रामगुलाम ने स्वयं अपने कर-कमलों से किया।

जो गिरमिटिये किसान कभी शर्तबन्दी प्रथा के आधीन भारत से कुली और मजदूर बन कर गए थे, जिन्होंने गोरे जमींदारों और मिल मालिकों के दुःसह अत्याचार सहे थे, उन्होंने शायद स्वप्न में भी यह कल्पना नहीं की होगी कि एक दिन मौरिशस स्वतंत्र होगा और उन्हीं का एक वंशज—डा० शिवसागर रामगुलाम—उसका प्रधानमंत्री बनेगा।

बीसवीं सदी का उत्तरार्ध प्रारम्भ हो चुका था। यूरोपीय शक्तियों के वर्चस्व की एक-एक शताब्दी का नियतिचक्र घूम रहा था। अंग्रेजों का पंजा भारत से ही नहीं हटा, धीरे-धीरे एशिया और अफ्रीका के अन्य अनेक उपनिवेशों से भी हट गया। डा० शिवसागर रामगुलाम ने विधानसभा में मौरिशस की स्वतंत्रता का प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए जो ऐतिहासिक भाषण दिया था, उसके ये शब्द आज भी स्मरणीय हैं :

"हमारे इस महान् निर्णय से केवल हम ही नहीं, हमारी भावी पीढ़ियां भी प्रभावित होंगी। यह निर्णय हमारे लम्बे तथा दुःखद संघर्ष की चरम परिणति सिद्ध होगा। स्वाधीनता का विरोध करने वाली प्रतिक्रियावादी ताकतों को भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। विराट् परिवर्तन के इस ज्वार से न तो हम अप्रभावित रह सकते हैं और न विश्व के लोगों के ऐतिहासिक अभियान को दबा सकते हैं। हमें यह समझना चाहिए कि पुरातन विश्व अब फिर कभी न लौटने के लिए सदा को समाप्त हो चुका है।"

प्रवासी भारतीयों की यह करुण गाथा उन्हें मौरिशस के भाग्य-निर्माता के सिंहासन पर विराजमान करके इस प्रकार सुखान्त नाटक के रूप में समाप्त होती है।

सुखान्त नाटक का नाम आ गया तो इच्छा होती है कि संस्कृत नाटकों की समाप्ति जिस प्रकार 'भरत-वाक्य' से होती है, उसी प्रकार इस प्रकरण को भी कवि-कुल-शिरोमणि कालिदास के इस भरत-वाक्य से ही समाप्त किया जाए—

प्रवर्ततां प्रकृति हिताय पार्थिवः
सरस्वती श्रुति महती महीयताम्

—शासन प्रजा के हित में प्रवृत्त हो, सरस्वती का सम्मान हो और महनीय श्रुति की महिमा सर्वत्र प्रसार पावे।

पृष्ठभूमि

मौरिशस में आर्यसमाज कैसे पहुंचा, इसकी भी विचित्र कथा है। कभी योजना बना कर संगठित रूप से वहां आर्यसमाज की स्थापना नहीं की गई। जैसे हवा कहीं से किसी बीज को उड़ा लावे और किसी दूर की भूमि पर जा पटके और वह बीज वहां उग आवे, कुछ इसी प्रकार की बात आर्य समाज की स्थापना के साथ हुई।

एक बार भारतीय सेना की एक टुकड़ी मौरिशस पहुंची। उस टुकड़ी में उत्तर भारत के कुछ ऐसे सैनिक भी थे जो आर्यसमाजी थे। अकस्मात् उन सैनिकों में से एक सैनिक का स्वर्गवास हो गया। जब उसके क्रियाकर्म का प्रश्न आया, तब उसके साथियों ने कहा कि हम तो अपने साथी के शव की अन्त्येष्टि अग्निदाह द्वारा करेंगे। परन्तु मौरिशस के कानून के मुताबिक किसी भी शव को जमीन के नीचे दफनाया ही जा सकता था, जलाया नहीं जा सकता था। इसलिए टुकड़ी के अंग्रेज अफसर ने शव के दाहकर्म की अनुमति देने से इन्कार कर दिया। इससे मृतक के संगी साथियों के दिल पर चोट लगी। उन्हें लगा कि यह हमारे धार्मिक अधिकारों का हनन है। अन्त में उन उत्साही आर्यवीर सैनिकों ने निश्चय किया कि हम तो अपने साथी के शव का दाहकर्म ही करेंगे, उसे जमीन के नीचे गाड़ेंगे नहीं। फिर जो भी कुछ परिणाम होगा, देखा जाएगा।

इन सैनिकों ने लकड़ियां इकट्ठी कीं, चिता तैयार की और अपने साथी का शव चिता पर रख कर उसके चारों ओर अपने अपने हाथों में बन्दूकें लेकर खड़े हो गए कि देखें, हमें हमारे इस धार्मिक कृत्य से कौन रोकता है?

सैनिकों द्वारा अपने अफसर के आदेश के उल्लंघन का क्या परिणाम होता है, इसे वे सैनिक अच्छी तरह जानते थे। सम्भवत: उनका कोर्ट मार्शल होता, शायद दण्ड के रूप में उन्हें गोली से उड़ा दिया जाता। पर वे दृढ़-निश्चयी सैनिक अपने संकल्प से किसी तरह विरत होने को तैयार नहीं हुए। शव को जलाना वे हिन्दुत्व और वैदिक धर्म का अनिवार्य अंग मानते थे।

दाहकर्म की अनुमति देने से इन्कार करने वाले अफसर को गुमान भी नहीं था कि स्थिति इतनी तनाव-पूर्ण हो जाएगी। सन् १८५७ में अंग्रेज इसी प्रकार की गलती करके भारत में अपने हाथ जला चुके थे। अंग्रेज अफसर भूला नहीं था कि किस प्रकार मंगल पाण्डे तथा उसके साथियों ने चर्बी से बने कारतूस को मुंह से खोलने का विरोध किया था और देखते ही देखते वह चिनगारी समस्त हिन्दुस्तानी सैनिकों में फैलकर ज्वाला का रूप धारण कर गई थी। ज्वाला भी ऐसी विकराल कि उसने ब्रिटिश सिंह का केवल अयाल ही नहीं जला दिया, बल्कि एक बार तो उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया था। उस सारे घटनाचक्र की यहां भी कहीं पुनरावृत्ति तो होने वाली नहीं है? भारत की सन् १८५७ की राज्यक्रांति की तरह कहीं मौरिशस की भूमि पर भी यह उसी प्रकार के गदर की शुरुआत तो नहीं है? और फिर यही विद्रोह की भावना यदि भारत-स्थित भारतीय सेना तक पहुंच गई तो क्या दूसरा सन् १८५७ शुरू नहीं हो जायगा?

इस परिणाम की कल्पना करके वह अंग्रेज अफसर भी घबरा गया। बात इस हद तक तूल पकड़ जाएगी, इसकी कल्पना उसे नहीं थी। उसने तुरन्त अपने आदेश

द्वितीय रश्मि

ओम् इन्द्रं वर्धन्तोऽप्तुरः

कृन्वन्तो विश्वमार्यम् ।

अपघ्नन्तो ऽराव्णः ॥

ऋग्वेद ९।६३।५

—हे प्रगतिशील लोगो ! सारे संसार को एक ईश्वर की उपासना सिखाओ, विश्व को आर्यत्व की दीक्षा दो—मानव को व्यक्तिगत स्वार्थों से हटा कर समाज के प्रति दायित्व-निष्ठ बनाओ, और अदानी का बहिष्कार करो अर्थात् धन का सदुपयोग करो ।

●

मौरिशस में आर्य समाज

पृष्ठभूमि □

विदेशों में आर्य समाज □

व्यवस्थित संगठन □

कार्य का विस्तार □

●

में यों संशोधन किया : "शव को दफनाने का नियम केवल मौरिशस के निवासियों के लिए है, परन्तु तुम क्यों कि मौरिशस के निवासी न होकर भारत के निवासी हो, इस लिए तुम शव को जला भी सकते हो।"

जब शव की अन्त्येष्टि हो चुकी और सब सैनिक मानसिक तनाव की स्थिति से उबर गए, तब उस अंग्रेज अफसर ने अपनी टुकड़ी के इन सैनिकों से पूछा : "तुम्हें यह किसने बताया कि शव को दफनाना नहीं चाहिए, उसका दाह करना चाहिए ?"

आर्यवीरों ने निर्भीतापूर्वक उत्तर दिया : "हमारे गुरु दयानन्द ने।"

"क्या कोई ग्रन्थ भी है जिसमें इसका युक्तियुक्त विवेचन हो और बताया गया हो कि शव का दाहकर्म ही उचित है, उसे दफनाना नहीं।"

तब उन सैनिकों ने अपने अफसर के सामने 'सत्यार्थ-प्रकाश' और 'संस्कार विधि' उपस्थित की और उसमें से सम्बद्ध प्रकरण निकाल कर दिखाए। अफसर भी आश्वस्त हो गया।

मौरिशस में किसी भी शव की अग्नि दाह द्वारा यह पहली अन्त्येष्टि थी।

सत्यार्थप्रकाश का चमत्कार

उस अंग्रेज अफसर ने सोचा कि यह टुकड़ी अगर यहां और देर तक रहे तो पता नहीं क्या गुल खिलावे, इसलिए इस टुकड़ी को शीघ्र ही भारत वापिस भेज देना चाहिए। जब टुकड़ी भारत वापिस आने लगी, तो भोलानाथ हवलदार नामक व्यक्ति ने वही सत्यार्थप्रकाश और संस्कार विधि नामक ग्रन्थ मौरिशस निवासी दो व्यक्तियों को दे दिए। संस्कार विधि श्री भिखारीसिंह के हाथ लगी और सत्यार्थप्रकाश श्री खेमलाल के। श्री खेमलाल शिक्षित व्यक्ति थे, बैरिस्टर थे, जातिहित-चिन्तक थे। श्री खेमलाल के ही एक साथी थे श्रीगुरुप्रसाद दलजीत लाल। वे भी सुशिक्षित थे और तत्कालीन भारतीयों की दुरवस्था से चिन्तित थे। अन्य मतावलम्बियों से जब कभी उनका वार्तालाप होता, तब उनके तर्कों के सामने उन्हें आर्य-हिन्दू वैदिक धर्म के सिद्धान्तों और अपने महापुरुषों के जीवन की उच्चता का पक्ष निर्बल होता दीखता। सत्यार्थप्रकाश उनके हाथ लगा तो जैसे उनकी आंखें खुल गईं। सत्य सनातन वैदिक धर्म का यथार्थ स्वरूप उनके सामने प्रकट हुआ। सत्यार्थ प्रकाश जैसे मार्मिक ग्रन्थ को पाकर वे अपने आपको सौभग्यशाली समझने लगे। खेमलाल और दलजीतलाल ने १५-१५ दिन की बारी से सत्यार्थ-प्रकाश का स्वाध्याय किया। ज्यों-ज्यों वे ग्रन्थ का पारायण करते गए, वैदिक धर्म के प्रति उनकी आस्था बढ़ती गई। विधर्मियों तथा पाखण्डियों से लोहा लेने के लिए तो जैसे उन्हें ब्रह्मास्त्र ही हाथ लग गया।

यह घटना सन् १८९७ के आस-पास की है। उस समय चार्ल्स ब्रूस मौरिशस का गवर्नर था। वह संस्कृत का भी पण्डित था। उसने उन्हीं दिनों अथर्ववेद के कुछ मंत्रों का अंग्रेजी में अनुवाद किया था जिससे यूरोप के बुद्धिजीवियों तक वेद का नाम पहुंचा था। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अथर्ववेद और सत्यार्थप्रकाश लगभग साथ-साथ ही मौरिशस में पहुंचे। परन्तु आश्चर्य की बात है कि चार्ल्स ब्रूस ने अथर्ववेद से मौरिशस वासियों को परिचित नहीं कराया। शायद उन लोगों को उसने इस योग्य न समझा हो। पर बाद में सत्यार्थप्रकाश ने वह कमी भी अपने ढंग से पूरी कर दी।

'हवा के बीज' वाली एक और घटना भी है। रिवर दी जांगील में रामशरण मोती नामक एक सज्जन थे जो मोती मास्टर के नाम से मशहूर थे। उन्होंने भारत से कुछ पुस्तकें मंगाई थीं। उन पुस्तकों को ऊपर से लपेटने के लिए रद्दी के तौर पर जो कागज प्रयुक्त किया गया था वह लाहौर की 'आर्य पत्रिका' के कुछ पन्ने थे। उन पन्नों पर मास्टर मोती की दृष्टि पड़ी तो उन्हें उसमें उपयोगी बातें दिखीं। वे प्रभावित हुए। जिस दुकानदार ने पुस्तकें भेजी थीं, उसे पत्र लिखकर मास्टर मोती ने आर्य पत्रिका का पता ठिकाना पूछा। दुकानदार ने पूरा-पूरा पता लिख दिया। मास्टर मोती चन्दा भेज कर उस पत्रिका के ग्राहक बन गए। उस पत्रिका से ही उनके विचारों में परिवर्तन आया और उनके मन पर आर्यसमाज की छाप पड़ी। शुद्ध आचार-विचार वाले मास्टर मोती आर्यसमाज संबन्धी पुस्तकें मंगा-मंगा कर लोगों में अपने विचारों का

प्रचार करते रहे। जब उनको पता लगा कि पोर्टलुई और क्यूरपिप में भी उनके विचारों के कुछ लोग रहते हैं, तो वे श्री खेमलाल और श्री दलजीत लाल से जाकर मिले। परस्पर परिचय से तीनों का आत्म-विश्वास बढ़ा और वे अधिक उत्साह से अपने विचारों का प्रचार करने लगे।

जीवन में परिवर्तन

सत्यार्थप्रकाश ने न जाने कितने लोगों के जीवन में चमत्कार उत्पन्न किया है। श्री खेमलाल के जीवन में कैसा परिवर्तन आया, इसका उदाहरण उन्हीं के जीवन की एक घटना है :

उनके पिता गोराचन्द का स्वर्गवास हो गया तो हिन्दू विधि से उनके श्राद्ध का प्रसंग आया। परिवार के सब लोग नदी-तट पर एकत्र हुए। खेमलाल के प्रतिष्ठित परिवार के अनुरूप नगर के अन्य गण्यमान्य लोग भी वहां पहुंचे। हिन्दुओं के सर्वमान्य पण्डित श्राद्ध की विधि सम्पन्न करा रहे थे। उन्होंने हजार बार खेमलाल से कहा कि अपने पिता के स्वर्गवास पर कम से कम तुम सिर के बाल और मूंछें तो मुंड़वा लो। परन्तु खेमलाल तैयार नहीं हुए। पितृप्रेम, लोक लज्जा, बड़ों का सम्मान, पारिवारिक प्रियजनों का आग्रह और अपने पूर्वजों की परम्परागत मान-मर्यादा—सबको उन्होंने केवल अपने विचारों की सत्यता पर आस्था के कारण तिलांजलि दे दी। सारा हिन्दू समाज एक ओर, पर मर्द खेमलाल अकेला दूसरी ओर। लोगों ने उन्हें कपूत, कुलांगार, बेईमान, नीच, पापात्मा और न जाने क्या-क्या कहा। पर खेमलाल अभिमन्यु की तरह अकेले मोर्चे पर डटे रहे। उनके सहयोगी मित्रों ने भी उनका साथ छोड़ दिया।

सबकी निन्दा, अपमान और फटकार सहते-सहते लगभग बीस वर्ष तक खेमलालने इसी प्रकार संघर्ष किया, परन्तु अपने विचारों से कभी टस से मस नहीं हुए। यदि वे कच्चे दिल के होते तो आर्यसमाज की कभी प्रगति न हो पाती।

भारत की तरह मौरिशस में भी खेमलाल तथा उनके साथी प्रारम्भिक आर्यसमाजियों को दो मोर्चे संभालने पड़ते थे। उन्हें जहां एक तरफ विधर्मियों से लोहा लेना पड़ता, वहां अपने ही धर्मावलम्बी पोंगापंथी भाइयों से भी। सत्यार्थ प्रकाश की प्रमाण-समन्वित, तर्क-संगत और युक्तियुक्त विचारधारा अपने अनुयायियों को इन दोनों ही मोर्चों पर न केवल पराजित होने से बचाती, प्रत्युत विजयी होने का गौरव प्रदान करती। सद्यः विकसित वैज्ञानिक प्रगति, औद्योगिक सभ्यता और साम्राज्य-विस्तार के नशे में चूर यूरोपीय शक्तियां अपने को देवदूत जैसी विशिष्ट जाति, विशिष्ट संस्कृति और विशिष्ट धर्म का वाहक समझ कर उपनिवेशवासियों से किस प्रकार व्यवहार करती थीं, यह संसार भर में फैले उनके उपनिवेशों की प्रजा भली भांति जानती है। और उस समय का हिन्दू समाज यदि अपने ही अन्धविश्वासों, सामाजिक कुरीतियों, पारस्परिक वैमनस्य और आत्म-अवमानना के विचारों से ग्रस्त-त्रस्त न होता, तो भारत पराधीन ही क्यों होता! फिर भारत के हिन्दुओं का जो वर्ग मौरिशस पहुंचा था, वह वैसे भी अशिक्षित, गरीब तथा पिछड़ा हुआ था। आर्यसमाजियों को जहां विधर्मियों के वैचारिक आक्रमण से बचाव करना पड़ता, वहां अपने ही लोगों की पाखण्ड-परायणता पर तर्क से प्रहार करना पड़ता। आक्रमण और प्रतिरक्षा की इस दोहरी सामरिक तैयारी के बिना न कोई सेना सफल हो सकती है, न ही कोई प्रगतिवादी सुधार आन्दोलन। ऋषि दयानन्द की शिक्षा अपने अनुयायियों को इस सामरिक सज्जा से किस प्रकार सन्नद्ध करती है, और सत्यार्थप्रकाश अन्य ग्रन्थों से किस बात में भिन्न है, उसका दर्शन 'संस्कृति के चार अध्याय' नामक ग्रन्थ में वर्णित श्री रामधारी सिंह दिनकर के इन शब्दों में होजाएगा :

> "सत्यार्थप्रकाश" में जहां हिन्दुत्व के वैदिक रूप का गहन आख्यान है, वहां उसमें ईसाइयत और इस्लाम की आलोचना पर भी अलग-अलग दो समुल्लास हैं। अब तक हिन्दुत्व की निन्दा करने वाले निश्चिन्त थे कि हिन्दू अपना सुधार भले करता हो, किन्तु बदले में हमारी आलोचना करने का उसे साहस नहीं होगा। किन्तु इस मेधावी एवं योद्धा संन्यासी ने उनकी आशा पर पानी फेर दिया। यही नहीं, प्रत्युत जो बात राजा राममोहनराय, केशवचन्द्र सेन और महादेव गोविन्द रानाडे के ध्यान में भी

नहीं आई थी, उस बात को लेकर स्वामी दयानन्द के शिष्य आगे बढ़े और उन्होंने घोषणा कर दी कि धर्मच्युत व्यक्ति प्रत्येक अवस्था में अपने धर्म में वापिस आ सकता है, एवं अहिन्दू भी यदि चाहें तो हिन्दू धर्म में प्रवेश पा सकते हैं। यह केवल सुधार की वाणी नहीं थी, जाग्रत हिन्दुत्व का समरनाद था। और सत्य ही, रणारूढ़ हिन्दुत्व के जैसे निर्भीक नेता स्वामी दयानन्द हुए, वैसा और कोई नहीं हुआ।"

पर व्यवस्थित रूप से मौरिशस में आर्य समाज की स्थापना कैसे हुई, इसका वर्णन करने से पहले विदेशों में आर्य समाज के कार्य का संक्षिप्त दिग्दर्शन कर लेना चाहिए।

जब यह स्मारिका प्रेस में छपनी प्रारम्भ हो गई थी, तब पता लगा कि राष्ट्रकवि श्री रामधारीसिंह दिनकर का २४ अप्रैल, १९७४ की रात को अकस्मात् हृदय गति रुक जाने से स्वर्गवा हो गया। हमारी श्रद्धांजलि।—सं०

✓ आपने लाखों रुपये लगा कर मन्दिर खड़े किए हैं, परन्तु यह तो बताइए इससे लाभ क्या हुआ? अनधिकारियों को खिला पिला कर ईंट पत्थर में व्यय करके आपने इतना रुपया यों ही खो दिया। क्या ही अच्छा होता यदि यह द्रव्य जाति और देश के भले में लगता। मनुष्य मात्र के हितकर कार्य में व्यय होता। तीस तीस वर्ष की लड़कियां बिना ब्याही कनौजियों के घरों में बैठी हैं। यदि उनके विवाह करा देते अथवा बालक बालिकाओं की पाठशाला स्थापित करके जनहित का परिचय देते तो अच्छा था। देश में शिल्प का अभाव है। उस द्रव्य से आप यदि एक शिल्प कला स्थापित करके स्वदेश वासियों में कलाकौशल का प्रचार करते तो हमारा कितना लोकहित होता।

वेदों की आज्ञा पर चलना धर्म है। वेदों में प्रतिमा पूजन की आज्ञा नहीं है। इसलिए उनके पूजन में आज्ञा भंग करने का दोष है। पुराणों में जो मूर्तियों का पूजन लिखा है, वह सब गप्प है और असार है। जो यह कहते हैं कि अपनी भावना का फल होता है, उनका कथन भी सत्य नहीं है। तुम बैठे चक्रवर्ती राजा बनने की भावना करते रहे तो इतने से सार्वभौम राजा नही बन सकोगे। भावना सच्ची होनी चाहिए। —ऋषि दयानन्द

विदेशों में आर्य समाज

जब संसार के सभी सभ्य देशों से गुलामी की प्रथा हट गई और अफ्रीका के जंगलों तथा गांवों से जबर्दस्ती पकड़ कर लाए गए हब्शियों को दासता के बन्धन से मुक्ति मिल गई तब गोरे जमींदारों और भूपतियों को किसानों तथा मजदूरों का अभाव खटकने लगा। उन्हें सस्ते और मेहनती मजदूरों की आवश्यकता पड़ी। तब शर्तबन्द कुली प्रथा का जन्म हुआ और इसी प्रथा के अधीन संसार को सभ्यता सिखाने वालों की सन्तान भारत की विदेशी सरकार द्वारा भूमंडल के विभिन्न भागों में भेजी जाने लगी। सन् १८३४ में यह प्रथा प्रारम्भ हुई और लगभग सौ साल तक अबाध गति से चलती रही। मौरिशस के सम्बन्ध में इसका उल्लेख पहले कर चुके हैं। इस प्रकार शर्तबन्दी का पट्टा लिखाकर जो लोग ब्रिटिश या अन्य यूरोपीय उपनिवेशों में गए, उनमें से बहुत थोड़े लोग ही वापिस भारत लौटे, अधिकांश उन उपनिवेशों में बस गए।

स्वदेश से हजारों मील दूर इन उपनिवेशों में पहुँचने पर जिन परिस्थितियों का उन्हें सामना करना पड़ता उनमें अपने धर्म का पालन उन्हें अत्यन्त कठिन लगता। कुली डिपो में उनके साथ पशुओं जैसा व्यवहार होता। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई के भेदभाव के बिना उन्हें सबके साथ खाने-पीने और रहने के लिए विवश होना पड़ता था, जिसके कारण उनके जात-पांत और छूतछात संबंधी धार्मिक विचारों को ठेस पहुंचती थी। जिन वस्तुओं को हिन्दू धार्मिक दृष्टि से अभक्ष्य और अपेय समझते थे, वही मांस और शराब वहां सबसे बड़ी नियामत समझे जाते थे। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या बहुत कम होती थी। सरकारी नियम के अनुसार १०० पुरुषों के पीछे ४० स्त्रियां रहतीं। इससे अनाचार बढ़ता और स्त्रियों के पीछे लड़ाई-झगड़े होते, सिर फुटौवल होती और मुकदमेबाजी चलती। हिन्दू विधि से हुए विवाह वहां गैरकानूनी माने जाते। उपनिवेशों के हिन्दू अपने पर्व-त्योहार भूल बैठे थे। होली, दिवाली, रामनवमी और कृष्ण जन्माष्टमी आदि पर्व विस्मृत हो गए। हिन्दुओं के लिए सबसे बड़ा त्योहार बन गया था मुसलमानों का मुहर्रम या ईसाइयों का क्रिसमस। ऐसे पर्वों पर ही कुलियों को सामूहिक छुट्टी मिलती। मृतक शव के दाह के स्थान पर भारतीयों में भी मुर्दे को जमीन में गाड़ने की प्रथा चल पड़ी और कब्रों पर भेंट-पूजा चढ़ाई जाने लगी।

जब हिन्दू स्वतः ही अपने धर्म और धार्मिक कृत्यों से विमुख होने लगे तब इस दुरवस्था का विधर्मियों ने खूब लाभ उठाया। हिन्दू युवक धड़ाधड़ ईसाई बनने लगे थे।

जिस समय स्वामी विवेकानन्द अमेरिका में जाकर हिन्दू धर्म की दार्शनिक ऊंचाइयों की विजय पताका फहरा रहे थे और न्यूयार्क, शिकागो, और बोस्टन इत्यादि नगरों में मुट्ठी भर अमरीकी नर-नारियों को वेदान्त का उपदेश देकर वहां मठों की स्थापना करा रहे थे, तब उन्हीं दिनों दक्षिणी अमरीका के ट्रिनीडाड, अमरारा, जमेका आदि उपनिवेशों में हजारों प्रवासी भारतीय हिन्दू धर्म को छोड़ कर ईसाई बनते जा रहे थे। उन उपनिवेशों में विरले ही शिक्षित व्यक्ति ईसाई बनने से बचे होंगे, नहीं तो सब ईसाइयत की शरण में जा चुके थे। उन अभागे हिन्दुओं पर न स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि पड़ी, न उनके अनुयायियों की। जब ऐसा प्रतीत होने लगा कि भविष्य में प्रवासी भारतीयों के वंशजों में हिन्दुत्व का चिन्ह भी नहीं

बचेगा, तभी आर्यसमाज और वैदिक धर्म का सन्देश उन तक पहुंच गया और हिन्दुत्व नामशेष होने से बच गया।

विदेशों में लगभग एक करोड़ भारतीय प्रवासी रहते हैं। जहां-जहां आर्यसमाज की स्थापना हो चुकी है और जहां संगठित तथा सुचारु रूप से कार्य चल रहा है, उन देशों का संक्षेप से यहां उल्लेख करना समीचीन होगा।

केनिया (पूर्वी अफ्रीका)

केनिया की राजधानी नैरोबी में सन् १९०३ में आर्य समाज की स्थापना हुई। आर्य समाज का लाखों रु० की लागत से जैसा शानदार और भव्य मन्दिर यहां बना हुआ है, वैसा समस्त अफ्रीका महाद्वीप में तो क्या, विदेशों में अन्यत्र कहीं भी नहीं है। एक विशाल भवन कन्या पाठशाला का है जिसमें हजार के लगभग छात्राएं शिक्षा पाती हैं। इस पाठशाला में हिन्दी, गुजराती, अंग्रेजी के अलावा संगीत, पाकशास्त्र और धर्मशिक्षा की भी व्यवस्था है। एक दुमंजिली अतिथिशाला है जिसमें १३ कमरे हैं। सुसंचालित पुस्तकालय और वाचनालय है। आर्य स्त्री समाज भी बहुत सशक्त और प्रभावशाली है।

किसुमू का आर्य समाज दूसरे नम्बर पर है। यहाँ १९१० में आर्य समाज की स्थापना हुई थी। पच्चीस हजार रु० की लागत से समाज मन्दिर बना है। निकट ही कन्या पाठशाला की इमारत है जो ४० हजार रु० की लागत से बनी है। अतिथियों के लिए आर्य पथिकाश्रम है। पुस्तकालय, वाचनालय और स्त्री-समाज भी है।

केनिया का तीसरा उल्लेखनीय आर्य समाज है मोम्बासा। यह केनिया का मुख्य बंदरगाह है और वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिए समुद्री मार्ग से केनिया पधारने वाले आर्योपदेशकों के सर्वप्रथम स्वागत का श्रेय यही आर्य समाज प्राप्त करता है।

युगाण्डा

केनिया से लगा हुआ प्रदेश है—युगाण्डा। युगाण्डा के कम्पाला नगर में १९०८ में आर्य समाज की स्थापना हुई थी।

इस प्रदेश में अन्य प्रमुख समाजें हैं जिंजा और मवेल। मवेल में एक आर्य कन्या पाठशाला भी है। पर युगाण्डा के राष्ट्राध्यक्ष इदी अमीन की दुर्नीति के कारण जब सभी भारतीयों को युगाण्डा छोड़ना पड़ा, तब आर्यों को भी सब कुछ ज्यों का त्यों छोड़कर वहां से निकलना पड़ा।

जंजीबार

मोम्बासा से लगभग २०० मील दूर जंजीबार है। यहां १९०७ में आर्य समाज की स्थापना हुई थी। जिस स्थान पर कभी गुलामों का बाजार लगता था और हब्शी दासों की खरीद-फरोख्त होती थी, उसी स्थान पर बने आर्य समाज मन्दिर में अब यज्ञ होता है और वेदमंत्रों की ध्वनि गुंजित होती है। जंजीबार के सुल्तान ने स्वयं उदारतापूर्वक आर्य समाज मन्दिर के निर्माण में सहयोग दिया था। आर्य समाज मन्दिर दुमंजिला है। एक कन्या पाठशाला भी है। यहां से भी अधिकांश भारतीय निष्कासित हुए हैं, पर अभी तक आर्य समाज का काम येन केन प्रकारेण चल रहा है।

टांगानीका

जंजीबार के निकट ही टांगानीका है। इस प्रदेश की राजधानी और सबसे बड़ा शहर दारेसलाम है। यहां भारतीयों की आबादी लगभग २५ हजार है। १९१९ में यहां आर्य समाज की विधिवत् स्थापना हुई। समाज की ओर से ही एक कन्या पाठशाला चलाई जाती है जो इस प्रदेश के लिए गौरव की वस्तु है। टांगानीका प्रदेश में टांगा, टबोरो और क्वांजा नगरों में भी आर्यसमाजें हैं।

केनिया में अपनी पृथक् आर्यप्रतिनिधि सभा है जो सन् १९२२ में संगठित हुई थी। पूर्वी अफ्रीका में आर्य समाज की लगभग सवा करोड़ रु० की सम्पत्ति है। जिन स्थानों में आर्य समाजें है उनके नाम इस प्रकार है: नैरोबी, नुकुरू, एल्डोरेट, मोम्बासा, किसुमु, माचाकोस, कम्पाला, तुगाजी, मासिंडी, तोरोरो, दारेसलाम, जंजीबार, टांगा, म्बाजा, अरुबा और टबोरो।

दक्षिण अफ्रीका

अक्षिण अफ्रीका में चार प्रदेश हैं—नैटाल, ट्रांसवाल, केप और ओरेंज फ्री स्टेट। नैटाल में पहले पहल भारतीय

सन् १८६० में आए। मद्रासियों की संख्या अधिक है। बिहारी, उत्तरप्रदेशी, गुजराती भी अच्छी संख्या में हैं। कुछ पंजाबी भी हैं। १९२५ में डर्बन में महर्षि दयानन्द जन्म जताब्दी का महोत्सव मनाया गया था। इसी अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना भी हुई। इस सभा के साथ २५ आर्य समाजें सम्बद्ध हैं।

फिजी द्वीपसमूह

आस्ट्रेलिया से पूर्व में और न्यूजीलैण्ड से उत्तर में प्रशान्त महासागर में फिजी द्वीपसमूह है। यहां सन् १८१९ में भारतीय पहुँचे थे। आर्य समाज के प्रचार से पूर्व यहां ईसाइयत का बोलबाला था। इस समय इस द्वीपसमूह के प्रायः सभी नगरों में आर्य समाज स्थापित हैं। १९१६ में आर्य प्रतिनिधि सभा की नींव पड़ी। आर्य समाजियों को सरकार का कोपभाजन भी बनना पड़ा। पर उनके विरुद्ध राजद्रोह का आरोप सिद्ध नहीं हुआ। आर्यसमाज की ओर से कई स्कूल और कालेज चल रहे हैं। इस द्वीप-समूह में आर्य समाज की लाखों रुपए की सम्पत्ति है।

गियाना, ट्रिनिडाड, सुरीनाम और वेस्ट इन्डीज

यहां सन् १८६५ में भारतीयों का जाना प्रारम्भ हुआ था। दक्षिण अमरीका के निकटवर्ती ब्रिटिश गियाना में आर्य समाज का शिक्षा संबंधी कार्य अच्छा है। गियाना के चारों भागों में आर्य समाजें हैं। भारतीयों की आबादी तीन लाख से ऊपर है।

ब्रिटिश गियाना के पास ही ट्रिनिडाड है। यहां भारतीय १८४५ में पहले पहल आए। छंगुआनास नामक स्थान आर्य समाज की गतिविधियों का केन्द्र है। प्रिंसेज टाउन, सेंटजोसेफ में समाज है।

डच गियाना में सर्वप्रथम भारतीय मजदूर सन् १८७३ में आए। यहां सुरीनाम के कुछ हिन्दुओं ने सन् १९२६ में सत्यार्थप्रकाश इत्यादि ग्रन्थ मंगाकर पढ़े, तो उनकी आंखें खुलीं। यहां की राजधानी पारामारीबो में आर्य समाज की स्थापना हो चुकी है। १९३७ में आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना भी हो गई है। जार्ज टाउन उसका मुख्य केन्द्र है और गियाना, ट्रिनीडाड और सुरीनाम उसके कार्यक्षेत्र हैं। एक डी० ए० वी० कालेज चल रहा है। ५० के लगभग समाजें हैं और कई स्कूल सभा से सम्बद्ध हैं। ५ स्त्री समाजें हैं और १० आर्यवीर दल हैं।

ब्रिटेन

लन्दन में कई बार आर्यसमाज की गतिविधियां प्रारम्भ होकर मंद पड़ गईं। अब १९७० में वैदिक मिशन के नाम से आर्य समाज की स्थापना हुई है। नियमपूर्वक साप्ताहिक सत्संग होते हैं। बरमिंघम में समाज स्थापित हो चुका है और समाज ने अपना भवन क्रय कर लिया है। सदस्य संख्या १४० है।

थाईलैण्ड

थाईलैण्ड में ५ हजार भारतीय बसते हैं। कुछ दुकान-दार और व्यापारी हैं, पर अधिकांश मजदूर या दरबान है। व्यापारियों में सिंधी, पंजाबी और गुजराती अधिक हैं और मेहनत मजदूरी करने वालों में मद्रासी और गोरखे अधिक हैं। राजधानी बैंकाक में सन् १९२० में आर्यसमाज की स्थापना हुई। अपना भवन है। जनता पर आर्यसमाज का अच्छा प्रभाव है। आजाद हिन्द फौज का एक कैम्प नेता जी ने बैंकाक में भी स्थापित किया था। लगभग ४ लाख रु० की आर्य समाज की सम्पत्ति है।

बर्मा

यहां १९२७ में आर्य समाज का प्रवेश हुआ। रंगून में आर्य समाज का अपना भवन है। सत्यार्थप्रकाश का बर्मी भाषा में अनुवाद हो चुका है। अखिल बर्मा आर्यन लीग के अधीन निम्न १५ समाजें हैं—रंगून, मिटियाना, मौजीक, मांडले, मोनयावा, कलाव, टाउनग्री, चंक, लाशियों, नमदो, जियवाड़ी आदि। सरकारी प्रतिबंधों के होते हुए भी यहां उत्साही युवकों के कारण आर्यसमाज का काम शिथिल नहीं हो पाया। बर्मा में आर्य समाज की लाखों की सम्पत्ति है।

सिंगापुर की आर्यसमाज पूर्वी एशिया की प्रमुख समाजों में है और वहां बहुत अच्छा काम चल रहा है।

तेजुमुतान द्वीप में भी दो आर्य समाजें स्थापित हो चुकी हैं।

ईराक

तीन मुख्य शहर हैं–बगदाद, बसरा और मोसल। इनमें से बगदाद में दो आर्य समाजें हैं। सन् १८५६ में अवध पर अंग्रेजों का अधिकार हो जाने के पश्चात् अनेक राज-परिवार और अमीर-उमराव ईराक में जाकर बस गए, पर उन्होंने अपनी भारतीयता नहीं छोड़ी। बगदाद की आर्यसमाज सार्वदेशिक सभा से सम्बद्ध है।

इसके अतिरिक्त संसार के अन्य अनेक देशों में आर्य संन्यासी और विद्वान वैदिक धर्म का प्रचार कर चुके हैं, किन्तु वहां परिस्थितियों की अनुकूलता न होने के कारण आर्य समाज की स्थापना नहीं हो सकी।

सन् १९२९ में स्वामी शंकरानन्द ने श्रीलंका के कोलम्बो, मुनीश्वरम्, कैण्डी, नवारेलिया, सीता एलिया, त्रिकोमाली, अनुराधापुर, जाफना आदि स्थानों पर वैदिक धर्म का प्रचार किया, किन्तु आर्य समाज या कोई ऐसी संस्था स्थापित न हो सकी जो स्वामी जी के लौटने पर इस कार्य को जारी रख सकती।

स्व० डा० केशवदेव शास्त्री ने अत्यंत उत्साह से अमेरिका के न्यूयार्क, वाशिंगटन और बोस्टन में वैदिक धर्म के संबंध में अनेक व्याख्यान दिए थे, पर वे स्वामी विवेकानन्द की भांति किसी मठ या आर्य समाज की स्थापना नहीं कर सके।

श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज जापान जाकर वैदिक धर्म का संदेश सुना चुके हैं, पर वहां भी आर्य समाज की स्थापना नहीं हुई।

जिन देशों में अभी तक आर्यसमाज की स्थापना नहीं हुई, वे देश अभी तक आर्य समाज के लिए सामूहिक रूप से चुनौती का विषय बने हुए हैं। पर जहां-जहां आर्य समाज की स्थापना हो चुकी है, वहां-वहां और खास कर उन उन प्रदेशों में, जो कभी ब्रिटेन या अन्य यूरोपीय शक्तियों के उपनिवेश रहे हैं, भारतीय प्रवासियों ने आर्यसमाज और वैदिक धर्म से प्रेरणा लेकर न केवल अपने धर्म और संस्कृति की, प्रत्युत अपने अस्तित्व की भी रक्षा की है। इतना ही क्यों, उन-उन देशों की सामाजिक और राजनैतिक प्रगति में आर्यसमाज ने जो योग दिया है, वह भी अविस्मरणीय है।

आर्य समाज की उपयोगिता के संबंध में दीनबन्धु सी० एफ० एण्ड्रूज ने महात्मा गाँधी को एक पत्र में लिखा था :

> "आर्य समाज ही एक ऐसी संस्था है, जो प्रवासी भारतीयों की धार्मिक आकांक्षाओं की तृप्ति, सामाजिक त्रुटियों का निवारण और राष्ट्रीय भावनाओं का उद्दीपन कर सकती है। उपनिवेशों में प्रवासी भारतीयों के लिए आर्य-समाज जो कुछ कर रहा है, उसका मेरे हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा है। आर्यसमाज ही एक ऐसी संस्था है जो पुण्य भूमि भारत के प्रति प्रवासियों के हृदय में अनुराग पैदा करती है और पुरातन आर्य संस्कृति के (जिस पर प्रत्येक भारतीय का जन्मसिद्ध अधिकार है) हित की रक्षा पर विशेष ध्यान देती है। आर्य समाज के द्वारा उपनिवेशों में वैदिक धर्म और संस्कृति का प्रचार तथा रक्षण हुआ है। आर्यसमाज में जीवन, शक्ति और उत्साह है। भारत की जो संस्थाएं प्रवासी भारतीयों की सेवा कर सकती हैं, उनमें आर्य समाज से बढ़ कर क्रियाशील और शक्तिशाली अन्य कोई संस्था नहीं है।"

व्यवस्थित संगठन

एक शताब्दी पहले जो भारतीय प्रवासी बनकर मौरिशस आए थे, वे अशिक्षित तो थे ही, उनकी आर्थिक और सामाजिक दशा भी अत्यन्त हीन थी। इसलिए उन्हें आसानी से प्रलोभन देकर बरगलाया जा सकता था। साथ ही भूत-प्रेत के प्रति अन्धविश्वास और जातपांत, छूत-छात, बाल-विवाह तथा अनमेल विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियां वे अपने साथ लाए थे। ऊपर से गोरे मालिकों के दमन और शोषण से पीड़ित। ईसाई पादरियों को इससे अच्छी चरागाह और कहां मिलती ! फिर जब राज्याश्रय भी ईसाइयों को पूर्णरूप से प्राप्त हो !

ईसाइयों ने प्रवासी भारतीयों को ईसाई बनाने के लिए दो तरीके अपनाए। पहला तरीका था धन द्वारा प्रलोभित करने का और ईसाई बन जाने पर शासक वर्ग से सुविधा प्राप्त करने का, और दूसरा तरीका था पुरुषों के अनुपात में स्त्रियों की संख्या बहुत थोड़ी रख कर भारतीयों को हब्शी औरतों से शादी करने के लिए प्रेरित करने का। अर्थ और काम—ये ही दो वस्तुएं मनुष्य को सब से अधिक आकर्षित करती हैं। इन्हीं के माध्यम से मनुष्य पतन के मार्ग पर अग्रसर होता है। विरले ही संकल्प के धनी व्यक्ति होते हैं जो अर्थ और काम के प्रहार को सहार सकें। इस प्रहार के आगे बड़े बड़े पुरुष-पुंगव धराशायी होते देखे गए हैं।

इसके अलावा हिन्दुओं ने 'स्त्री शूद्रौ नाधीयाताम्' की गलत परम्परा के कारण स्त्रियों और नीच वर्ग के लोगों को धर्म की शिक्षा देना तो दूर, धर्मग्रन्थों का अवलोकन और श्रवण तक निषिद्ध करार कर रखा था। इधर ईसाई अपनी बाइबिल अवर्ण-सवर्ण सबके हाथ में देते। हिन्दू लोग जातिभेद की प्रथा के कारण एक दूसरे के साथ खान-पान में संकोच करते, पर ईसाई सबको एक ही मेज पर बिठा कर एक साथ खाना खिलाते। फिर हिन्दू अपनी जाति और बिरादरी से बाहर शादी करने को महापातक समझते, तो ईसाई अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन देते। इस प्रकार छल-बल-कौशल सब तरह से भारतीयों को ईसाई बनाने की कोशिश होती और भारतीय हिन्दू उस दिशा में बहते जाते। शिक्षित हिन्दू तो हिन्दुत्व से घृणा तक करने लग जाते।

समस्त उपनिवेशों में प्रवासी भारतीयों की यही हालत थी। भारत स्वयं पराधीन था, इसलिए वह भी इस दिशा में कुछ करने की स्थिति में नहीं था। ऐसी दशा में मौरिशस में सत्यार्थप्रकाश के माध्यम से पहुंचा आर्य समाज और उसके साथ मिल गई खेमलाल-दलजितलाल और मास्टर मोती जैसे कर्मठ लोगों की तपस्या तथा वैदिक धर्म के प्रति निष्ठा। आर्य समाज के सत्संगों में जहां भूत-प्रेत और बलि-प्रथा का खण्डन होता, वहीं ईसाइयों से लोहा लेने की उनकी सामर्थ्य से भी जनता प्रभावित हुए बिना नहीं रहती। धीरे-धीरे इन प्रारम्भिक आर्यों के कट्टर विरोधी भी उनकी निष्ठा के कायल होने लगे।

आर्यसमाज की स्थापना

इसी समय, सन् १९०७ में, महात्मा गांधी की प्रेरणा से बैरिस्टर और डाक्टर मणिलाल अपनी पत्नी श्रीमती जयकुमारी देवी के साथ मौरिशस पहुंचे। वे स्वयं आर्यसमाजी नहीं थे, पर आर्य समाज से सर्वथा अपरिचित भी नहीं थे। सी० एफ० एण्ड्रुज बाद में जिस निर्णय पर

पहुँचे थे, उसी निर्णय पर श्री मणिलाल भी पहुंचे कि प्रवासी भारतीयों की रक्षा आर्यसमाज ही कर सकता है। महात्मा गांधी ने भी उनको कुछ ऐसा ही परामर्श दिया होगा। अन्ततः श्री मणिलाल ने अपने निवास स्थान पर ही वैदिक विचारधारा के लोगों को बुलाकर १ अप्रैल, १९१० को आर्य समाज की स्थापना कर दी। प्रारम्भ में काफी अर्से तक उनके घर पर ही नियमित रूप से साप्ताहिक सत्संग लगते रहे। इस समय जो लोग आर्य समाज के सदस्य बने, उनकी संख्या ४८ थी। उनमें से कुछ प्रमुख नाम ये हैं : सर्व श्री खेमलाल, गु० दलजित लाल, हरनाम सिंह, दामोदर रामदीन, तपसी, केहरसिंह, जगमोहन गोपाल, रामखेलावन, बुधन आदि।

भारत पर अंग्रेजों के आधिपत्य का प्रारंभ यदि सन् १७५७ से माना जाए तो उसके लगभग सवा सौ साल बाद, सन् १८७५ में, भारत में प्रथम आर्य समाज की स्थापना हुई। मौरिशस पर अंग्रेजों ने सन् १८१० में, अधिकार किया था। ठीक उसके १०० साल बाद, सन् १९१० में, वहां आर्य समाज की विधिवत् स्थापना हो गई।

आर्य समाज की स्थापना तो हो गई, सत्संग भी होने लगे, पर आर्य समाज के संगठन की वैधानिक रूपरेखा क्या है, यह कोई जानता नहीं था। किसी तरह काम चल रहा था। तभी श्री मणिलाल किसी काम से रंगून गए। रंगून में उस समय लाहौर से आए हुए, युवकोचित उत्साह से सम्पन्न, डा० चिरंजीव भारद्वाज वैदिक धर्म की दुन्दुभि बजा रहे थे। उनकी योग्यता, कर्मठता और संगठन-कुशलता ने सबको मुग्ध कर रखा था। श्री मणिलाल भी उनके सम्पर्क में आए और वे भी प्रभावित हुए। उनके सम्पर्क का सूत्र थे—श्री प्राणजीवन मेहता जो रंगून में निवास करते थे। श्री मेहता ने कभी छात्रवृत्ति के लिए गुरुकुल कांगड़ी को तीस हजार रुपए दान दिए थे। श्री मणिलाल का विवाह इन्हीं प्राणजीवन मेहता की लड़की से हुआ था। श्री मेहता डा० भारद्वाज के घनिष्ठ मित्र थे। उन्होंने ही मणिलाल और चिरंजीव भारद्वाज की भेंट करवाई। मणिलाल को लगा कि अगर यह व्यक्ति मौरिशस चला जाए तो वहां के प्रवासी भारतीयों का बहुत उपकार हो। उन्होंने और श्री मेहता ने डाक्टर साहब से आग्रह किया। डाक्टर साहब सहमत हो गए।

डा० भारद्वाज की कर्मठता

१९१२ में डा० साहब मौरिशस पहुंचे और श्री मणिलाल सुयोग्य हाथों में बागडोर सौंपकर मौरिशस से रवाना हो गए। उसके बाद महात्मा गांधी के परामर्श से श्री मणिलाल फिजी चले गए।

जो गोरे समझते थे कि भारत में केवल कुली और मजदूर ही होते हैं, डा० चिरंजीव भारद्वाज के आगमन से उनका पुनः भ्रम-निवारण हुआ। डा० भारद्वाज ने इंगलैंड में चार वर्ष तक शिक्षा प्राप्त करके न केवल डाक्टरी की उच्चतम डिग्रियां प्राप्त की थीं, प्रत्युत वे आर्यसमाज के विधि-विधान को भी अच्छी तरह समझते थे। वे पं० गुरुदत्त विद्यार्थी के शिष्य रह चुके थे और उन्होंने मिशनरी स्पिरिट उन्हीं से विरासत में पाई थी। वे सत्यार्थ प्रकाश का अंग्रेजी में अनुवाद कर चुके थे और पंजाब की प्रमुख समाज बच्छोवाली (लाहौर) के प्रधान और आर्य-प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री रह चुके थे। उन्हें बचपन से ही आर्यसमाज की लगन थी। आर्यसमाज के संस्थागत वैधानिक रूप के अलावा वे उसके व्यावहारिक कार्य-कलाप से भी भली भांति परिचित थे।

उनके आने से टापू में आर्यसमाज के काम को खूब बल मिला। कुशल चिकित्सक होने के नाते उनकी डाक्टरी भी खूब चली। वे अपनी चिकित्सा से लोगों के शारीरिक रोग दूर करते और आर्यसमाज के प्रचार द्वारा उनके मानसिक रोगों का निवारण करते। उनके उत्साह और कर्मठता से विधर्मी और पोंगापंथी समझने लगे कि हमारे पांवों के नीचे से जमीन खिसकती जा रही है। उनसे लोगों ने कहा कि आप चिकित्सा का ही कार्य करें, आर्य समाज में न जावें। डा० साहब ने कहा—"अन्य मतावलम्बी अपने-अपने धर्मस्थानों में जाते हैं, ईसाई गिरजों में और मुसलमान मस्जिदों में, तो मुझे आर्यसमाज मन्दिर में जाने से कौन रोक सकता है?" फिर विरोधियों ने कहा : "आप आर्य समाज में जाएं बेशक, पर वहाँ जाकर खण्डन-मण्डन न करें।" डा० भारद्वाज ने कहा—"जिस बात को मैं सत्य और ठीक समझता हूं, उसका प्रचार

करना मेरा धर्म है। सत्य को ग्रहण करना और असत्य को छोड़ना और औरों को इस काम के लिए प्रेरित करना प्रत्येक आर्यसमाजी का मुख्य कर्तव्य है। मैं अपने कर्तव्य से विमुख नहीं हो सकता।" जब इस तरह विरोधियों की दाल नहीं गली, तब उन्होंने यह भी धमकी दी कि हम मरीजों को चिकित्सा के लिए आपके पास नहीं आने देंगे और आपकी दुकान के आगे धरना देंगे। डा० साहब ने निर्भीकतापूर्वक उत्तर दिया—"ऐसी धमकी से कायर लोग ही डरा करते हैं। मैं हजारों मील दूर से जनता के उपकार के लिए ही इस देश में आया हूं। मुझे ईश्वर पर पूर्ण विश्वास है। मुझे अपना कर्तव्य पालन करना है, सुख या दुःख मुझे अपने कर्तव्यपथ से डिगा नहीं सकते। वैदिक धर्म के प्रचार के लिए मुझे जो भी कष्ट उठाने पड़ेंगे, मैं सहर्ष उठाऊंगा और आर्य समाज की सेवा में निरन्तर प्रयत्नशील रहूंगा।"

इस वीरवाणी के आगे विरोधियों की पेश न चली। फिर भी अनपढ़ जनता को बरगलाना आसान था। लोगों से कहा गया कि यह नास्तिक है और छिपा हुआ क्रिस्तान है। यह हमें धर्मभ्रष्ट करने के लिए ही आया है। तभी तो अंग्रेजों ने इसे विलायत में पढ़ाकर डाक्टर बनाया है। इसलिए उसके पास दवा-दारू के लिए कोई न जाए। इस आन्दोलन का असर भी हुआ। धीरे-धीरे उनके पास आने वाले मरीजों की संख्या घटने लगी। उनके सामने आर्थिक समस्या भी उपस्थित हुई। नीतिकारों ने 'अर्थस्य पुरुषो दासः' कहा है, पर संकल्पवान् और दृढ़चरित्र व्यक्ति को अर्थ के बल पर भी झुकाया नहीं जा सकता। यह कर्मवीर नररत्न अपने कर्तव्य से विमुख नहीं हुआ। जिस तरह प्रवाह के उल्टी ओर तैर कर सिंह नदी पार करता है, उसी प्रकार यह पुरुष-सिंह भी प्रवाह में बहने के बजाय उससे उल्टी दिशा में तैरने को कटिबद्ध हो गया। उन्होंने पोर्टलुई में रहना छोड़ दिया और वाक्वा में डेरा जमाया। वाक्वा में आकर वे और उनकी पत्नी आर्यसमाज की सेवा में सर्वात्मना समर्पित हो गए।

डाक्टर चिरंजीव भारद्वाज दिन में डाक्टरी करते, सायंकाल लोगों को हिन्दी पढ़ाते और रात को दूर-दूर ग्रामों में जाकर व्याख्यान देते। बहुत बार वे दस-दस और पन्द्रह-पन्द्रह मील दूर पैदल चल कर जाते और पैदल ही रात को वापिस लौटते। अनेक बार उनकी पत्नी श्रीमती सुमंगली देवी भी उनके साथ होती। सुमंगली देवी भी स्त्री-शिक्षा और समाज-सुधार के सम्बन्ध में भाषण देती। किसी हिन्दू स्त्री को सबके सामने बिना किसी पर्दे के धारावाही भाषण देते देखना मौरिशस-वासियों के लिए उस समय एक अनोखी घटना थी। श्रीमती सुमंगली देवी प्रथम महिला थी जिसने मौरिशस की महिलाओं में शिक्षा के प्रति अनुराग पैदा किया। कन्याओं और महिलाओं को पढ़ाना उन्होंने अपनी दिनचर्या का अंग बना लिया था।

आर्य परोपकारिणी सभा की स्थापना

डाक्टर साहब जब बाल-विवाह और मिथ्या जाति-अभिमान एवं छूत-छात से होने वाले सामाजिक अधः पतन का सजीव चित्र खींचते और अन्धविश्वास तथा पाखण्ड के खण्डन में युक्तियुक्त और सप्रमाण विवेचन करते, तो श्रोताओं को अपनी भूलों का ज्ञान होता और वे बिना पश्चात्ताप किए न रहते। इस प्रकार इस दम्पति के प्रबल पुरुषार्थ से महिलाओं और पुरुषों में नवीन जागृति आई, कुरीतियों और अंधविश्वासों की दीवार ढहने लगी, स्थान-स्थान पर आर्यसमाज और उनके साथ ही हिन्दी पाठशालाएं खुलने लगीं। डाक्टर साहब ने एक 'आर्य पत्रिका' भी निकाली जिसने आर्य समाज के प्रचार में अच्छा योग दिया।

जब मौरिशस के विभिन्न प्रान्तों में आर्यसमाजों की स्थापना हो गई, तब उनके संगठन का प्रश्न पैदा हुआ। डा० चिरंजीव भारद्वाज ने कतिपय प्रमुख आर्य सज्जनों से परामर्श करके आर्य प्रतिनिधि सभा मौरिशस के नाम से रजिस्ट्री करवाने के लिए प्रार्थना पत्र भेजा। परन्तु सरकार ने उस नाम की अनुमति नहीं दी। तब डाक्टर जी ने 'प्रतिनिधि' नाम छोड़कर 'आर्य परोपकारिणी सभा' के नाम से रजिस्ट्री करवाई। यह सभा सन् १९१२ में बनी और १७ नवम्बर, १९१३ को इसकी रजिस्ट्री हुई। रजिस्ट्री में निम्न महानुभावों के नाम दर्ज किए गए—सर्वश्री प्रभु भोला, दुर्गाप्रसाद भिखारी, केहरसिंह, रामजीलाल, खेम चंद, माधोलाल, हरवंश, रामेश्वर, शिवनाथ शिवभरण, पांचुप्रसाद तथा राम अवध रघुनाथ।

संन्यासी मण्डल

मौरिशस में आर्यसमाज
के अंकुर को पल्लवित
करने वाले (स्वर्गीय)

स्वामी स्वतंत्रानन्द जी

मौरिशस में आर्यसमाज
के संगठन को दृढ़ करने वाले
(स्वर्गीय)

स्वामी ध्रुवानन्द जी

आर्यसमाज के प्रचार में रत
मौरिशस में ही दिवंगत,
स्वामी अभेदानन्द जी

महात्मा आनन्द स्वामी जी

स्वामी ब्रह्मानन्द जी दण्डी, एटा

स्वामी सत्यप्रकाश जी, प्रयाग

स्वामी व्रतानन्द जी, चित्तौड़

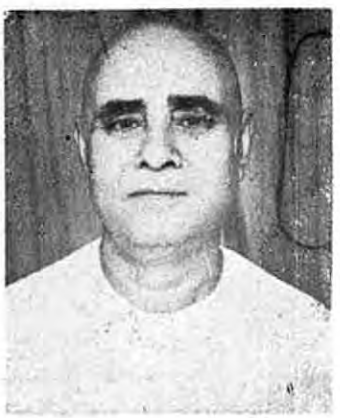

स्वामी दिव्यानन्द जी, मध्यप्रदेश

सार्वदेशिक सभा के अधिकारी

सार्वदेशिक सभा के प्रधान, जिन्होंने मौरिशस में शिक्षा-सम्मेलन की अध्यक्षता की

डा० दुःखनराम जी
पटना

सार्वदेशिक सभा के महामंत्री, जिनके अथक प्रयत्न से महासम्मेलन सफल हुआ

श्री ओम्प्रकाश त्यागी
संसत्सदस्य

सार्वदेशिक सभा के उपप्रधान
श्री रामगोपाल शालवाले

सार्वदेशिक सभा के कोषाध्यक्ष
श्री सोमनाथ मरवाहा

१८०० रु० में आर्य परोपकारिणी सभा के नाम से भूमि खरीदी गई। उसी समय आर्यवीर काशीनाथ को विद्याध्ययन के लिए भारत भेजा गया, ताकि मौरिशस की जनता को स्थायी रूप से भविष्य में एक प्रचारक मिल जाए। डा० साहब की सात्विक साधना और तपस्या रंग लाई। आर्य समाज का कार्य सुचारु रूप से चलने लगा। डाक्टर साहब मौरिशस में केवल ढाई साल रहे पर इस अल्प अवधि में ही उन्होंने आर्य समाज की धूम मचा दी। सैनिकों द्वारा दिए सत्यार्थप्रकाश के माध्यम से खेमलाल जैसे कर्मवीरों ने जो बीज मौरिशस की भूमि में डाला, बैरिस्टर मणिलाल ने उसे अंकुरित किया, तो डा० चिरंजीव भारद्वाज ने उसे पौधे के रूप में लहलहा दिया। उसकी शाखा-प्रशाखाएं फैलने लगीं। आर्य परोपकारिणी की स्थापना द्वारा उस पौधे के चारों ओर आलवाल और ईंटों का घेरा खड़ा कर दिया। पर पौधा अभी छोटा था, उसे धूप, प्रकाश और हवा की जरूरत थी, उसे सींचने के लिए पानी और खाद देने वाला माली दरकार था। इतने छोटे पौधे को कहीं आवारा 'पशु' चर न जावें, इसकी एहतियात भी करनी थी। डा० साहब अपने हिस्से का काम कर चुके थे। अब उनके मन में भारत वापिस आने की इच्छा हुई।

आर्यजनों ने उनसे आग्रह किया कि आप जाने से पहले किसी सुयोग्य आर्य संन्यासी को यहां बुला दें, जो आर्य समाज के इस बढ़ते पौधे के लिए आवश्यक उपादान जुटा सके।

स्वामी स्वतंत्रतानन्द का आगमन

डाक्टर साहब के आग्रह से और पंजाब प्रतिनिधि सभा के अनुग्रह से आर्यसमाज के वीतराग, तपस्वी, धुन के धनी, यतिवर श्री स्वामी स्वतंत्रतानन्द जी महाराज सन् १९१४ में मौरिशस पहुँच गए। उसके ६ माह बाद डा० चिरंजीव भारद्वाज भी भारत वापिस आ गए। भारत लौटने के थोड़े समय बाद ही ८ मई, १९१५ को डाक्टर साहब का स्वर्गवास हो गया। डाक्टर चिरंजीव भारद्वाज के निधन से आर्य समाज एक सिद्धहस्त लेखक, ओजस्वी वक्ता और कर्मठ पथप्रदर्शक से वंचित हो गया। क्या परमात्मा ने इस नर-पुंगव को मौरिशस में आर्यसमाज के इतिहास की यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए ही भेजा था और इसलिए उस भूमिका के पूरा होते ही अपने पास बुला लिया ?

स्वामी स्वतंत्रतानन्द न केवल विद्वान् थे, प्रत्युत कष्ट-सहिष्णु और संगठन में कुशल भी थे। उनके प्रवचन इतनी सरल भाषा में होते थे कि भोले भाले अनपढ़ लोग भी बड़ी आसानी से समझ लेते। निःस्पृह और वीतराग इतने कि सदा केवल एक बार भोजन करते थे, सो भी दिन के १२ बजे से पूर्व, यदि कालातिपात हो जाता तो फिर अगले दिन ही भोजन की बारी आती। अपने पास एक काली कामरी रखते, उसी को ओढ़ते, सदा तख्त पर ही सोते, कभी किसी गृहस्थी के घर के अन्दर नहीं सोते। १५-२० मील पैदल चल कर समाजों में प्रचार करना उनके जैसे बलिष्ठ और ब्रह्मचर्य से सुगठित शरीर वाले व्यक्ति के लिए बहुत ही मामूली बात थी। उनके तप-त्याग, सम-दृष्टि, न्यायप्रियता और समाज-संगठन के लिए अहर्निश कठिन परिश्रम के सामने बड़े-बड़े कट्टर पौराणिक भी श्रद्धा से नत होते थे। उनके उपदेशों की सरलता और हार्दिकता भी लोगों के मन को छूती थी। वे लोगों को समाज-सुधार और संगठन का महत्व समझाते। उन्हीं के उपदेशों से प्रभावित होकर पं० शंकर, पं० वासुदेव और पं० जगनन्दन जैसे युवक आर्य समाज की सेवा में लग गए।

इन्हीं दिनों पं० काशीनाथ भारत से विद्याध्ययन करके लौट आए। वे भी आर्य समाज के प्रचार-कार्य में जुट गए। अन्य अनेक युवक भारत के गुरुकुलों में तथा अन्य शिक्षा संस्थाओं में विद्याध्ययन के लिए आने लगे। आर्य समाजों में हिन्दी की पढ़ाई नियमपूर्वक होने लगी। एक आर्यन वैदिक विद्यालय खोला गया। इन्हीं दिनों अचानक स्वामी जी को नेत्र रोग हो गया। उन्हें दिखना एकदम बन्द हो गया। वे चिकित्सा के लिए भारत आना चाहते थे। पर तब तक विश्व युद्ध प्रारम्भ हो चुका था, इसलिए जहाज मिलना मुश्किल हो गया, और यों भी उन दिनों समुद्री मार्ग खतरे से खाली नहीं रह गये थे। हवाई जहाजों का तब तक चलन नहीं हुआ था। पर प्रभु की भी कैसी विचित्र लीला है ! लगभग दो सप्ताह बाद बिना किसी चिकित्सा के उनकी आंखों में रोशनी आ गई, उन्हें दिखना

प्रारम्भ हो गया और पीड़ा जाती रही।

पर भारत तो उन्हें लौटना ही था। २० नवम्बर, १९१६ को वे वहां से भारत के लिए रवाना हो गए। यहां आने के बाद उन्होंने अपनी आखें डाक्टरों को दिखाईं। डाक्टरों ने भी प्रभु को धन्यवाद दिया कि स्वामी जी दृष्टि-हीन होने से बच गए। पर उसके बाद उनकी आंखों पर ऐनक सदा के लिए लग गई।

हिन्दू विवाह की वैधता

हिन्दी पाठलालाओं का प्रसार, अनेक आर्य समाजों के लिए भूमि का क्रय और आर्यसमाज के संगठन का विस्तार स्वामी जी के विशेष कार्यों में गिने जा सकते हैं। परन्तु मौरिशसवासियों के लिए एक अन्य महत्वपूर्ण योगदान, जिसका श्रेय स्वामी जी को मिलना चाहिए, और भी है। इसका सिद्धान्तरूप में प्रारम्भ यद्यपि श्री मणिलाल ने किया था, पर व्यावहारिक स्तर पर उसका विस्तार स्वामी जी ने किया। पहले केवल ईसाई पदारियों को ही विवाह पंजीकृत (रजिस्टर्ड) करने का अधिकार था। जो विवाह पंजीकृत न होता, उसे वैध न माना जाता। इस प्रकार हिन्दू विधि से या वैदिक विधि से हुए समस्त गैर पंजीकृत विवाह अवैध माने जाते थे। और विवाह अवैध होने पर सन्तान भी अवैध मानी जाती और सन्तान को उत्तराधिकार से वंचित होना पड़ता। श्री मणिलाल ने वैधानिक संघर्ष करके सरकार से यह मनवाया कि हिन्दू पण्डितों द्वारा करवाया गया विवाह भी पंजीकृत हो सकता है, और वह उसी तरह वैध माना जाए, जिस तरह पादरियों द्वारा कराया गया सिविल मैरिज। स्वामी जी ने लोगों को अपनी सम्पत्ति सुरक्षित रखने के लिए अदालत में विवाह की रजिस्ट्री करवाने को तैयार किया। इससे पहले इस काम के लिए अदालत में जाना लोग बुरा समझते थे। स्वामी जी के ही आंदोलन का यह परिणाम हुआ कि पण्डितों को भी सरकार की ओर से एक रजिस्टर दिया जाने लगा और उनसे कहा गया कि वे जो भी विवाह करायें, उसे अपने रजिस्टर में दर्ज करें और उस विवाह की एक रसीद कचहरी में भेज दें, बस इतने मात्र से वह विवाह वैध मान लिया जाएगा। हिन्दुओं के पारिवारिक जीवन की सुरक्षा के लिए यह नियम कितना उपयोगी और आवश्यक था, इसकी कल्पना ही की जा सकती है।

यह हुआ मौरिशस में आर्य समाज का शैशवकाल।

□

"जो पक्षपात रहित न्याय, सत्य का ग्रहण, असत्य का परित्याग, पांचों परीक्षाओं के अनुकूल आचरण, ईश्वराज्ञा पालन, परोपकार करना रूप धर्म और जो इससे विपरीत, वह अधर्म कहाता है, क्योंकि जो सबके अविरुद्ध वह धर्म और जो परस्पर विरुद्धाचरण सो अधर्म।"

"जो विद्या, न्याय, जितेन्द्रियता, शौर्य, धैर्य आदि गुणों से युक्त होकर अपने पुत्र के समान प्रजा के पालन में श्रेष्ठों की यथायोग्य रक्षा और दुष्टों को दण्ड देकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति से युक्त होकर, अपनी प्रजा को कराकर, आनन्दित रहता और सबको सुख से युक्त कराता है, वह राजा कहाता है।"

"गो आदि पशुओं का नाश होने से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है।"

—ऋषि दयानन्द

कार्य का विस्तार

आर्यसमाज के शैशवकाल में लोगों को किस प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था, इससे भारतवर्ष के आर्यों की पुरानी पीढ़ी सुपरिचित है। मौरिशस में भी उसी प्रकार की कठिनाइयां थीं। उस समय के वातावरण का कुछ आभास देने के लिए हम यहां आर्यसमाज की हीरक जयन्ती पर प्रकाशित स्मारिका में से कुछ आर्यसमाजियों के निजी संस्मरण प्रस्तुत करते हैं। श्री मोती तोरल विद्यावाचस्पति, जो आगे जाकर आर्य सभा के मंत्री बने, लिखते हैं :—

कुछ वैयक्तिक संस्मरण

"मुझे बचपन में जिस प्राथमिक पाठशाला में भर्ती कराया गया उसमें अंग्रेजी और फ्रेंच पढ़ाई जाती थी। रोमन कैथोलिक सरकारी सहायता से उस पाठशाला का संचालन करते थे। उस पाठशाला में बच्चों के कोमल मन पर ईसाइयत की गहरी छाप डालने का पूरा प्रयत्न किया जाता था। मैं भी अछूता कैसे रहता? सवेरे शाम ईसाई मतानुसार प्रार्थना करने लगा। घर पर संध्या-हवन का कोई नाम भी नहीं जानता था। कभी-कभी सत्यनारायण की कथा हो जाती या महावीर स्वामी की ध्वजा फहराई जाती। पर उससे हमारे मन पर हिन्दुत्व की कोई छाप नहीं पड़ती। पड़ती भी, तो ईसाइयत की छाप इतनी गहरी थी कि उसके सामने वह सब धुल-पुंछ जाती। ऐसे ही समय श्री मेहता जैमिनि के व्याख्यान मेरे घर के सामने ही सप्ताह भर तक होते रहे। मेरे घर के सब लोग पौराणिक थे, इसलिए मुझे इन व्याख्यानों को सुनने की अनुमति नहीं थी। पर मैं लुक-छिपकर एक दिन व्याख्यान सुनने पहुंच गया। फिर मेरी प्यास ऐसी बढ़ी कि मैं रोज ही कहीं एकान्त कोने में बैठकर व्याख्यान सुनने लगा। श्री मेहता जैमिनि ने बताया कि वैदिक धर्म ही मानव धर्म है, बाकी सब तो मनुष्यकृत मन-गढ़न्त मतमतान्तर हैं। पुराण, कुरान और बाइबिल आदि ग्रन्थ पूर्वापर विरोधी प्रसंगों से भरे पड़े हैं, इसलिए वे ईश्वरकृत नहीं हो सकते। मनुष्य की तरह ईश्वर अपनी रचना में हेरफेर नहीं करता। जितनी ईश्वरकृत वस्तुएं हैं, सब सृष्टि के आदि में बनी हैं और एक बार में ही ऐसी पूर्ण बनी हैं कि उनमें परिवर्तन की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस कसौटी पर केवल वेद ही खरा उतरता है।

"उसके बाद एक दिन उन्होंने इस विषय पर व्याख्यान दिया कि पावन वैदिक धर्म का ह्रास क्यों हुआ। उन्होंने बताया कि किस प्रकार स्वार्थपूर्ति की खातिर यज्ञों के नाम पर पशुहिंसा, मूर्तिपूजा तथा अन्य ऐसी पौराणिक मान्यताएं प्रचलित हुईं, जिनसे वेद जैसे सद्ग्रन्थों का प्रभाव जनता के हृदय-पटल पर से मिट गया, लोग एक ईश्वर को छोड़कर नाना देवी-देवताओं की उपासना करने लगे, भूत-पिशाच की पूजा में जा पड़े। पर मसानों या पाषाण प्रतिमाओं के आगे सिर पटकने से मुक्ति नहीं मिलती।

"फिर एक दिन उन्होंने जाति-पांति की चर्चा करते हुए कहा कि मनुष्य-जाति केवल एक है, उससे भिन्न वृक्ष-वनस्पति और पशु-पक्षियों की जातियां हैं। मनुष्य-जाति के केवल दो ही भेद हैं :—एक श्रेष्ठ और सदाचारी और दूसरे दुष्ट और दुराचारी, एक संयमी, परोपकारी और धर्मात्मा एवं दूसरे विलासी, स्वार्थी और पापात्मा। भक्ष्या-

भक्ष्य का विचार न करने वाले, व्यभिचारी और सज्जन-द्रोही लोग अनार्य हैं और सात्विक खानपान, सदाचार और सद्गुणों से प्रेम करने वाले आर्य। बस यही दो भेद हैं। जन्म-जाति के नाम पर और जितने भी भेद हिन्दुओं में प्रचलित हैं, वे सब गलत और धर्म-विरुद्ध हैं। जब उन्होंने बुलन्द आवाज में कहा कि रंग-भेद और जाति-भेद तथा ऊंच-नीच का प्रपंच रचने वाले देश और मानवता के घातक हैं, तो मुझे रोमांच हो आया।

"फिर उन्होंने एक दिन व्याख्यान में समझाया कि जीवित माता-पिता का आदर न कर जो लोग उनके मरने पर पिण्डदान और श्राद्ध आदि करते हैं, वे धर्म का गला घोंटते हैं। इसी प्रकार एक दिन उन्होंने बाल-विवाह और अनमेल विवाह की हानियों तथा ब्रह्मचर्य के महत्व पर प्रकाश डाला। उनके व्याख्यानों ने मुझे इतना झकझोर दिया कि उसी दिन से वैदिक धर्म की श्रेष्ठता का मैं कायल हो गया और पारिवारिक जनों के विरोध के बावजूद आर्य समाज का सेवक बन गया।"

डा० शिवगोविन्द लिखते हैं :—

"आरंभ में कट्टरपन्थी लोग आर्यसमाजियों का बहिष्कार करते थे और पंच लोग उन्हें जात-बिरादरी से बाहर कर देते थे। एक बार मैंने अपनी युवावस्था में वैदिक धर्म की सत्यता से प्रभावित होकर अपने गांव में आर्यसमाजी पण्डित को बुलाकर प्रचार करवाया, तो सारी बिरादरी हम से नाराज हो गई। मेरे पिता जी को बुलाकर पंचों ने डांटा। पिता जी बहुत सीधे साधे थे। उन्होंने पंचों को अकारण कुपित न करने के अभिप्राय से कहा—'क्या करूं, मेरा पुत्र बड़ा उद्दण्ड है। वही इस प्रकार के बखेड़े करता रहता है। मैं समझाता हूं, तब भी नहीं मानता।" पंचों ने उनके सीधेपन का लाभ उठाते हुए उन्हें जाति से बहिष्कृत करने की धमकी दी और कहा कि तुम दस ब्राह्मणों को जिमाओ और उन्हें सबा-सवा रुपया दक्षिणा दो, तब तुम्हें माफ किया जा सकता है। किन्तु मेरे मन पर इस घटना की यह प्रतिक्रिया हुई कि मैं तन-मन-धन से आर्यसमाज की सेवा में जुट गया।"

श्री मूलशंकर रामधनी का संस्मरण सुनिए :

"मेरा जन्म एक पौराणिक परिवार में हुआ था। हमारे घर में प्रतिवर्ष पशुबलि की प्रथा थी। भूत-प्रेत की पूजा भी होती थी और उन्हें प्रसन्न करने के लिए शराब पीकर नाचना हमारे परिवार का जैसे दैनिक कार्य हो गया था। मैं जब पांच साल का हुआ, तब मेरे पिता जी चल बसे। अल्पायु में ही अपनी माता और दो बहिनों के पालन का भार मुझ पर आ पड़ा। मैंने हिम्मत नहीं हारी। दिन भर मजदूरी करता, शाम को दर्जी का काम सीखता, जिससे आमदनी बढ़ाने का कोई और जरिया हाथ आ सके। दैवयोग से श्री लालमन हरकू से मेरी भेंट हुई। वे विद्वान थे—उनसे मैंने हिन्दी पढ़नी शुरू की। वे थे कट्टर पौराणिक, परन्तु बचपन में मुझे उन्होंने जो बाल-शिक्षा की पुस्तक पढ़ाई, उसमें आर्य समाज के सिद्धान्त सार रूप से दिए हुए थे। उसी पुस्तक से मेरे मन में आर्य समाज के प्रति श्रद्धा अंकुरित हुई।

"जब मैं कुछ बड़ा हो गया और हिन्दी का मुझे साधारण ज्ञान हो गया, तब मेरा परिचय श्री लक्ष्मैया वितावाड़ू से हुआ। वे आर्य समाज के कार्यकर्त्ता थे। कभी-कभी उनसे आर्य समाज के बारे में बात होती रहती। एक दिन उन्होंने मुझे 'दयानन्द चित्रावली' पढ़ने को दी। उस पुस्तक में मेरा मन ऐसा लगा कि रात के आठ बजे से बारह बजे तक उसे ही पढ़ता रहा और उसे पूरा करके ही दम लिया। तभी मेरे मन में आया कि आर्यसमाज की छत्रछाया में रहकर मुझे उसी की सेवा में अपना जीवन लगाना चाहिए।

"कुछ अर्से बाद मेरी बहन के विवाह का प्रसंग आया। विवाह के लिए जिस परिवार में बात चली, वह पौराणिक था। उन्होंने खूब दान-दहेज मांगा। हमारा परिवार वैसे ही गरीब था, सिर्फ मैं ही कमाने वाला, वह भी किशोरावस्था में। उस विषम परिस्थिति में मेरे मन की गति आप समझ सकते हैं। तब मुझे आर्य समाज के सिद्धान्तों का ख्याल आया। मैंने अपनी माता जी से वैदिक रीति के विवाह की बात कही, जिसमें जाति-बन्धन और दहेज-बन्धन नहीं होता। शुरू में मेरी माता जी पौराणिक परम्परा से निकलने को तैयार नहीं हुईं। पर जब मैंने अच्छी तरह समझाया तो वे समझ गईं। अन्त में मेरी बहन की शादी एक आर्यसमाजी परिवार में हुई। परिवार के अन्य लोग

रुष्ट हुए, पर मैं पोंगापंथी परिवार की एक आसुरी इच्छा पूरी करने से बच गया।

"इससे आर्य समाज के प्रति मेरी लगन और बढ़ गई। मैंने अपनी पढ़ाई जारी रखी और वैदिक धर्म के सिद्धान्तों के अनुसार अपने जीवन के निर्माण में लगा रहा। आज मैं यदि एक सरकारी विभाग में हिन्दी अध्यापन के प्रतिष्ठित पद पर काम कर रहा हूं, तो इसका श्रेय मैं सिवाय आर्य समाज के और किस को दूं ?

आर्यसमाज की बदौलत मैंने केवल अपने ही जीवन का निर्माण नहीं किया, बल्कि अनेक साथियों के जीवन में भी सुधार का बीज बोया। जिस परिवार में कभी पशुबलि को पुण्य का कार्य समझा जाता था, आज उस परिवार में सबके सब निरामिष-भोजी हैं और मांसाहार को कब की तिलांजलि दे चुके हैं। हमारे परिवार से प्रभावित होकर मेरे चाचा और चचेरे भाई भी मांसाहार छोड़ चुके हैं। इसी प्रकार हमारे परिवार में शराब पीना भी नित्य-कर्म था, पर अब सारे परिवार में कोई उसके पास भी नहीं फटकता। हम जिस गांव में रहते हैं, उस गांव में अब से लगभग चार साल पहले मेरे चाचा और चचेरे भाइयों ने मिलकर आर्य समाज की स्थापना की और फिर एक वैदिक पाठशाला भी खोल दी जिसमें सैंकड़ों बच्चे शिक्षा प्राप्त करते हैं। मैं इस समस्त जीवनदायी परिवर्तन के लिए आर्य समाज के जितने भी गुण गाऊं, उतने ही थोड़े हैं।"

उपरोक्त संस्मरणों से दो बातें स्पष्ट होती हैं। प्रथम तो यह कि उन्हें उस समय किस प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था, और द्वितीय यह कि आर्य समाज ने उनके जीवन में किस प्रकार परिवर्तन किया।

शास्त्रार्थों का युग

जैसे भारत में आर्य समाज का प्रारम्भिक युग शास्त्रार्थों का युग रहा, वैसे ही मौरिशस में भी। इन शास्त्रार्थों के द्वारा आर्य समाज का जितना प्रचार हुआ, उतना शायद सैंकड़ों व्याख्यानों से भी न हो पाता। शास्त्रार्थ में प्रतिपक्षी की निर्बलता और वैदिक धर्म की सबलता खूब निखर कर सामने आती है। मौरिशस की आम जनता को भी इन शास्त्रार्थों ने आर्य समाज की ओर अनुरक्त करने में बहुत बड़ी भूमिका अदा की है। इन शास्त्रार्थों को जनता आज भी याद करती है। आर्य समाज के इतिहास की कड़ी तो वे हैं ही। कुछ प्रमुख शास्त्रार्थों का संकेत यहां उपयोगी होगा—

१२ नवम्बर १९११ को मध्यान्ह बारह बजे माहेबर्ग में पौराणिक पण्डित श्री मेघवर्ण का आर्योपदेशक पं० जगन्नाथ से 'ईश्वर के स्वरूप' पर शास्त्रार्थ हुआ। लाल-माटी में सन् १९३३ में पौराणिकों के मूर्धन्य संस्कृतज्ञ पं० जयसुखराम और आर्यसमाज के पं० वेणीमाधव के मध्य शास्त्रार्थ हुआ। यहां भी विषय घूम फिर कर वही 'अवतारवाद' ही था। वाक्वा में २० अप्रैल, १९३४ को पौराणिकों की ओर से पं० शिवशंकर पाठक, पं० राधा-कृष्ण शास्त्री, पं० देवदत्त आदि अनेक विद्वान् शास्त्रार्थ-महारथी बन कर आए। आर्य समाज की ओर से केवल दो ही विद्वान् थे—पं० वेणीमाधव और पं० काशीनाथ। लालमाटी और वाक्वा के शास्त्रार्थों में इतनी भीड़ इकट्ठी हो गई थी कि पुलिस की व्यवस्था करनी पड़ी थी।

कभी-कभी ईसाइयों से भी शास्त्रार्थ का अवसर आ जाता था। ईसाई-धर्म-प्रचारिका मिस वाजुबेल हारमो-नियम पर हिन्दी में भजन गा कर ईसाइयत का प्रचार किया करती थी। वह स्थान-स्थान पर जाकर ईसा-गौरवगान करती। उसके मधुर कण्ठ, श्वेत वर्ण, और हिन्दी में भजन —इन सब से प्रभावित होकर अनेक हिन्दू ईसाई बन गए थे। एक बार वह यू न्योन पार्क में आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में स्वयं पहुँच गई। उसने वहां यज्ञ का खण्डन करना प्रारंभ कर दिया और फिर स्वयं ही आर्य समाजियों को शास्त्रार्थ के लिए ललकारने लगी। आर्यजनों ने चुनौती स्वीकार कर ली। तारीख तय हो गई। यह यूरोपीय गौरांगना अपने साथ अनेक ईसाई महिलाओं को लेकर नियत तिथि पर शास्त्रार्थ के लिए पहुंची। आर्य समाज की ओर से पं० काशीनाथ थे। पं० काशीनाथ ने बाइबिल और ईसामसीह के वचनों में ऐसी शंकाएं कीं कि मिस महोदया को उनका जवाब देते न बना। अन्त में इस घटना से वह इतनी हताश-निराश हो गई कि मौरीशस में रहना उसे दूभर लगा और कुछ समय बाद वह सदा के

लिए यूरोप वापिस चली गई। इस ईसाई-प्रचारिका का प्रिय भजन यह था :—

क्या मन भूला रे संसारा,
ईसामसीह मेरा प्राण बचैया,
नदिया गहरी नाव पुरानी,
डूब रहे मंझधारा,
ईसामसीह मेरा प्राण बचैया।

सन् १९७२ में प्रकाशित "आर्य सभा मौरिशस" के इतिहास में इन सब शास्त्रार्थों का रोचक वर्णन दिया गया है।

आर्य समाज का यौवन-काल

काल-विभाग की दृष्टि से सन् १९११ से सन् १९२५ तक आर्यसमाज का शैशवकाल कहा जा सकता है तो १९२५ के बाद यौवन काल। १९२५ में वहां श्री मेहता जैमिनि और १९२६ में स्वामी विज्ञानानन्द का पहुंचना बहुत लाभदायक रहा। मेहता जैमिनि ने वहां आर्य कुमार सभाओं की नींव डाली, जिससे किशोरों में आर्यसमाज का प्रचार किया जा सके। इन आर्य कुमार सभाओं की बदौलत भविष्य में आर्यसमाज को बहुत अच्छे युवक कार्यकर्ता मिले जिनमें से कइयों ने अपने कर्तव्य तथा कर्तृत्व से मौरिशस के सामाजिक और राजनैतिक जीवन को दिशा दी। सच तो यह है कि आज वहां राजनैतिक और सामाजिक कर्णधारों की जितनी प्रौढ़ पीढ़ी है, वह उस समय की आर्यकुमार सभाओं की ही देन है। स्वामी विज्ञानानन्द ने वार्षिकोत्सवों पर नगरकीर्तनों की प्रथा प्रारंभ की।

दयानन्द जन्म शताब्दी

सन् १९२५ में दयानन्द जन्म शताब्दी मनाई गई। यह आर्य समाज की सामूहिक विशाल शक्ति का प्रथम प्रदर्शन था। भारत के आर्य समाज के इतिहास में जो स्थान मथुरा की दयानन्द जन्म शताब्दी का है, वही स्थान मौरिशस के इतिहास में इस समारोह का है। इस समारोह में एक दिन श्री जुगतराय त्रिवेदी ने अध्यक्षता की और दूसरे दिन वहां के प्रमुख धनपति श्री राजकुमार गजाधर ने। श्री मेहता जैमिनि के भाषणों ने इस शताब्दी के कार्यक्रम में चार चांद लगा दिए। वे अंग्रेजी और हिन्दी के कुशल वक्ता थे और उन्होंने देश-विदेश का खूब भ्रमण किया था। उनके भाषणों से शिक्षित नवयुवकों में जैसे नवजीवन का प्रवाह उमड़ पड़ा। इस समारोह में मौरिशस के बुद्धिजीवी, धनी और उच्च वर्ग ने बहुत अच्छा योग दिया। सन् १९२५ में ही आर्य परोपकारिणी सभा द्वारा गवर्नर को एक पत्र भेजकर मौरिशस के जिन स्कूलों में भारतीय बच्चे पढ़ते थे उनमें हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था करने की प्रार्थना की गई।

इस समारोह का एक सुखद परिणाम यह हुआ कि आर्यसमाजी और सनातनधर्मी दोनों समुदायों के प्रमुख जन परस्पर निकट आए और अब तक आर्य समाज के विरोध की जो लहर चल रही थी, वह मंद पड़ गई। तनाव भी कम हो गया। शिक्षा और कला-कौशल के विस्तार में इस सहयोग का बहुत अच्छा फल निकला। समस्त भारतीयों में राष्ट्रीय चेतना का उदय हुआ। आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में भी दोनों के सहयोग से अच्छी प्रगति हुई। इस सहयोग के दो उदाहरण दिए जा सकते हैं। पहले सनातनी बन्धु कन्याओं की शिक्षा के विरोधी थे, इसके बाद वे भी इस दिशा में आगे बढ़ कर हिस्सा लेने लगे। इसी प्रकार वे पहले 'नमस्ते' का विरोध किया करते थे और नाना सम्प्रदायों में बंटे भारतीय हिन्दुओं की तरह उनके भी पारस्परिक अभिवादन के संबोधन भिन्न भिन्न थे, जैसे राम-राम, जय-सीताराम, जय-राधेश्याम, पांय-लागन आदि। पर इसके बाद 'नमस्ते' आम जनता का समान अभिवादन-सम्बोधन बन गया।

इस सहयोग से राजनैतिक अधिकारों की प्राप्ति की ओर भी ध्यान गया। प्रवासी मजदूर सजग हुए, आन्दोलन चले, दमन हुआ जिससे राजनैतिक चेतना प्रखर हुई।

दयानन्द निर्वाण अर्धशताब्दी

सन् १९३३ में जैसे भारत में दयानन्द निर्वाण अर्ध-शताब्दी मनाई गई, वैसे ही मौरिशस में भी मनाई गई। यह समारोह भी खूब धूमधाम से हुआ। नगरकीर्तन में लगभग दस हजार नर-नारी जब शोभा-यात्रा पर निकले

तो राजधानी पोर्टलुई में धार्मिक भ्रातृभाव की छवि सजीव हो गई। निर्वाण अर्धशताब्दी पर सहयोग देने के लिए भारत से श्री कन्हैयालाल मिश्र भजनोपदेशक गए थे। उनका कंठ मधुर था और गायन की शैली भी। भारतीय स्वभाव से ही संगीत प्रेमी होते हैं। संगीत के माध्यम से कही गई बात हृदय पर सीधा असर करती है। इस अवसर पर श्री कन्हैयालाल मिश्र के अलावा पं० गयासिंह, प० काशीनाथ, पं० रामलखन, पं० देवशरण और फ्रेंच विद्वान डाक्टर लेविये के सुन्दर भाषण हुए।

सन् १९२५ से १९५० तक की अवधि में जहां दो विशाल समारोह हुए और आर्यसमाजी तथा सनातनी परस्पर निकट आए, वहां एक दुःखद बात यह हुई कि आर्य समाजियों में कुछ पारस्परिक वैमनस्य पैदा हो गया। कुछ सदस्यों ने सन् १९२७ में आर्य परोपकारिणी सभा से अलग होकर अपनी एक अलग संस्था आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम से रजिस्टर्ड करवा ली। दयानन्द निर्वाण अर्धशताब्दी दोनों सभाओं ने अलग अलग मनाई। फिर सन् १९३४ में रविवेद प्रचारिणी सभा भी अस्तित्व में आ गई। कैसी विचित्र विडम्बना है कि जब मौरिशस के सब भारतीय एकता के सूत्र में आबद्ध होकर राजनैतिक संघर्ष के लिए अग्रसर होने जा रहे थे, तब आर्य समाज अपने फूट के राजरोग से ग्रस्त होकर अन्दर ही अन्दर बिखरता जा रहा था। क्या विस्तार के साथ वस्तु का आन्तरिक बिखराव भी प्रकृति का नियम है!

भारत का स्वातंत्र्य-पर्व

इस बीच सन् १९४७ में भारत स्वतंत्र हो गया। दो सौ साल की दासता से मुक्ति के पश्चात् जितनी प्रसन्नता भारतवासियों को हुई, उससे कहीं अधिक प्रसन्नता प्रवासी भारतीयों को हुई। आखिर यह उनका भी तो सपना था। सन् १९४९ में भारत गणराज्य बना, उसका स्वनिर्मित संविधान लागू हुआ और ब्रिटिश सम्राट् द्वारा नियुक्त गवर्नर जनरल के स्थान पर प्रथम बार भारतीय जनता द्वारा निर्वाचित डा० राजेन्द्रप्रसाद प्रथम राष्ट्रपति बने। सन् ५० में जब भारत का प्रथम गणराज्य दिवस मनाया गया, तब मौरिशस के प्रवासी भारतीयों ने भी धूमधाम से इस गणराज्य दिवस को मनाने की तैयारी की।

उस समय मौरिशस में भारत सरकार की ओर से श्री धर्मयशदेव उच्चायुक्त के रूप में नियुक्त थे। मौरिशस वालों को इस अवसर पर श्री मणिलाल और स्वामी स्वतंत्रानन्द का स्मरण न आए, यह कैसे हो सकता था? इन दोनों महानुभावों ने ही तो उनमें धार्मिक और राजनैतिक चेतना का सूत्रपात किया था। तीसरे व्यक्ति थे डा० चिरंजीव भारद्वाज, पर उनका १९१५ में ही स्वर्गवास हो चुका था।

प्रवासी भारतीयों ने उक्त दोनों महानुभावों को पुनः प्रेमपूर्वक निमंत्रित किया। स्वामी जी ३ जनवरी, १९५० को वहां पहुंचे और मणिलाल १७ जनवरी १९५० को वहां पहुंचे। फिर २६ जनवरी, १९५० को भारत का पहला गणराज्य दिवस मौरिशस में कैसे मनाया गया, इसका विवरण स्वामी स्वतंत्रानन्द जी के श्रीमुख से ही सुनिए:

"मौरिशस सरकार ने भारतीय हाई कमिश्नर श्री धर्मयशदेव के कहने से २६ जनवरी को छुट्टी कर दी थी और मोटर बसों के अतिरिक्त ट्रक वालों को भी उस उत्सव में सम्मिलित होने वाले स्त्री पुरुषों को लाने ले जाने की खुली छूट दे दी थी। साथ ही सरकारी बैंड को 'जन मन' का राष्ट्रीय गीत गाने की आज्ञा दे दी थी और सरकार ने उस उत्सव को सफल बनाने के लिए हर प्रकार की सहायता दी थी। गवर्नर अपने सब साथियों सहित उस उत्सव में उपस्थित हुए थे।

"प्रातः काल हाई कमिश्नर के कार्यालय के आंगन में वैदिक रीति से हवन-यज्ञ किया गया जिसमें यजमान बने हाई कमिश्नर और उनकी पत्नी और मैं यज्ञ का ब्रह्मा बना। पं० सुखदेव, पं० लक्ष्मण विशारद और पं० जगनन्दन आदि मौरिशस वासी ही वेदपाठी थे। वेदमंत्रों की ध्वनि से आकाश गूंज रहा था। जनता मंत्रमुग्ध होकर सब दृश्य देख रही थी।

"यज्ञ के पश्चात् हाई कमिश्नर के दफ्तर पर ही भारतीय राष्ट्रीय ध्वज का आरोहण किया गया। कार्यालय के सामने गिरजे के मैदान में स्त्री-पुरुषों की भारी भीड़ थी। उसके पश्चात् चल समारोह वहाँ से ही आरंभ हुआ और घुड़दौड़ के मैदान में, जहां उत्सव का प्रबन्ध था, पहुंचा।

"अनुमान किया गया था कि उस उत्सव में पचास हजार से अधिक नर-नारी सम्मिलित हुए थे। इतना बड़ा मेला वहां इससे पहले और कब लगा होगा।

"इस अवसर पर श्री धर्मयशदेव, गवर्नर मौरिशस, श्री शिवसागर रामगुलाम (सदस्य गवर्नर काउन्सिल), श्री मणिलाल बैरिस्टर तथा मेरे भाषण हुए।"

सभाओं की एकता

अब से ३६ साल पहले जब स्वामी जी पहली बार मौरिशस गए थे, तब आर्यसमाज का शैशवकाल था। तब से अब तक इन ३६ सालों में आर्यसमाज के कार्य का खूब विस्तार हुआ था और वह देश का सर्व-प्रमुख जीवित-जागृत आन्दोलन बन चुका था। पर दैव-दुर्विपाक से अब उस आर्यसमाज में भी फूट पड़ गई थी। सन् १९१३ में डा० चिरंजीव भारद्वाज ने आर्य परोपकारिणी सभा की रजिस्ट्री कराई थी और तब से वही सभा काम करती जा रही थी। पर १९२७ में आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम से दूसरी सभा बन गई थी और रवि वेद प्रचारिणी सभा के नाम से एक तीसरी सभा भी १९३४ में बन गई थी। तीनों सभाएं काम आर्यसमाज का ही करती थीं। पर इस तरह आर्य समाज की शक्ति बिखर जाती थी। इसलिए इस बार स्वामी जी का मुख्य काम था इन सभाओं को मिलाकर एक करना। इसके लिए उन्हें कितने ही लोगों से मिलना पड़ा। नियमों में संशोधन के लिए साधारण सभा बुला कर स्वीकृति लेनी पड़ी। अन्त में नए नाम पर आपत्ति की गई। कोई अपना नाम छोड़कर दूसरी सभा का नाम स्वीकार करने को तैयार नहीं था। तब यह तय हुआ कि 'प्रतिनिधि' और 'परोपकारिणी' इन दोनों भागों को छोड़कर शेष नाम 'आर्यसभा' रखा जाए। अन्त में आर्य परोपकारिणी सभा और आर्य प्रतिनिधि सभा—इन दोनों सभाओं की चल और अचल सम्पत्ति 'आर्यसभा' के नाम पर रजिस्टर की गई। १३ मई को यह काम सम्पन्न हुआ और १४ मई को स्वामी जी वहां से रवाना हो गए।

इस बार स्वामी जी को विदाई देने के लिए २५-३० मील दूर तक के लोग हवाई अड्डे पर पहुंचे थे। बहुत से लोग तो सपरिवार आए थे। घंटी बजने पर जब स्वामी जी आर्यजनों से नमस्ते कर वायुयान की ओर चले तो बहुत से आर्यों की आंखों में जल भर आया। उनके मुंह से बोल भी नहीं फूटता था। स्वामी जी ने उन्हें ढाढस देते हुए कहा—"साधु के साथ इतना स्नेह ठीक नहीं होता। साधु चलता भला, दुनिया बसती भली।"

स्वामी ध्रुवानन्द और स्वर्णजयन्ती

स्वामी स्वतंत्रानन्द जी ने सभाओं की एकता स्थापित की थी, पर वह चिरकाल तक नहीं चल सकी। फिर विघटन के लक्षण दिखाई देने लगे। इधर १९६० में आर्य समाज को स्थापित हुए ५० साल पूरे हो रहे थे, इसलिए उसकी स्वर्ण जयन्ती मनाने का अवसर आ गया। यह उत्सव मई मास में मनाया गया। इस बार भारत से स्वामी ध्रुवानन्द जी गए। बड़े पैमाने पर जो यज्ञ किया गया उसके ब्रह्मा स्वामी जी बने। स्वर्णजयन्ती समारोह के प्रथम दिवस के कार्यक्रम की अध्यक्षता डा० शिवगोविन्द ने की। दूसरे दिन की अध्यक्षता श्री मननजी भरत ने, तीसरे दिन की अध्यक्षता प्रधानमंत्री डा० शिवसागर रामगुलाम ने, चौथे दिन की अध्यक्षता जयनारायण राय ने, और पाँचवें दिन की अध्यक्षता कृषि मंत्री श्री सत्यकाम बुलेल ने की। इस समारोह में श्री सुखदेव, श्री यशकरण मोहित, श्री मुनीन्द्रनाथ, और प्रो० रामप्रकाश के विशेष भाषण हुए।

बाल-ब्रह्मचारी, संगठन-कुशल, स्वामी ध्रुवानन्द १९५७ में ही मौरिशस पहुंच गए थे। उन्होंने आर्यसभा का आन्तरिक सुधार किया। आपसी वैमनस्य के कारणों को दूर करके विघटन को रोकने का प्रयत्न किया। दयानन्द पुस्तकालय की स्थापना की। गयासिंह आश्रम और श्रद्धानन्द अनाथालय की नींव भी इन्हीं दिनों पड़ी। 'आर्य पत्रिका' और 'आर्य वीर' की जगह 'आर्योदय' निकाला गया। एक गुरुकुल खोलने की योजना बनी और डी० ए० वी० कालेज खोलने का भी निश्चय किया गया। सन् १९६० में ही भयंकर तूफान आया था जिससे गन्ने की ८० प्रतिशत खेती नष्ट हो गई थी और लोगों को भारी आर्थिक क्षति उठानी पड़ी थी। तब स्वामी ध्रुवानन्द

ने ही नैरोबी के धनिक आर्य सज्जनों से सहस्रों रुपए मंगाकर गरीबों की सहायता की थी।

हिन्दी और वैदिक सिद्धान्तों की परीक्षाएं

सन् १९४७ में सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्तभूषण और सिद्धान्तवाचस्पति की परीक्षाओं की परम्परा शुरू हो गई थी। इन परीक्षाओं से छात्र-छात्राएं सत्यार्थप्रकाश, उपनिषद् एवं दर्शन ग्रन्थों का अध्ययन करते जिससे उनकी वैदिक धर्म के प्रति आस्था बढ़ती और तत्संबंधी ज्ञान प्राप्त होता। हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा, मध्यमा, उत्तमा परीक्षाएं भी शुरू हुईं और अजमेर की विद्याविनोद, विद्यारत्न, विद्याविशारद और विद्यावाचस्पति भी।

स्वर्ण जयन्ती तक वैदिक धर्म के प्रचार के लिए वहां स्वामी नारायणानन्द, स्वामी विद्यानन्द विदेह, स्वामी अखिलानन्द, महात्मा आनंद भिक्षु, और स्वामी अभेदानन्द गए। स्वामी अभेदानन्द का वहीं धर्मप्रचार करते-करते २३ जुलाई, १९६१ को प्राणान्त हो गया। उनकी अन्त्येष्टि में सनातनधर्मी भी काफी संख्या में शामिल हुए। वैदिक धर्म के प्रति आस्था जगाने के लिए किए गए इन महात्माओं के प्रयत्नों को प्रवासी लोग कभी विस्मृत नहीं कर सकते।

१९६५ में डी० ए० वी० स्कूल खोला गया। श्रीमती भीमा और श्रीमती लखावती हरगोविन्द की देखरेख में महिला मंडल अच्छा कार्य करने लगे। अनेक युवक संगठन भी बने। एक आयुर्वैदिक औषधालय खोलने की योजना बनी और केनिया, तंजानिया और मोम्बासा के आर्यसमाजियों से सम्पर्क साधने का प्रयत्न किया गया।

आर्यनेता राजनैतिक पदों पर

राजनैतिक मंच पर जो गतिविधियां चलती रहीं उनके परिणाम-स्वरूप सन् १९६८ में मौरिशस स्वतंत्र हो गया। स्वतंत्रता प्राप्त करते ही जहां कई वरिष्ठ आर्यसमाजी नेता स्वतंत्र मौरिशस के मंत्रिमंडल को सुशोभित करने लगे, वहां डा० तिलक इंगलैण्ड में राजदूत नियुक्त हुए और श्री रवीन्द्र घरबरन भारत में राजदूत नियुक्त हुए। १९६८ में सार्वदेशिक सभा की ओर से हैदराबाद में जो आर्य महासम्मेलन हुआ, उसका उद्घाटन श्री रवीन्द्र घरबरन ने ही किया था। यह स्मरणीय है कि १२ मार्च, १९६८ को मौरिशस के मुक्तिपर्व पर सार्वदेशिक सभा के तत्कालीन प्रधान माननीय प्रतापसिंह शूर जी वल्लभदास भारतीय आर्य जनता की ओर से बधाई और शुभकामना का संदेश लेकर स्वयं उपस्थित हुए थे।

मौरिशस का प्रथम स्वातंत्र्य-दिवस

१९६९ में भारत से पं० कृष्ण शर्मा गए। वे कुशल पत्रकार, लेखक और वक्ता थे। वृद्धावस्था में भी उनकी वाणी में ओज था। उन्हीं के परामर्श से आर्य सभा ने मौरिशस का प्रथम स्वातंत्र्य-दिवस खूब धूमधाम से मनाया। इस उत्सव में मधुर गीतकार कवि नीलकंठ तिवारी और प्रसिद्ध पत्रकार श्री महावीर अधिकारी ने भाग लिया। इस अवसर पर मौरिशस के राष्ट्र-निर्माता डा० शिवसागर रामगुलाम को ताम्रपत्र प्रदान किया गया। इसी वर्ष मिनिसोटा (अमरीका) विश्वविद्यालय से श्री उषर्बुध मौरिशस में लोकगीतों का संग्रह करने आए। मुख्य मुख्य शहरों में उनके हिन्दी और अंग्रेजी में भाषण हुए। ५ अगस्त को डा० सत्यप्रकाश आए। वे प्रयाग विश्वविद्यालय में रसायन विभाग के अध्यक्ष रह चुके थे और हिन्दी और अंग्रेजी में उच्चकोटि के अनेक ग्रन्थों के लेखक श्री गंगाप्रसाद उपाध्याय के सुपुत्र थे। वे उस समय केवल तीन दिन रहे और इस बीच रेडियो और टेलीविजन पर उनकी वार्ता प्रसारित हुई।

हीरक जयन्ती

तब तक आ गया १९७० का वर्ष। आर्य समाज की स्थापना को ६० वर्ष हो रहे थे, इसलिए इस वर्ष हीरक जयन्ती मनाने का निश्चय किया गया। १० से १२ अप्रैल तक पोर्टलुई में हीरक जयन्ती का उत्सव हुआ। इस उत्सव पर श्री सत्यकाम बुलेल, स्थानापन्न प्रधानमंत्री माननीय श्री रिंगाडू, श्री देवकरन सूकन, श्री हरिदत्त घूरा, श्री मोदन और श्रीमती भीमा के विशेष व्याख्यान हुए। 'वैदिक जरनल' नामक एक त्रैमासिक पत्रिका का विमोचन हुआ जिसमें हिन्दी अंग्रेजी और फ्रेंच भाषाओं

में विभिन्न विषयों पर लेख प्रकाशित किए गए थे।

सन् १९७१ में मौरिशस के प्रवासियों ने धन-संग्रह करके बंगला देश के शरणार्थियों की सहायतार्थ दस हजार रु० भारतीय उच्चायुक्त की मार्फत भारत सरकार को भेजे। १९७१ में ही सार्वदेशिक सभा ने अलवर में आर्य महासम्मेलन करने का निश्चय किया और डा० शिवसागर रामगुलाम से उसकी अध्यक्षता करने की प्रार्थना की। तभी यह निश्चय भी हो गया था कि १२वां आर्य महासम्मेलन मौरिशस में होगा। अन्तर्राष्ट्रीय आर्य जगत् के इतिहास में यह एक नया मोड़ था।

कार्य-विस्तार की एक झलक

परन्तु आगे बढ़ने से पहले, आर्य समाज के कार्य का विस्तार वर्तमान समय में कहां तक पहुंच गया था, इसकी भी एक झांकी ले लेना उचित होगा।

पहले कह आए हैं कि स्वामी स्वतंत्रतानन्द जी आर्य परोपकारिणी सभा और आर्य प्रतिनिधि सभा दोनों को मिलाकर आर्य सभा के नाम से एक शिरोमणि संस्था बना आए थे, परन्तु धीरे-धीरे उसमें भी विघटन के स्वर उभरने लगे। तब स्वामी ध्रुवानन्द जी ने १९६१ में एक बृहत् अधिवेशन बुलाकर आर्यसभा के संविधान में उचित संशोधन करके सब के मतभेदों को शान्त कर दिया और आर्यसभा की नींव को सुदृढ़ बना दिया। इस प्रकार आर्य समाज का आन्दोलन जो पहले कभी एक छोटा सा पौधा था, अब विशाल वृक्ष का रूप धारण करने लगा।

इस समय तीन सौ से अधिक आर्यसमाजें आर्य सभा से संबंधित हैं। ढाई सौ प्राथमिक पाठशालाएं हैं जिनमें हिन्दी पढ़ाई जाती है। केन्द्रीय स्थानों में माध्यमिक स्कूल भी हैं जहां हिन्दी पढ़ाई जाती है। साथ ही सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्तभूषण और सिद्धान्तवाचस्पति की परीक्षाओं की तैयारी भी करवाई जाती है।

आर्यसभा के दो सरकारी सहायता प्राप्त-स्कूल हैं जिनमें लगभग २,००० छात्र-छात्राएं शिक्षा प्राप्त करते हैं। राजधानी पोर्टलुई में एक डी० ए० वी० कालेज है जिसमें चार सौ छात्र विद्याध्ययन करते हैं। गयासिंह अनाथालय के नाम से एक आर्य अनाथालय है जिसमें १२० वृद्धों और बच्चों का भरण-पोषण होता है।

इस समय मौरिशस की कुल जनसंख्या साढ़े आठ लाख के आस-पास है, जिसमें ६ लाख के लगभग भारतीय हैं। इन भारतीयों में से चौथाई संख्या आर्यसमाजियों की है—अर्थात् डेढ़ लाख के लगभग। आर्यसभा और रविवेद प्रचारिणी सभा के सब उपदेशक, पुरोहित और प्रचारकों की संख्या ५० के आस पास है। कुछ स्वतंत्र प्रचारक भी हैं।

आर्यसभा की वर्तमान सम्पत्ति तीस लाख की है। आर्यसभा की निम्न ग्यारह उपसमितियां हैं—(१) अनाथालय समिति, (२) जायदाद समिति, (३) प्रैस और प्रकाशन समिति, (४) विद्या समिति, (५) प्रचार समिति, (६) पुस्तकालय समिति, (७) डी० ए० वी० कालिज समिति, (८) वेदवाणी समिति, (९) सरकारी सहायता समिति, (१०) शिक्षाबोर्ड समिति और (११) युवक संघ। ये सब समितियां अपना काम सुचारु रूप से कर रही हैं।

आर्य समाज को मौरिशस प्रशासन से ७५ हजार रुपया वार्षिक का अनुदान उस नियम के आधीन मिलता हैं जिसके अनुसार प्रत्येक धर्म-संगठन को १) रुपया प्रति व्यक्ति के हिसाब से राज्य के कोष से अनुदान दिया जाता है।

इतने कार्य-विस्तार और क्षमता के बल पर ही मौरिशस की आर्यसभा ने अपनी भूमि में प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन बुलाने का साहस किया था।

अब सार्वदेशिक सभा द्वारा समय-समय पर आयोजित विभिन्न आर्य महासम्मेलनों का संक्षिप्त दिग्दर्शन कर लें।

□

तृतीय रश्मि

सत्यं बृहद् ऋतमुग्रं दीक्षा तपो

ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति ।

सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्नी,

उरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु ।।

अथर्ववेद १२।१।१

—सत्य, बृहद्भाव, सरलता, उग्रता, दक्षता, शीतोष्ण सहन करने की शक्ति, ज्ञान और यज्ञ—ये आठ सद्गुण मातृभूमि को धारण करते हैं। हमारे भूत, वर्तमान और भविष्य का पालन करने वाली वह मातृभूमि हमारे लिए विस्तृत कार्यक्षेत्र प्रदान करे।

आर्य महा सम्मेलन

- महासम्मेलनों की परम्परा
- अलवर का आर्यमहासम्मेलन

आर्य-महासम्मेलनों की परम्परा

२३ दिसम्बर, १९२६ को सायं ४ बजे, नया बाजार, दिल्ली के बलिदान भवन में एक हत्यारे ने स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की हत्या कर दी। इस दुःखद घटना से सारे देश में शोक की लहर छा गई। सभी राजनीतिक नेताओं ने और महात्मा गांधी तक ने क्रूर हत्यारे की निन्दा की। स्वामी जी की शवयात्रा राजधानी की अनोखी ऐतिहासिक घटना थी।

१९२७ के आस पास आर्यसमाज के कई सक्रिय एवं सम्मानित कार्यकर्त्ताओं का मुस्लिम आततायियों के द्वारा वध हुआ। नगरकीर्तनों में बाधा डाली गई। इस भयावह खतरे की रोकथाम के उपायों परआर्यसमाज को सामूहिक रूप से विचार के लिए बाध्य होना पड़ा। उस समय ऐसा लगता था कि जैसे चुने हुए आर्यजनों को समाप्त करके आर्यसमाज की प्रगति को कुंठित करने का षडयंत्रकारियों का कोई योजनाबद्ध कार्यक्रम है जिसे प्रत्यक्षतः वा अप्रत्यक्षतः ब्रिटिश राज्याधिकारियों की भी प्रेरणा प्राप्त है।

आर्य जनता स्वामी जी के बलिदान से पहले ही क्षुब्ध थी। अतः आर्यों (हिन्दुओं) को आत्मरक्षा के प्रति सचेष्ट करने और तत्सम्बन्धी उपायों पर विचार करने के लिए आर्यों की शिरोमणि सार्वदेशिक सभा ने प्रथम आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया।

इसके बाद जो महासम्मेलनों की परम्परा शुरू हुई, उसकी कारण-कार्य श्रृंखला पर विचार करने से पता लगता है कि ये सम्मेलन आर्य समाज की किसी न किसी ज्वलन्त समस्या पर विचार और उसके समाधान के लिए किए गए।

पहला आर्य महासम्मेलन ४, ५, ६ नवम्बर, १९२७ को दिल्ली में श्री महात्मा हंसराज जी की अध्यक्षता में हुआ था। इस महासम्मेलन में महामना श्री मदनमोहन मालवीय, श्री लाला लाजपतराय, भाई परमानन्द आदि महानुभावों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में 'हिन्दू-मुस्लिम के मध्य फूट डालो और राज्य करो' की अंग्रेजों की नीति के खिलाफ आवाज उठाई गई और वैदिक धर्म की रक्षा का आह्वान किया गया। अंग्रेज सरकार ने नगर-कीर्तनों को रोकने के लिए मस्जिदों के आगे बाजा बजाने की रोक लगाई थी जिसका असर समस्त देश पर पड़ा था। इस सम्मेलन में १० हजार सत्याग्रहियों की भर्ती का निश्चय किया गया। आर्य रक्षा समिति का गठन किया गया और आर्यवीर दल की नींव पड़ी। आर्यवीर दल का आगे चलकर अन्तर्राष्ट्रीय रूप बन गया।

दूसरा आर्य महासम्मेलन स्व० महात्मा नारायण स्वामी जी की अध्यक्षता में सन् १९३१ में बरेली में सम्पन्न हुआ। सन् १९२८ से लेकर सन् १९३१ तक देश के अनेक स्थानों पर मस्जिदों के सामने बाजा न बजाने की आड़ लेकर आर्यसमाज के नगर कीर्तनों पर हमले हुए। आर्य नेताओं का चुन-चुन कर वध किया गया और उन्हें प्रचार-कार्य करने से रोका गया। लाहौर और करांची में आर्य सेवकों की हत्या की गई। सहारनपुर में कर्नल गफ द्वारा ओम् के झण्डे का अपमान किया गया। सार्वदेशिक सभा ने राजनैतिक आंदोलन में जेल गये आर्य सत्याग्रहियों की समस्या को लेकर सरकार के सामने कड़ा विरोध

प्रकट किया, क्योंकि इन राजनीतिक सत्याग्रहियों को जेल में हवन-यज्ञ नहीं करने दिया जाता था, न ही बन्दी संन्यासियों को भगवा वस्त्र पहनने दिया जाता था।

तीसरा आर्यमहासम्मेलन आचार्य रामदेव जी की अध्यक्षता में १८, १९ अक्टूबर, १९३३ ई० को अजमेर में हुआ। यह महासम्मेलन महर्षि दयानन्द-निर्वाण अर्धशताब्दी के पुण्य अवसर पर हुआ था। इस अवसर पर नारायण स्वामी जी ने आर्यसमाज की गतिविधि में आवश्यक सुधार का सुझाव दिया। इसी सम्मेलन में गोरक्षा पर महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित हुआ था।

हैदराबाद आर्य-सत्याग्रह

चौथा महासम्मेलन २५, २६, २७ दिसम्बर को सन् १९३८ में शोलापुर में लोकनायक श्री एम० एस० अणे की अध्यक्षता में हुआ था। इस सम्मेलन में हैदराबाद में आर्य समाज के अस्तित्व और हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए धर्मयुद्ध करने का निश्चय किया गया। हैदराबाद का निजाम अपने राज्य में आर्यों (हिन्दुओं) पर दमन चक्र चला रहा था। इस दमन-चक्र में पिसकर अनेकों आर्य वीर मौत के घाट उतार दिए गए थे और अनेक जेल में बन्द कर सताए जा रहे थे। इस सम्मेलन द्वारा हैदराबाद में सत्याग्रह आंदोलन के नेतृत्व की बागडोर महात्मा नारायण स्वामी को सौंपी गयी। इस सत्याग्रह में हजारों आर्य सेवकों को जेल जाना पड़ा। अनेक की जेलों में ही मृत्यु हुई। परन्तु अन्त में निजाम को झुकना पड़ा। आर्यसमाज को सफलता मिली। इस आन्दोलन से आर्यसमाज का गौरव देश के कोने-कोने में फैल गया। हैदराबाद का आर्य-सत्याग्रह आर्यसमाज के इतिहास का एक अनुपम अध्याय है।

सिन्ध-सत्याग्रह

पांचवां महासम्मेलन २०, २१, २२ फरवरी को सन् १९४४ में डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी की अध्यक्षता में दिल्ली में हुआ था। इस समय एक ओर विश्वयुद्ध चल रहा था, दूसरी ओर भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई वेग से चल रही थी। अंग्रेज सरकार मुसलमानों की पीठ थपथपा रही थी जिससे हिन्दुओं और आर्यसमाज पर आक्रमण करने वाले मतान्ध मुसलमानों के हौसले बढ़ रहे थे। सत्यार्थप्रकाश का चौदहवां समुल्लास उनकी आंखों में खटकता था अतः उसको सत्यार्थप्रकाश में से निकलवाने का उनका प्रयत्न था। लाहौर आदि में इसके विरुद्ध बवंडर भी खड़े किए गए। सत्यार्थप्रकाश के विरुद्ध मुस्लिम लीग की प्रेरणा पर प्रस्ताव भी पारित हुए। जब सिन्ध में मुस्लिम लीगी गवर्नमेंट बनी तो उसने सत्यार्थ प्रकाश पर प्रहार करने का अच्छा अवसर समझकर पहल की और सिन्ध प्रान्त में १४वें समुल्लास सहित सत्यार्थप्रकाश के प्रकाशन एवं पठन-पाठन पर प्रतिबन्ध लगा दिया। श्री भाई परमानन्द जी ने यह प्रश्न केन्द्रीय लेजिस्लेटिव असेम्बली में भी उठाया। केन्द्रीय सरकार ने समूचे भारत में इस प्रतिबंध को लगाने से इन्कार कर दिया। सार्वदेशिक सभा का सिंध सरकार के साथ काफी पत्राचार हुआ परन्तु कोई विशेष फल न निकलने पर सभा को सामूहिक रूप से इस समस्या पर विचार करके कोई कदम उठाने का निश्चय करने के लिए विवश हो जाना पड़ा। इसी समस्या को लेकर यह सम्मेलन किया गया था।

महात्मा नारायण स्वामी जी के नेतृत्व में परखे हुए आर्यनेता श्री ला० खुशहालचंद जी (वर्तमान महात्मा आनंद स्वामी जी) श्री कुंवर चांदकरण शारदा, राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री (स्वामी ध्रुवानन्द जी), श्री स्वामी स्वतंत्रानंद जी महाराज, श्री पं० लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित, सत्याग्रह करने के लिए कराची पहुंचे। उन्होंने लगभग १ सप्ताह तक प्रतिबंध को चुनौती देते हुए खुले मैदानों, बाजारों आदि में सत्यार्थप्रकाश के १४ वें समुल्लास का पारायण किया। परन्तु किसी की गिरफ्तारी न हुई। फलतः महात्मा नारायण स्वामी जी विजय घोष करके दलबल सहित दिल्ली वापिस लौट आए।

छठा महासम्मेलन भारत की राजनीतिक स्वतंत्रता एवं राष्ट्रनायक महात्मा गांधी की हत्या के बाद हुआ। ३१ दिसम्बर, १९४८ से २ जनवरी, १९४९ तक श्री धनश्यामसिंह गुप्त की अध्यक्षता में कलकत्ता में यह सम्मेलन हुआ था। इसमें देश की राजनैतिक व्यवस्था में आर्यसमाज की महत्ता और प्रभाव को अक्षुण्ण बनाए रखने पर तथा देश-विभाजन से उत्पन्न समस्याओं पर विचार किया

सार्वदेशिक सभा के उपप्रधान
श्री छोटूसिंह, अलवर

सार्वदेशिक सभा के उपमंत्री
श्री भगवान देव शर्मा

मौरिशस की जल और स्थल यात्रा के सयोजक
श्री रामलाल मलिक

सार्वदेशिक सभा के उपमंत्री
श्री सच्चिदानन्द शास्त्री, लखनऊ

भारत सरकार के पर्यटन तथा नगर विमानन मंत्री, जिन्होंने बम्बई में यात्रियों को विदाई दी

श्री राजबहादुर

श्री नरेन्द्र, हैदराबाद

एक मास पहले ही मौरिशस पहुँच कर महासम्मेलन को सफल बनाने वाली त्रिमूर्ति

आचार्य कृष्ण

आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री

गया ।

सातवां महासम्मेलन पण्डित विनायक राव विद्यालंकार की अध्यक्षता में २७ अक्टूबर से १ नवम्बर, १९५१ तक मेरठ में हुआ । भारत के गणराज्य घोषित होने के एक वर्ष बाद यह सम्पन्न हुआ था । स्वतंत्रता प्राप्त कर चुकने के बाद देश की राजनीतिक स्थिति नया मोड़ ले रही थी । इस सम्मेलन में भारत सरकार से यह मांग की गई कि वह विदेशों में अपने दूतावासों के द्वारा भारतीय धर्म और संस्कृति के उदात्त तत्वों के प्रचार की व्यवस्था करे ।

आठवां महासम्मेलन श्री घनश्यामसिंह गुप्त की अध्यक्षता में २८, २९, ३० मई, १९५४ को हैदराबाद में हुआ । इसमें गोरक्षा-आन्दोलन तथा ईसाई-प्रचार निरोध आदि कार्यों पर विशेष बल दिया गया था ।

नवां महासम्मेलन दिल्ली में मई, १९६१ में सम्पन्न हुआ । इसकी अध्यक्षता स्वामी ध्रुवानन्द सरस्वती ने की । इसमें आर्य-जनों ने संकल्प किया कि महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं महात्मा गांधी द्वारा प्रतिपादित विचारधारा के जरिये स्वतंत्र देश की राजनीति को धर्ममय बनाया जाए ।

उसी सम्मेलन में निश्चय किया गया कि आम चुनावों में भाग लेकर अप्रत्यक्ष रूप से आर्य जनों को भारतीय संसद में भेजा जाए ।

दसवां महासम्मेलन हैदराबाद में श्री आनन्द स्वामी की अध्यक्षता में ८ से १० नवम्बर तक सन् १९६८ ई० में हुआ । इसी महासम्मेलन का उद्घाटन मौरिशस के हाई कमिश्नर श्री रवीन्द्र घरबरन ने किया था । इस महासम्मेलन में निश्चय किया गया कि देश का आर्थिक और सामाजिक पुनर्निमाण भारतीय आदर्शों एवं वैदिक परम्परा पर आधारित होना चाहिए । ● ●

"संन्यासी जगत् के सम्मान से विष तुल्य डरता रहे और अमृत के समान अपमान की चाहना करता रहे, क्योंकि जो अपमान से डरता और मान की इच्छा करता है वह प्रशंसित होकर मिथ्यावादी और पतित हो जाता है । इसलिए चाहे निंदा हो, चाहे प्रशंसा, चाहे मान हो, चाहे अपमान, चाहे जीना हो चाहे मृत्यु, चाहे हानि हो चाहे लाभ, चाहे कोई प्रीति करे चाहे वैर बांधे, चाहे अन्न, पान, वस्त्र, उत्तम स्थान मिले वा न मिले, चाहे शीत, उष्ण कितना ही क्यों न हो, इत्यादि सबका सहन करे और अधर्म का खण्डन तथा धर्म का मण्डन सदा करता रहे, इससे परे उत्तम धर्म दूसरे किसी को न माने ।"

—ऋषि दयानन्द

अलवर का आर्य-महासम्मेलन

ग्यारहवां आर्य महासम्मेलन राजस्थान के उत्तरी सिंहद्वार अलवर में मौरिशस के प्रधानमंत्री डा० शिवसागर रामगुलाम की अध्यक्षता में १९, २०, २१ मई, १९७२ को सम्पन्न हुआ। यह पहला आर्य महासम्मेलन था जिसमें एक प्रवासी भारतीय और भारतेतर देश के प्रधानमंत्री को अध्यक्ष बनाया गया था। इसी अवसर पर पहली बार आर्य महासम्मेलन में मौरिशस, फिजी, ट्रिनिडाड आदि देशों के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। इस महासम्मेलन के अवसर पर ही राजस्थान के मुख्यमंत्री (अब स्वर्गीय) श्री बरकतुल्ला खां ने जोधपुर का वह राजमहल आर्य समाज को दान देने की घोषणा की जिसमें महर्षि दयानन्द सरस्वती अपने जोधपुर प्रवास के समय ठहरे थे। इसी सम्मेलन में उच्चकोटि के वैदिक साहित्य के सृजन और प्रकाशन, वेदों के विविध भाषाओं में अनुवाद और महर्षि-कृत ग्रन्थों के पुनर्मुद्रण का निश्चय किया गया। इसी सम्मेलन में सन् १९७५ में आर्यसमाज की शताब्दी के उपलक्ष्य में डेढ़ करोड़ रुपए एकत्र करने और शताब्दी से पूर्व वेदों के हिन्दी और अंग्रेजी में अनुवाद प्रकाशित करने की योजना की संपुष्टि की गई। इसी अवसर पर अगला आर्यमहासम्मेलन मौरिशस में करने की सार्वजनिक घोषणा की गई और डा० शिवसागर रामगुलाम ने आर्यजनों को अधिक से अधिक संख्या में मौरिशस में आने का निमंत्रण दिया।

यही सम्मेलन था जिसने आर्य महासम्मेलनों को राष्ट्रीय धरातल से उठाकर अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर स्थापित करने की भूमिका प्रदान की। ❖ ❖ ❖ ❖

चतुर्थ रश्मि

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।

देवा भागं यथापूर्वे, संजानाना उपासते ।।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।

समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ।।

—ऋग्वेद, अन्तिमसूक्त

—तुम सब साथ मिलकर चलो, साथ मिल कर बोलो, तुम्हारे पूर्वज जिस प्रकार ज्ञान की उपासना करते थे, उसी प्रकार तुम सबके मन ज्ञानवान् बनें ।

—तुम्हारे संकल्प समान हों, तुम्हारे हृदय समान हों, तुम्हारे मन समान हों जिससे तुम सब सुख-समृद्धि-सौभाग्य से समन्वित हो सको ।

मौरिशस में आर्य महासम्मेलन

महासम्मेलन की तैयारी □

'अकबर' सागर की लहरों पर □

पोर्टलुई में समारोह □

महासम्मेलन की तैयारी

अलवर में ग्यारहवें आर्यमहासम्मेलन की सफल समाप्ति के पश्चात् आर्य जनता में मौरिशस में होने वाला बारहवां आर्य महासम्मेलन ही चर्चा का विषय बन गया। अलवर में इसकी स्पष्ट घोषणा की जा चुकी थी। मौरिशस के प्रधानमंत्री डा० शिवसागर रामगुलाम ने अलवर आर्यमहासम्मेलन की अध्यक्षता की, इससे दोनों देशों की आर्यजनता में नए सम्पर्क सूत्रों के साथ नए उत्साह का भी संचार हुआ। इससे पहले सार्वदेशिक सभा अपनी अन्तरंग सभा में १२वें आर्यमहासम्मेलन के लिए मौरिशस की आर्यसभा द्वारा दिए गए निमंत्रण को स्वीकार कर चुकी थी। परन्तु सार्वजनिक चर्चा का विषय यह अलवर सम्मेलन के बाद ही बना।

अलवर सम्मेलन के पहले इस प्रकार की संभावना पर भी जनता कदाचित् विश्वास न करती। अलवर के पश्चात् लोग यह समझ गए कि १२वां आर्य महासम्मेलन मौरिशस में करना संभव तो है, परन्तु अत्यन्त दुस्साध्य है। कुछ लोग तो इस घोषणा को अन्त तक सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों का स्टण्ट ही समझते रहे। उनका खयाल था कि इस प्रकार जनता की भावनाएं उत्तेजित करके अन्त में सार्वदेशिक सभा घोषणा कर देगी कि अमुक अमुक कारणों से मौरिशस में आर्य महासम्मेलन करने का विचार छोड़ना पड़ गया है। या यदि सम्मेलन होगा भी तो बहुत छोटे पैमाने पर होगा। सार्वदेशिक सभा के कुछ उच्च पदाधिकारी मौरिशस पहुंच जाएंगे और कुल्हिया में गुड़ फोड़कर कह देंगे कि हमने बारहवां आर्यमहासम्मेलन कर लिया। क्या आर्यमहासम्मेलन करना कोई हंसी खेल है? फिर कहां मौरिशस और कहां भारतवर्ष! दोनों देशों के बीच में ढाई हजार मील का अन्तर? भारत के किसी महानगर में आर्यमहासम्मेलन करना हो तो उसके लिए कितना परिश्रम करना पड़ता है! कितना धन-संग्रह और जनसंग्रह करना पड़ता है! अलवर का महासम्मेलन भी, यदि समग्र राजस्थान की जनता एक जुट होकर न लगती, तो क्या इतनी सफलता के साथ सम्पन्न हो पाता?

भारत में आर्यमहासम्मेलनों की जिस धूमधाम से और विशाल जनसमुदाय से हम परिचित हैं, उसकी तो मौरिशस के संदर्भ में कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। मौरिशस में आर्यसमाज के कार्य-विस्तार का भी किसी को अनुमान नहीं था। बहुत से लोग तो यही समझते थे कि सार्वदेशिक सभा ने अलवर महासम्मेलन की अध्यक्षता के लिए डा० शिवसागर रामगुलाम को बुला लिया, इसलिए बदले में उन्होंने भी शिष्टाचारवश अगले महासम्मेलन के बहाने से सार्वदेशिक सभा के कुछ अधिकारियों को मौरिशस में निमंत्रित करने की औपचारिकता पूरी कर दी। यह निमंत्रण भी वैसा ही शिष्टाचार-गर्भित है जैसे सामान्य निमंत्रण होते हैं, जिनमें निमंत्रण का दाता और आदाता दोनों में से कोई भी गंभीर रूप से मन में उसकी सत्यता को स्वीकार नहीं करता।

पर आर्यों के कार्य-व्यवहार में भी यदि उस प्रकार की प्रवंचना-पूर्ण औपचारिकता ही पूरी होती हो तो आर्यत्व कहां रहा? सच तो यह है कि जब बारहवें आर्य महा-

सम्मेलन के लिए मौरिशस की आर्यसभा ने निमंत्रण दिया, तब न तो वह शिष्टाचार निभा रही थी, और न ही सार्वदेशिक सभा उस निमंत्रण को स्वीकार करते हुए रस्म अदायगी पूरी कर रही थी। दोनों ही अपने-अपने स्थान पर पूर्णरूप से गम्भीर और ईमानदार थे। मौरिशस की आर्य-सभा की क्षमता का और वहां आर्यसमाज के कार्यविस्तार का उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं। आम भारतवासियों को और सामान्य आर्य जनता को उसका आभास न हो, यह संभव है, पर सार्वदेशिक सभा के अधिकारी आर्यसभा की क्षमता से परिचित थे। सार्वदेशिक सभा अपनी क्षमता से भी अनभिज्ञ न थी। निमंत्रण देने वाला और निमंत्रण स्वीकार करने वाला दोनों के मन में यह संकल्प था कि यह प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन न केवल आर्य सार्वदेशिक सभा के अन्य आर्य महासम्मेलनों की परम्परा के अनुरूप हो, बल्कि उससे भी अधिक धूमधाम से हो, और ऐसा हो कि देश-देशान्तर में आर्य समाज की ख्याति को चार चांद लग जाएं।

देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर

ऋषि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में लिखा है : एक समय था जब समस्त भूमंडल में आर्यों का राज्य था, पर समय की परिवर्तनशीलता से आर्यों की आपसी फूट और वैमनस्य से, वेदों की शिक्षा को भूलकर अविद्यान्धकार में फंस जाने से, अन्धविश्वास और अब्रह्मचर्य से, आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य न केवल क्षीण हो गया, अपितु केवल भारत तक ही सीमित रह गया। और भारत में भी आर्य पराधीनता के पाश में आबद्ध हो गए। अब आर्यों का कर्तव्य है कि वे देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में वैदिक धर्म का प्रचार करें और समस्त संसार को आर्य बनाएं। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' वैदिक धर्म का सृष्टि के आदि से जयघोष चला आया है।

आर्यों के इस जयघोष में राजनैतिक साम्राज्यवाद की गन्ध ढूंढना बेकार है। आर्यों के सार्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य की भावना में राजनीति नहीं, धर्मनीति है। इसीलिए आर्य कभी साम्राज्यों के विस्तार के पक्षपाती नहीं रहे। परन्तु धर्म-विजय तो उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। इसलिए जब भी कभी विजय या विजिगीषा का प्रसंग आता है, तो उसे आर्यसमाज और वैदिक धर्म के संदर्भ में धर्म-विजय और धर्म-विजिगीषा ही समझना चाहिए। जब से आर्यों ने धर्म-विजय का यह अपना जन्मसिद्ध अधिकार छोड़ दिया, तभी से उनका अधः पतन आरम्भ हुआ।

ऊपर जो कुछ हमने लिखा है, वे शब्द बेशक हमारे हों, पर भाव ऋषि का ही है। ऋषि के इन्हीं भावों से प्रेरित होकर आर्यसमाज ने 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के जय-घोष का पुनरुद्धार किया। उसके विचार और प्रचार में 'देश-देशान्तर' और द्वीप-द्वीपान्तर' शब्द बहुशः प्रयुक्त होते रहे। पर केवल सिद्धान्त के स्तर तक ही। यह पहला अवसर था जब आर्यसमाज ने सामूहिक रूप से उन शब्दों की महत्ता को सार्थक करने का निश्चय किया। इससे पहले व्यक्तिगत रूप से तो देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में आर्य-जन और वैदिक धर्म के मिशनरी जाते रहे, पर सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप देने का इतने बड़े रूप में सार्वजनिक परीक्षण सार्वदेशिक सभा ने भी पहले कभी नहीं किया था।

फिर जिस देश का बहुसंख्यक हिन्दू-समाज समुद्र-यात्रा को पाप की संज्ञा देता रहा हो, अपनी जीविका के लिए समुद्र पार के देशों में गए प्रवासी भारतीयों को जिस देश के कट्टर पन्थी लोग जाति-भ्रष्ट और आचार-भ्रष्ट तक कहते संकोच न करते हों, जिस देश में महात्मा गांधी, मोतीलाल नेहरू और महामना मालवीय जैसे वरिष्ठ नेताओं तक को विदेश-यात्रा के कारण तत्कालीन समाज की ओर से लांछना का पात्र बनना पड़ा हो (उन नेताओं ने इसकी परवाह नहीं की, यह अलग बात है), उस देश में इस प्रकार के समुद्र-यात्रा सम्बन्धी सामूहिक परीक्षण का कितना महत्व है, इसकी भी कल्पना ही की जा सकती है। यदि हिन्दू-जाति समुद्र-यात्रा को पाप न समझती तो कूपमण्डूक क्यों बनती ? क्यों व्यापार-वाणिज्य में विदेशी शक्तियों से मात खाती ? क्यों औद्योगिक उन्नति में पिछ-ड़ती ? संकटपूर्ण नित्य नए अभियान करने का उसका साहस मन्द क्यों हो जाता ? समूची जाति का खून ठंडा क्यों पड़ जाता ?

पर सिद्धान्त सिद्धान्त है, व्यवहार व्यवहार। इन दोनों के बीच के अन्तराल को केवल दृढ़ संकल्प से पूरा किया जा सकता है। आर्य का अर्थ ही है—दृढ़-संकल्पवान्।

क्षीण-संकल्प व्यक्ति और आर्यसमाजी—इन दोनों शब्दों को तो परस्पर-विरोधी समझना चाहिए। नीतिकारों ने कहा है :—

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः,
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारभ्य तूत्तमजना न परित्यजन्ति ॥

नीच और अनार्य कोटि के लोग विघ्नों के भय से किसी काम को शुरू ही नहीं करते। मध्यम कोटि के लोग विघ्नों से सामना होने पर बीच में ही हिम्मत हार कर बैठ जाते हैं और काम को छोड़ देते हैं। परन्तु जो उत्तम कोटि के लोग हैं वे तो कदम-कदम पर विघ्न उपस्थित होने पर भी एक बार प्रारम्भ किए शुभ काम का कभी परित्याग नहीं करते।

दो मोर्चों पर संघर्ष

अब सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों की परीक्षा थी। उन्हें अपनी योजना को सफल करके अपनी 'उत्तमता' सिद्ध करनी थी। योजना की सफलता के लिए उन्हें दो मोर्चों पर श्रम करना था—एक सरकार के मोर्चे पर, दूसरा जनता के मोर्चे पर। सरकार के मोर्चे का काम संभाला सार्वदेशिक सभा के कार्यालय ने और जनता के मोर्चे का काम सौंपा गया श्री रामलाल मलिक को—जो उस समय आर्यसमाज करौलबाग के प्रधान थे। श्री मलिक इससे पूर्व सात बार स्पेशल ट्रेनों की व्यवस्था कर चुके थे जो भारत के विविध स्थानों पर गई थीं। प्रचार की दृष्टि से इन यात्राओं का कितना महत्व रहा होगा, इसकी सहज ही कल्पना की जा सकती है। उनका अनुभव मौरिशस यात्रा की व्यवस्था करने में सहायक हो सकता था। उनकी कुशल पत्नी का सहयोग उनके कार्य में सदा बड़ा सहायक रहा है।

जलपोत की व्यवस्था

मौरिशस में अधिक से अधिक लोग पहुँच सकें, इसके लिए निश्चय किया गया कि एक पूरा जलपोत चार्टर किया जाए, क्योंकि विमान-यात्रा बहुत महंगी पड़ती। फिर भी जिनमें सामर्थ्य होगा, वे तो विमान से जाएंगे ही। पर अधिकांश आर्य जनता देश के मध्यवित्त परिवारों की होती है, वह विमान-यात्रा का व्यय वहन नहीं कर सकेगी, यह सोच कर जलपोत का निश्चय किया गया। भारत से मौरिशस के लिए कोई सीधी नियमित समुद्री-यात्रा-सर्विस नहीं है। जिन्हें समुद्री मार्ग से मौरिशस जाना होता है, वे पूर्वी अफ्रीका जाने वाले जलपोतों से ही वहां पहुंच पाते हैं। इसके लिए पहले तो सरकार से अनुमति लेनी थी, फिर किसी जहाजी यात्रा कम्पनी से बात करनी थी, फिर किसी उत्तम जलपोत को यात्रा के लिए चुन कर अग्रिम धन जमा करवा के उसे आरक्षित करना था। श्री रामलाल मलिक अलवर सम्मेलन की समाप्ति के बाद, अपनी आजीविका के साधन—ईंटों के भट्टे—की भी उपेक्षा करके, दौड़-धूप में लग गए।

सबसे पहले तो अंग्रेजी, हिन्दी और उर्दू के प्रसिद्ध दैनिक समाचार-पत्रों में समाचार और विज्ञापन देकर उन्होंने देश की आम जनता को इस बात से अवगत कराया कि इस बार मौरिशस में आर्य महासम्मेलन होगा और इसके लिए जलपोत की व्यवस्था की जा रही है। ज्यों-ज्यों खबर फैलती गई, जनता में उत्साह का संचार होता गया। यात्रियों के प्रार्थनापत्र आने लगे और उन्होंने अपना किराया अग्रिम रूप से जमा करवाना आरंभ कर दिया।

इधर सार्वदेशिक सभा ने सरकार से लिखा-पढ़ी करके आर्यों की मौरिशस यात्रा की अनुमति तो प्राप्त कर ली, परन्तु इस अनुपम अवसर और विशिष्ट समारोह के लिए अन्य जितनी भी सुविधाएं मांगीं, उन सब के लिए सरकार टालमटोल करने लगी। नौकरशाही और दफ्तरशाही का रवैया सब जानते ही हैं।

इधर समय बड़ी तेजी से बीतता जा रहा था। समस्त आर्य जनता अत्यन्त उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी कि आर्यसमाज के इस अभूतपूर्व अभियान का ऊंट किस करवट बैठता है? जो संशय-ग्रस्त थे, या इस अभियान को असाध्य समझते थे, या सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों की कार्यक्षमता के प्रति शंकालु थे, अथवा जिन्हें इस अभियान का श्रेय सार्वदेशिक सभा को प्राप्त करते देखना सह्य न था, उन्होंने इस अभियान की उपहासात्मक ढंग से चर्चा शुरू कर दी।

पर वही "विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः" वाली बात। सरकार की ढीली चाल। उत्तर देने में विलम्ब और टालमटोल। अन्त में सार्वदेशिक सभा के मंत्री श्री ओमप्रकाश त्यागी स्वयं विदेश मंत्री सरदार स्वर्णसिंह से मिले, उन्हें इस महासम्मेलन की महत्ता समझाई, सरकारी अधिकारियों के आर्यसमाज को साम्प्रदायिक समझने के भ्रम का निवारण किया और इस सम्मेलन को अन्तर्राष्ट्रीय सौहार्द की स्थापना में आर्यसमाज का विनम्र योगदा बत-न लाया। तब सरकार को वस्तुस्थिति का ठीक-ठीक परिज्ञान हुआ और केवल इस समारोह के लिए विदेशयात्रा पर जाने वाले यात्रियों को आर्थिक गारंटी से मुक्त करने को सरकार तैयार हो गई। अन्यथा विदेशयात्रा पर जाने वाले हरेक यात्री को पहले आर्थिक गारंटी और इनकम-टैक्स क्लीयरेंस सार्टीफिकेट देना पड़ता है, उसके बाद ही उसका पासपोर्ट बनता है।

सार्वदेशिक सभा ने मांग की थी कि सब यात्रियों के पासपोर्ट एक ही स्थान पर बन जाएं, उन्हें विभिन्न महानगरों, विभिन्न अधिकारियों और विभिन्न रीजनल पासपोर्ट दफ्तरों में भटकना न पड़े। पर सरकार उससे सहमत नहीं हुई। फिर सार्वदेशिक सभा ने यह भी मांग की थी कि यात्रियों को यात्रा-टैक्स से मुक्त कर दिया जाए। सरकार ने यह भी नहीं माना। एक मांग यह थी कि पासपोर्ट को किसी मजिस्ट्रेट या डिपुटी सेक्रेटरी से प्रमाणित करवाने या पुलिस की जांच रिपोर्ट आने तक पासपोर्ट न बनाने की शर्त भी लागू न की जाए।

उक्त मांगों में से कोई भी मांग ऐसी नहीं थी जिस पर सहमत होना सरकार के लिए कठिन हो। विशेषतः उस अवस्था में जब कि हजयात्रा वाले मुस्लिम बन्धुओं को उपर्युक्त प्रकार की सुविधाएं दी जाती हैं। परन्तु सरकार ने इन दोनों अभियानों को एक ही कोटि में रखना स्वीकार न किया। हजारों मुसलमान यात्री प्रतिवर्ष हज के लिए मक्का-मदीना की यात्रा पर विदेश जाते हैं और उन्हें उक्त सब सुविधाएं दी जाती हैं। पर आर्यसमाजी से बढ़कर राष्ट्रभक्त प्रजा कहां मिलेगी? राष्ट्रवाद तो आर्य समाज की घुट्टी में है और ऋषि दयानन्द स्वराज्य के प्रथम मंत्रद्रष्टाओं में हैं। फिर सब यात्रियों को केवल महासम्मेलन की अवधि तक ही, अर्थात्—केवल चार दिन, मौरिशस में रहना था और उसके बाद भारत के लिए वापिस लौट आना था। हज-यात्री कम से कम १५ दिन मक्का-मदीना, जद्दा, रियाद और सऊदी अरब में ठहरते हैं। पर अपनी सरकार थी, उसे इसमें भी कोई भलाई दीखी होगी। आर्यों की सहनशीलता की सराहना करनी चाहिए कि उन्होंने इनमें से किसी भी मुद्दे को आन्दोलन या विरोध-प्रदर्शन का विषय नहीं बनाया और सरकार को 'अपना' समझकर प्रत्येक कदम को बिना किसी ननुनच के स्वीकार किया।

बीच में ही यह भी पता लगा कि जिस 'मुगल लाइन्स' से जलपोत चार्टर पर लेने की बात चल रही थी, उसे भी सरकार ने आदेश दे दिया था कि जब तक सरकार की ओर से 'लाइन क्लीयर' न मिले, तब तक वह मौरिशस के लिए रवाना न हो। हालांकि 'मुगल लाइन्स' कोई सरकारी कम्पनी नहीं थी, एक व्यापारिक यात्रा-कम्पनी थी और समाजवाद के पथ पर आगे बढ़ती हुई भारत सरकार ने ऐसी निजी यात्रा-कम्पनियों का अभी तक राष्ट्रीयकरण नहीं किया है। इससे भी, ऐसा विदित होता है सरकार के मन में कुछ भ्रम थे। पर श्री त्यागी के विदेशमंत्री से मिलने के बाद इस प्रकार की अनाहूत बाधाएं दूर हो गईं। विदेशमंत्री ने लिखित रूप में सार्वदेशिक सभा के मंत्री को सूचित किया कि मुख्य पासपोर्ट अधिकारी सब क्षेत्रीय (रीजनल) पासपोर्ट अधिकारियों को निर्देश देंगे कि मौरिशस जाने वाले आर्य यात्रियों के पासपोर्ट यथा संभव बिना विलम्ब के जारी कर दिए जाएं।

पासपोर्ट की समस्या

पासपोर्ट बनवाने की समस्या ही सबसे विकट थी। अधिकांश लोगों को यह पता नहीं था कि पासपोर्ट बनवाने के लिए क्या प्रक्रिया अपनानी पड़ती है। ये पासपोर्ट न तो एकाध व्यक्तियों के बनने थे, न ही एकाध स्थानों पर बनने थे। सैकड़ों व्यक्तियों के बनने थे और हरेक राज्य की राजधानी में बनने थे। यदि सब के पासपोर्ट एक ही स्थान पर और एक ही साथ बनने होते तो कितनी सुविधा हो जाती और कितना श्रम बच जाता! पर उसे तो सरकार अस्वीकृत कर चुकी थी। तब जिन लोगों ने अपना मार्ग-

व्यय जमा करवा दिया था, उन्हें विज्ञप्तियों द्वारा सब प्रक्रिया समझाई गई और पासपोर्ट के फार्म उन्हें डाक से भेजे गए।

जो लोग किसी न किसी राज्य की राजधानी में रहते हैं, उन्हें तो शायद फिर भी उतनी असुविधा न हुई हो, पर जो लोग राजधानियों से दूर किसी कस्बे या देहात में रहते हैं, उन्हें तो सिर्फ इसी काम के लिए राजधानियों के कई कई चक्कर लगाने पड़े होंगे। बहुतों ने तो केवल इसी काम के लिए दिल्ली के कई चक्कर लगाए। फिर पासपोर्ट के प्रार्थनापत्र फार्म पर मजिस्ट्रेट या डिपुटी सेक्रेटरी की तसदीक, फोटो की चार चार प्रतियों और २५ रु० के साथ पासपोर्ट के दफ्तर में उसे जमा करवाना, फिर पुलिस की जांच रिपोर्ट आने तक प्रतीक्षा। इस प्रकार पासपोर्ट दफ्तरों में लोगों ने कई-कई बार चक्कर लगाए और तब कहीं महीने भर बाद पासपोर्ट हाथ में आए।

अन्त में सार्वदेशिक सभा की ओर से मौरिशस में होने वाले आर्य महासम्मेलन की और तत्संबंधी यात्रा-कार्यक्रम की इस प्रकार घोषणा हुई :—

मुख्य सम्मेलन—२४ से २६ अगस्त, १९७३

नई दिल्ली से विशेष रेलगाड़ी

की रवानगी— १३ अगस्त, १९७३

बम्बई से जलपोत की रवानगी—१६ अगस्त, १९७३

सार्वदेशिक सभा की ओर से इन तारीखों की घोषणा होते ही, तब तक जिनके पासपोर्ट नहीं बने थे, उन्हें चिन्ता हुई और उन्होंने भी पासपोर्ट के लिए दौड़धूप शुरू की। सभा की ओर से भी सबको सचेत किया गया कि यात्रा शुरू होने से १५ दिन पहले सब यात्रियों को चेचक और हैजे के टीके लगवा लेने चाहिएं और नगर-पालिका के स्वास्थ्य अधिकारी से उसका प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेना चाहिए। १५ दिन पहले इसलिए कि यदि उन टीकों की कोई विपरीत प्रतिक्रिया शरीर पर होनी हो तो उससे तब तक निवृत्त हुआ जा सके। इन टीकों के लगने से पहले पासपोर्ट तो बनना आवश्यक था ही।

जब अभियान इस मंजिल तक पहुंच गया, तब शंकालुओं के मन की शंका भी जाती रही। अब सबको विश्वास हो गया कि इस अभियान की सफलता असंदिग्ध है, अब तो यह पूर्ण होकर ही रहेगा।

उधर मौरिशस में आर्यसभा इस महासम्मेलन की सफलता के लिए अपनी ओर से जी-जान से जुटी हुई थी। उसकी तो प्रतिष्ठा का ही क्या, जीवन-मरण का प्रश्न था। इतना बड़ा आयोजन आखिर किसी विरले पर ही वे करने को तैयार हुए थे। उन्होंने मौरिशस के जन-जन में इस महासम्मेलन के अनुरूप उत्साह पैदा किया। जब उन्हें पता लगा कि भारत से लगभग १,००० हजार यात्री मौरिशस पहुंचेंगे, तब उनका हौसला और बुलन्द हो गया और वे प्राण-पण से इतने लोगों के आतिथ्य तथा अन्य व्यवस्थाओं में जुट गए। उनके लिए तो यह अभूतपूर्व अवसर था।

अगस्त का महीना आ गया। भारतवर्ष में वर्षा ऋतु जोरों पर थी। अकस्मात् रेल कर्मचारियों ने हड़ताल प्रारम्भ कर दी। अनेक स्थानों की रेलें बन्द हो गईं। मुख्य मार्गों पर भी बहुत थोड़ी रेलें ही चल रही थीं। एक बार फिर मन में शंका पैदा हो गई कि १३ अगस्त को नई दिल्ली से आर्य-विशेष-रेलगाड़ी रवाना हो पाएगी या नहीं। पर श्री रामलाल मलिक हिम्मत हारना नहीं जानते। आखिर उनका और सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों का जब साल भर से किया गया परिश्रम पूर्णता के निकट आने लगा, तभी यह व्याघात उपस्थित हो गया। किसान खेत में हल चलाता है भूमि को तैयार करता है, फिर उसमें बीज उगाता है, खाद डालता है, सिंचाई करता है और जब समय पाकर फसल लहलहा उठती है, उसी समय यदि पाला पड़ जाए, बाढ़ आ जाए, बिजली गिर जाए या लुटेरे खड़ी फसल काट ले जाएं—तब उनके मन की क्या गति होगी? श्री मलिक, कभी इस अधिकारी से मिल, कभी उस अधिकारी से मिल—लगातार इस प्रयत्न में लगे रहे कि आर्य-विशेष-गाड़ी नियत तिथि पर और नियत समय पर दिल्ली से रवाना हो जाए।

मौरिशस में तैयारी

अगस्त के प्रारम्भ में ही आर्यसभा मौरिशस के निमंत्रण पर सार्वदेशिक सभा की ओर से हैदराबाद के आर्य-नेता श्री पं० नरेन्द्र और यज्ञ के विधि-विधान में पारंगत

आचार्य कृष्ण तथा आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री प्रबन्ध में योग देने, मार्गदर्शन करने तथा प्रचार बढ़ाने के लिए मौरिशस पहुंच गए। महासम्मेलनों की प्रारम्भिक व्यवस्था में और प्रभाव से भाव खड़ा कर देने में नरेन्द्र जी विशेष दक्ष हैं। जिस काम के पीछे पड़ते हैं, उसकी पूर्ति में ऐसे तन-मन से जुट जाते हैं कि फिर न दिन देखते हैं, न रात। न भोजन की चिन्ता करते हैं, न विश्राम की। बस काम ही काम। अलवर के महासम्मेलन का समस्त व्यवस्था-भार भी उन्होंने ही संभाला था। इससे पहले हैदराबाद में अनेक प्रादेशिक और सार्वदेशिक महासम्मेलनों का आयोजन वे सफलतापूर्वक कर चुके थे। हैदराबाद के आर्य-सत्याग्रह के तो जैसे वे प्राण थे। निजामशाही के जितने अत्याचार इस एक व्यक्ति ने सहे हैं, उतने शायद ही किसी ने सहे हों। ऐसे कर्मठ, युवक-नेता, आर्यवीर के पहुंच जाने पर मौरिशस के आर्य कार्यकर्ता भी आश्वस्त हो गए कि अब हमें समस्त व्यवस्था का कार्यभार अकेले नहीं संभालना होगा। इसी प्रकार आचार्य कृष्ण ने महासम्मेलन की शोभा के अनुरूप विशाल यज्ञ की समस्त तैयारी अल्प अवधि में ही कर डाली।

महसम्मेलन के लिए जो स्थान चुना गया, वह भी ऐतिहासिक था। इस स्थान का नाम था 'ताहिर बाग।' इसी स्थान पर सन् १९०१ में महात्मा गांधी ताहिर मियां की कोठी में आकर ठहरे थे। यह भी कैसा विचित्र संयोग है कि कभी अब्दुल कादिर नामक एक मुसलमान बैरिस्टर ने महात्मा गाँधी को मौरिशस आने के लिए प्रेरित किया था। १९०१ में जब वे अकस्मात् मौरिशस पहुंचे तब भी एक मुसलमान बन्धु ने ही उनका आतिथ्य-भार ग्रहण किया। 'अकस्मात्' इसलिए कि महात्मा गाँधी प्रोग्राम बना कर मौरिशस नहीं पहुँचे थे, बल्कि दक्षिण अफ्रीका से भारत आते हुए बीच में उन्हें 'नौशेरा' जहाज की खराबी के कारण रुकना पड़ा था। ताहिर मियां की जिस कोठी में महात्मा गांधी ठहरे थे, उस कोठी को बाद में गोरों ने जला दिया था, सिर्फ इसलिए कि उस कोठी में ताहिर मियां ने अंग्रेजों के उस 'बागी फकीर' गांधी को क्यों ठहराया था।

वह ताहिर पार्क ऐतिहासिक स्थान होते हुए भी अर्से से परित्यक्त पड़ा था। पर यह स्थान आर्यसभा भवन के पास ही था और उसके साथ ही घुड़-दौड़ का विशाल मैदान था। इसलिए महासम्मेलन के विशाल समारोह के लिए बहुत उपयुक्त था। उस जमीन में झाड़-झंखाड़ उगे हुए थे और ऊंची-ऊंची घास उगी थी। नरेन्द्र जी ने सब मैदान साफ करवाया और वहां दस हजार व्यक्तियों के बैठने के लायक विशाल पण्डाल बनवाया। इस काम में वहां की नगरपालिका ने भी खूब योग दिया। पंडाल ऊंची-ऊंची बल्लियों पर शामियाना तानकर नहीं बनाया गया था, जैसे भारत में बनता है, बल्कि लोहे के लम्बे लम्बे नलों पर वाटरप्रूफ चादरों को पेंचों से कस कर बनाया गया था। साथ ही पुस्तकों आदि के लिए कुछ दुकानें बनी थीं, भव्य मुख्यद्वार के सामने पण्डाल से पहले ही यज्ञशाला बनी थी जिसमें समारोह के अवसर पर बृहद् यज्ञ होना था। पास ही ओम् का खूब ऊंचा ध्वज स्थापित किया गया था। एक ओर मोटरों के खड़े होने का स्थान था। पार्क के लगभग मध्य में एक विशाल वटवृक्ष था। देखते ही देखते वह परित्यक्त स्थान 'दयानन्द नगर' के नाम से गुँजायमान और शोभायमान हो उठा।

मौरिशस-यात्रा की निर्विघ्न समाप्ति के लिए और पूर्ण सफलता के लिए नई दिल्ली के आर्यसमाज पंजाबी बाग में ५ अगस्त को स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी और उनके शिष्यों ने यज्ञ प्रारम्भ किया। १२ अगस्त को उस यज्ञ की पूर्णाहुति हुई। महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती, आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री और संसत्सदस्य श्री ओम्प्रकाश त्यागी ने इस महान् अभियान की सफलता की प्रभु से प्रार्थना की। इसी समारोह से मौरिशस यात्रा का वृत्तचित्र (डौक्यु-मैंटरी फिल्म) बनना प्रारम्भ हो गया।

१२ अगस्त को ही विभिन्न राज्यों से आर्ययात्री आने शुरु हो गए थे। आर्यसमाज करौलबाग, दीवान हाल और हनुमान रोड में उनके ठहराने की व्यवस्था की गई थी। रात को और अधिक यात्री आ गए।

'आर्य-विशेष-रेलगाड़ी'

अब आया १३ अगस्त का शुभ मुहूर्त। विशेष गाड़ी को एक बजे के बाद चलना था, परन्तु प्रातः दस बजे से

ही नई दिल्ली रेलवे स्टेशन का प्लेटफार्म नं० १ विभिन्न राज्यों के निवासी आर्ययात्रियों से भरना शुरू हो गया। यात्रियों के अलावा उन्हें विदा करने के लिए आने वाले पारिवारिक जनों और इष्ट मित्रों की भी अच्छी भीड़ थी। राजस्थान के यात्रियों की तो धज ही निराली थी और उनके रंगीन साफों ने सारे प्लेटफार्म को रंगीन बना रखा था।

आर्य-यात्रियों को विदा देने के लिए जो विशिष्ट महानुभाव आए उनमें महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती, स्वामी सत्यप्रकाशानन्द, लाला रामगोपाल शाल वाले, श्री लाला चतुरसेन जी गुप्त, श्री पं० देवव्रत धर्मेन्दु, मास्टर शिवचरणदास, श्री सोमनाथ मरवाहा एडवोकेट और आर्य केन्द्रीय सभा के मंत्री श्री अजयकुमार का नाम उल्लेखनीय है। लोगों के हर्ष और उत्साह का पार नहीं था। इतना उत्साह होता भी क्यों नहीं ? अब तक जिस देश से विदेशी प्रभु कुलियों और मजदूरों को भर-भर कर ले जाया करते थे, अब उसी देश के स्वतंत्र नागरिक एक दूसरे देश के स्वतंत्र नागरिकों—अपने धर्मबन्धुओं—से निमंत्रण पाकर, समानता के स्तर पर भेंट करने जा रहे थे। पानी की अपेक्षा खून बहुत गाढ़ा होता है। इसीलिए खूनी रिश्ते इतने अभेद्य होते हैं। अब खून ने खून को पुकारा था। भारत के इतिहास में, और मौरिशस के इतिहास में भी, एक अभूतपूर्व घटना घटित होने जा रही थी।

ठीक डेढ़ बजे गाड़ी नई दिल्ली स्टेशन से रवाना हुई। सारा प्लेटफार्म वैदिक धर्म की जय के नारों से गूंज उठा। जब गाड़ी स्टेशन पार कर गई, तब भी वायु मंडल से जैसे ध्वनि आती रही—वै...दि...क...ध...र्म...की ... जी ...य...!!!

यह मौरिशस आर्य-विशेष-गाड़ी दिल्ली से सीधी मथुरा जाकर रुकी। आश्चर्य है—पलवल में गाड़ी नहीं रुकेगी, यह जनता को मालूम था, फिर भी पलवल के उत्साही आर्यवीर ओम् ध्वज् लेकर स्टेशन पर स्वागतार्थ उपस्थित थे। उनकी भावना तो देखिए !

मथुरा के आर्यवीरों ने यात्रियों का जलपान से स्वागत किया। उस के बाद गाड़ी भरतपुर केवल ५ मिनट के लिए रुकी। परन्तु श्री सन्तोषी लाल गोयल तथा उनके साथियों का उत्साह देखिए कि इतने ही स्वल्प समय में उन्होंने बड़े प्रेम से सब यात्रियों को चाय और मिष्ठान्न वितरित कर दिया।

जब गाड़ी कोटा पहुंची तब सुबह के चार बजे थे। वर्षा हो रही थी। पर कोटा के नर-नारी रात के दो बजे से ही गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहे थे। ब्राह्ममुहूर्त की वेला में यात्री भी जागे और श्री श्यामलाल और श्री सत्यपाल की चिमटामण्डली ने उस अमृत वेला के वातावरण को प्रभु-भक्ति के गीतों से सुरभित बना दिया।

१४ अगस्त को रतलाम होती हुई जब गाड़ी रात को आठ बजे बड़ौदा पहुंची तब तो पं० आनन्दप्रिय के नेतृत्व में आर्य कन्या गुरुकुल की कन्याओं ने बैण्ड बजाकर और गीत गाकर ऐसा भावभीना अभिनन्दन किया कि सभी यात्री विभोर हो गए। ये कन्याएं सब यात्रियों के लिए भोजन के पैकेट लेकर दोपहर १२ बजे से गाड़ी की प्रतीक्षा कर रही थीं, क्योंकि पहले के कार्यक्रम के अनुसार गाड़ी को उसी समय पहुंचना था। उनको नए समय की सूचना नहीं थी। होती तब भी स्पेशल गाड़ियों के लिए समय पर पहुंचना हमेशा ही कठिन होता है।

१५ अगस्त, १९७३ को प्रातः जब सारा देश मुक्ति-पर्व के उपलक्ष्य में राष्ट्रीयध्वज-वन्दन में व्यस्त रहा होगा, तब यह विशेष गाड़ी बम्बई सेन्ट्रल पर पहुँची। वर्षा हो रही थी। येन-केन-प्रकारेण यात्रीगण विश्राम स्थान पर पहुंचे। आर्य समाज काकड़वाड़ी में और उसके निकट एक मारवाड़ी धर्मशाला में सब यात्रियों के ठहरने की व्यवस्था की गई थी।

१५ अगस्त की छुट्टी

१६ अगस्त को बम्बई से जहाज चलना था, पर १५ अगस्त को हो गई छुट्टी। सब सरकारी और गैरसरकारी कार्यालय बन्द, डाकखाने भी बन्द। सैंकड़ों यात्रियों के टिकट बनने से पहले सब के पासपोर्टों की जांच होनी थी, हैल्थ सर्टिफिकेट की जांच होनी थी और उसके बाद सब यात्रियों को यात्रा के लिए डालरों की व्यवस्था करनी थी। छुट्टी के दिन यह सब कैसे हो ! 'मुगल लाइन्स' के कर्मचारियों और अधिकारियों के लिए भी विषम समस्या थी।

यदि उक्त सब व्यवस्थाएं उचित समय तक पूरी नहीं हो पातीं तो जहाज कैसे जाएगा—या जितने यात्रियों की ये सब औपचारिकताएं १६ अगस्त को पूरी हो सकें उतने ही यात्रियों को लेकर जहाज रवाना हो जाए, तो शेष यात्रियों का क्या होगा ?

इस विचित्र परिस्थिति को सुलझाने में एक अन्य मनोभाव सहायक बना। 'मुगल लाइन्स' के कर्मचारी इस बात से अत्यन्त प्रसन्न थे कि अब तक हजारों मुसलमान प्रतिवर्ष हज यात्रा के लिए विदेश जाते रहे, पर हिन्दुओं की टोली पहली बार एक धार्मिक सम्मेलन में शामिल होने के लिए विदेश जा रही है। समुद्र-यात्रा को पाप समझने वाले घरघुस हिन्दू आखिर अपने घरों की चहार-दिवारी से बाहर निकले तो सही। जातीय स्वाभिमान और राष्ट्रीय गौरव की इस भावना ने उन कर्मचारियों को प्रेरित किया और वे स्वेच्छा से छुट्टी के दिन भी काम करने को तैयार हो गए। काम भी छोटा नहीं था। ६०० से अधिक यात्रियों के पासपोर्टों की बारीकी से जांच, और फिर टिकट बनाना और फिर डालरों की व्यवस्था करना कुछ घंटों में सम्भव नहीं था। १५ अगस्त को दिन में तो दोपहर के बाद 'मुगल लाइंस' के दफ्तर में काम चलता ही रहा, रात भर भी काम चलता रहा। तब कहीं १६ अगस्त को जहाज चलने के समय तक सब काम बड़ी कठिनाई से पूरा हो पाया। कुछ यात्रियों के पासपोर्ट डाक से आने वाले थे, किन्तु १५ अगस्त को डाकखाने की छुट्टी हो जाने के कारण वे नहीं आ पाए। इसलिए उन्हें हर हालत में १६ अगस्त की डाक की प्रतीक्षा करनी थी। कुछ यात्रियों के पासपोर्टों में कहीं कोई तकनीकी भूल निकली, तो उसे भी उचित अधिकारियों के पास भागदौड़ करके पूरा किया गया। जो भाई-बहन १६ अगस्त की शाम को ४ बजे तक भी अपने पासपोर्ट ले आए, उन सबके टिकट बना दिए गए। यदि 'मुगल लाइन्स' के कर्मचारियों का यह हार्दिक सहयोग न होता तो यह सब काम समय पर पूरा होना कठिन था। कुछ यात्री रह जाते सो अलग।

१६ अगस्त को ही प्रातः ११ बजे तत्कालीन केन्द्रीय नौ-परिवहन मंत्री श्री राजबहादुर इन्दिरा डौक पर यात्रियों को विदाई देने के लिए पधारे। उन्होंने स्नेहपूर्ण शब्दों में यात्रियों को संबोधित करते हुए कहा : "मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि हजारों सालों के पश्चात् भारतीय यात्रियों का यह समूह विदेश जा रहा है। इच्छा होती है कि मैं भी आप लोगों के साथ चलता। मुझे आशा है, आप लोग अपने देश और धर्म के गौरव की छाप मौरिशसवासियों के हृदय पर छोड़कर आएंगे।"

इसके बाद यात्री कस्टम हाउस में घुसे। सब के सामान की तलाशी ली गई। और एक एक करके यात्री जहाज पर चढ़ने शुरू हुए।

'अकबर' सागर की लहरों पर

शाम को जब पश्चिम दिशा में सूर्य अस्ताचल को जा रहा था, तब भारत के इस पश्चिमी तट से 'एम० वी० अकबर' नामक जलपोत हिन्द महासागर में ढाई हजार मील दूर और पश्चिम की ओर आबाद मौरिशस टापू के लिए अपनी गज-गति से रवाना हुआ। एक बार फिर इन्दिरा गोदी की गोद वैदिक धर्म की जय के नारों से भर गई। ज्यों-ज्यों जलपोत आगे बढ़ता गया, मातृभूमि का तट आंखों से दूर होता गया, दूर होती गई बम्बई की भव्य गगनचुम्बी अट्टालिकाएं और रात को भी दिन की तरह जगमगा देने वाली बिजली की दीपावलियां। जब तक मां आंखों से ओझल नहीं होती तब तक बच्चे को विश्वास रहता है कि मां के साथ ही हूं। वैसे ही जब तक किनारा दीखता रहा तब तक ऐसा नहीं लगा कि हमने भारत छोड़ दिया है। पर जैसे जैसे 'अकबर' आगे बढ़ता गया, वैसे ही अन्धकार भी बढ़ता गया—कुछ देर तक किनारे की रोशनी दूर से भी दिप-दिप करती हाथ हिलाती रही। फिर सब कुछ अन्धकार में मग्न !

यात्री भी दिन भर की दौड़-धूप के कारण थके हुए थे, सब शीघ्र ही सो गए। अगले दिन प्रातः काल जब सूर्योदय हुआ तब तक सब यात्री अपने आपकोपूरी तरह समुद्री वातावरण से ओत प्रोत पाने लगे। चारों ओर अथाह जलराशि, नील निरभ्र आकाश, न कहीं आबादी, न जमीन, न 'अकबर' के सिवाय आता जाता कोई और जहाज। जमीन की और सघन आबादी की अभ्यस्त आंखों को कैसी विचित्र लगती थी यह पानी की दुनिया, अपने में घिरी, सिमटी और 'एकमेवाद्वितीयम्' की प्रतीक !

'अकबर' का विवरण

पर आगे बढ़ने से पहले 'अकबर' से परिचय प्राप्त कर लें। आखिर आठ दिन इसके साथ रहना है। यह जलपोत डेनमार्क में बना था। इसके बनने में डेढ़ साल लगा और ७ करोड़ रुपया लागत आई। भारत ने अपनी ओर से आर्डर देकरु १,५०० यात्रियों की वहन-क्षमता का यह पोत खास तौर से तैयार करवाया था। २५ नवम्बर, १९७१ को यह जलपोत 'मुगल लाइन्स' को दिया गया और बम्बई के बन्दरगाह पर इसकी रजिस्ट्री हुई। इसका कुल वजन था ८,८२० टन और लगभग ८,००० टन वजन का सामान इसमें लादा जा सकता था। ४९१ फुट लंबा और ६१ फुट चौड़ा यह जलपोत दो डीजल इंजिनों से सज्जित था जिनमें से प्रत्येक इंजिन ४,८०० अश्वशक्ति वाला था। एक या दोनों इंजिनों से यह पोत चल सकता था। दोनों इंजिनों के इकट्ठा चलने पर इसकी अधिकतम गति २२॥ मील प्रतिघंटा होती। यह पोत यात्रियों को ले जाने के काम भी आता था और सामान ढोने के भी। इसमें प्रतिदिन १८ टन डीजल आयल की खपत होती। सामान रखने की इसमें ८,८०,००० घनफुट जगह थी। इसमें १,७०० टन पेयजल और १,५०० टन डीजल आयल के भंडार की क्षमता थी जो एक मास से लेकर ३ मास तक के लिए पर्याप्त होते। इसके नाविक, कर्मचारी और अधिकारियों की कुल संख्या १६९ थी। प्रथम श्रेणी के वातानुकूलित ८० केबिन थे जिनमें १६० मुसाफिर यात्रा कर सकते थे, अपर डैक में ४९५ और लोअर डैक में ८४० । इस प्रकार कुल १४९५ यात्री इस पोत में एक ही

समय यात्रा कर सकते थे। सारा जहाज फायर-प्रूफ बनाया गया था। अग्निकांड की स्थिति में आग बुझाने के लिए केबिन की छत से पानी के फव्वारे छूटने की व्यवस्था थी। हरेक केबिन में संकट-काल की स्थिति का सामना करने के लिए रबर की बनी गेरुए रंग की जीवन-पेटिकाएं (लाइफ बेल्ट) रखी थीं। एक दिन सब यात्रियों को ये पेटियां गले में पहना कर रिहर्सल भी कराया गया। ओम् के झंडे के रंग से मिलते जुलते केसरिया रंग की जीवन पेटिकाओं को गले में धारण करके जब सब यात्री पंक्ति में खड़े हुए तब एकदम ऐसा दृश्य उपस्थित हो गया जैसे सैंकड़ों परिव्राजकों की सेना धर्म-प्रचार के लिए सन्नद्ध खड़ी हो।

इसके अलावा जलपोत में आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित एक छोटा सा चिकित्सालय भी था जिसमें किसी गंभीर केस की हालत में मेजर आपरेशन और रक्तदान तक की व्यवस्था थी। अलग केण्टीन था जिसमें कोका-कोला और फैण्टा आदि पेय सुलभ थे। अलग बार (मद्य-पान का स्थान) था, पर आर्य यात्रियों को उसकी आवश्यकता नहीं पड़ी। प्रथम श्रेणी वालों के लिए सुन्दर गलीचों और सोफों से युक्त बड़ा लूंज (विश्राम-कक्ष) था, जिसमें प्यानो रखा था। साथ ही कैरम, पिंगपोंग और रिंग खेलने की व्यवस्था थी। छत पर फिल्म दिखाने का प्रबन्ध भी था। भोजन और चायपान की व्यवस्था जहाज पर ही थी। भोजन-कक्ष भी सजा हुआ था—हवा और रोशनी की अच्छी व्यवस्था थी। प्रथम श्रेणी के भोजन-कक्ष में एक साथ ८० व्यक्ति बैठ सकते थे और अपर डेक की श्रेणी में एक साथ ३५५ व्यक्ति। आर्य यात्रियों में कोई लोअर डैक का मुसाफिर नहीं था—केवल प्रथम श्रेणी और अपर डैक के ही मुसाफिर थे। दोनों में स्नानागार और शौचालय इतनी संख्या में थे कि किसी को अनावश्यक प्रतीक्षा करने की नौबत न आवे। जहाज के कर्मचारियों में ईसाइयों और मुसलमानों का बाहुल्य था, कुछ हिन्दू और सिख कर्मचारी भी थे। जहाज की अपनी एक छोटी-सी जेल भी थी जिसमें किसी गैरकानूनी हरकत करने वाले अपराधी को हिरासत में रखा जा सकता था।

जहाज के कप्तान श्री दुबे बड़े सौम्य स्वभाव के व्यक्ति थे और उत्तर प्रदेश के निवासी थे। कप्तान तथा अन्य वरिष्ठ अधिकारी मौरिशस के इन आर्य यात्रियों के साथ एक विचित्र प्रकार की आत्मीयता अनुभव करते थे। यात्रा की समाप्ति पर 'अकबर' के पर्सर ने, जो एक मुसलमान सज्जन थे, बड़े निष्कपट भाव से कहा था : "हमने मुसाफिर तो बहुत ढोये—रोज हमारा काम ही मुसाफिरों को लाना और ले जाना है—पर इतने संयत, सुशील, सफाई पसंद, शान्तिप्रिय और भले मुसाफिरों से हमारा साबका नहीं पड़ा और न ही कभी इतनी आत्मीयता अनुभव हुई।" फिर थोड़े संकोच के साथ कहा था : "मैं स्वयं मुसलमान हूं। हर साल हम सैंकड़ों हज-यात्रियों को मक्का-मदीना ले जाते हैं, उनमें बड़े-बड़े मुल्ला-मौलवी और एक से बढ़-कर एक आलिम-फाजिल भी होते हैं, पर उनमें न इतनी सफाई मिली, न संयम और शान्तिप्रियता, न इतने सहयोग की भावना।" और अन्त में आसमान की ओर हाथ उठा कर दुआ सी करते हुए कहा था—"या खुदा ! अगर सारे हिन्दुस्तान के वाशिन्दे इन यात्रियों जैसे ही हो जाएं तो मेरा वतन जन्नत न बन जाए !" आर्य यात्रियों के सद् व्यवहार के लिए इससे बढ़कर सर्टिफिकेट और क्या हो सकता हैं ?

सब यात्रियों का यह भी अनुभव रहा कि जहाज के अधिकारी इन आर्य-यात्रियों के सम्पर्क से आम बातचीत में अंग्रेजी छोड़कर संस्कृत-निष्ठ हिन्दी के शब्दों का प्रयोग करने लगे थे और सभी कर्मचारी 'गुड मार्निंग' छोड़कर 'नमस्ते' से अभिवादन करने लगे थे। जब सवेरे सवेरे रोज जहाज की सफाई और धुलाई करते हुए निम्न श्रेणी के कर्मचारी भी प्रेम से 'नमस्ते' करते तो कितना अच्छा लगता था !

जलपोत के यात्री

'अकबर' से परिचय के बाद थोड़ा सा यात्रियों से भी परिचय प्राप्त कर लें। जहाज में कुल ६३७ यात्री थे। यह सन्तोष की बात है कि जितने भी यात्रियों ने पासपोर्ट बनवाए थे, अन्तिम समय तक उन सभी के टिकट बन गए और कोई यात्री पीछे नहीं छूटा। यदि बम्बई आकर भी किसी को वापिस अपने घर लौटना पड़ता तो उसके मन

की क्या गति होती !

इन ६३७ यात्रियों को हम समस्त भारत का प्रतिनिधि कह सकते हैं—क्योंकि भारत का शायद ही कोई राज्य बचा हो जिसके निवासी इन यात्रियों में शामिल न हों। लगभग १०० यात्री तो केवल आन्ध्रप्रदेश से ही आए थे। राजस्थान से भी ७५ से कम नहीं आए होंगे। उत्तर प्रदेश, पंजाब, दिल्ली, हरियाणा, बंगाल, बिहार, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के तो थे ही। गुरुकुल चित्तौड़ के संस्थापक आचार्य, बालब्रह्मचारी, स्वामी व्रतानन्द वार्धक्य के बावजूद यात्री बन कर आए थे। आर्ष गुरुकुल एटा के संस्थापक स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी अपनी शिष्य मंडली और वेदपाठी पं० रामदत्त शर्मा के साथ उपस्थित थे। मध्यप्रदेश के स्वामी दिव्यानन्द, नान्देड़ गुरुकुल के संस्थापक पीतवस्त्रधारी वानप्रस्थी शिवमुनि जी, मेरठ की श्रीमती शकुन्तला आर्या, हैदराबाद के श्री कान्तिमुनि वानप्रस्थी, श्री बालरेड्डी, छगनलाल विजयवर्गीय और पंडिता सुशीला विद्यालंकृता तथा बम्बई की समाज-नेत्री बहिन सुशीला देवी, बम्बई से श्री परशुराम दुधात, पंजाब से ज्ञानी गुरुदयालसिंह और बहिन कमला आर्या, चंडीगढ़ से पं० आशुराम, मध्यप्रदेश से श्री राजगुरू, राजस्थान से श्री छोटूसिंह एडवोकेट, बंगाल से श्री रामलखन शास्त्री, बिहार से पं० रामानन्द शास्त्री, उड़ीसा से श्री प्रियव्रतदास और उनकी पत्नी, बड़ौदा से स्नातिका प्रतिभा पंडित, ब्यावर से वैद्य रविदत्त, ऋषिकेश से श्री नारायणदास कपूर, दिल्ली से सार्वदेशिक सभा के उपमंत्री श्री भगवानदेव शर्मा, मुजफ्फरनगर से ब्रह्मचारी बलदेव, झांसी से डा० सुरेशचन्द्र शास्त्री और लखनऊ से श्री सच्चिदानन्द शास्त्री—आदि-आदि। दिल्ली से दैनिक 'हिन्दुस्तान' के प्रतिनिधि के रूप में श्री क्षितीश वेदालंकार, नवभारत टाइम्स' के प्रतिनिधि श्री फतेहचंद शर्मा आराधक, और 'हिन्दुस्थान समाचार' समिति के प्रबन्ध-संचालक श्री बालेश्वर अग्रवाल पत्रकारों के रूप में उपस्थित थे। प्रसिद्ध साहित्यकार श्री क्षेमचन्द्र सुमन, जो मौरिशस में आर्य महासम्मेलन के अवसर पर होने वाले कवि सम्मेलन के मनोनीत अध्यक्ष थे, उसी जहाज में थे। श्री वीरेन्द्रसिंह वीर, श्री वेगराज, श्री श्यामलाल और श्री सत्यपाल जैसे सुगायक और भजनोपदेशक यात्री-मंडली में शामिल थे। सूची को लम्बा करने से क्या लाभ ? संक्षेप में इतना ही कहा जा सकता है कि इस यात्री-मण्डल में पत्रकार, साहित्यकार, लेखक, वक्ता, डाक्टर, वकील, प्राध्यापक, शिक्षक, ब्रह्मचारी, व्यवसायी, ठेकेदार, उद्योगपति, आदि समाज के उच्च मध्य स्तर के विभिन्न वर्गों के लोग शामिल थे। अनेक राज्य, अनेक भाषाएं, अनेक वेष, अनेक व्यवसाय—पर सब एक ही उद्देश्य से अनुप्राणित। 'यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्' का कैसा अच्छा उदाहरण ! अनेकता में एकता का भारतीय संस्कृति का कैसा उत्तम निदर्शन ! सार्वदेशिक सभा का कार्यालय भी जलपोत पर अवस्थित था। श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक, श्री प्रेमचंद शर्मा पूर्व गणक सभा, श्री रामभूल शर्मा गणक सभा, श्री दानसिंह मेहरा लिपिक तथा टाइपिस्ट सभा इस कार्यालय के अंग थे। जलपोत पर कार्यालय रखने का आयोजन बड़ा सहायक एवं उपयोगी सिद्ध हुआ। मौरिशस में सभा का कार्यालय डी० ए० वी० कालेज में था।

आधुनिकतम साधनों से और सुविधाओं से सुसज्जित 'अकबर' सागर के वक्ष पर अपने शक्तिशाली इंजिनों के बल पर लहरों को चीरता हुआ चला जा रहा था—जैसे कोई महान् दैत्य फुंकारता हुआ चला जा रहा हो। उसकी फुंकार से पानी में दूध की पिचकारी सी छूटती और चारों ओर फुहारें ऐसे फैल जातीं—जैसे जहाज के चारों ओर सफेद गोटे की गोट लग रही हो। इसी प्रकार जहाज की पूँछ से भी दूध की पिचकारी सी छूटती और दूर तक पानी को दूधिया करती जाती। धीरे-धीरे जहाज अरब सागर से हिन्द महासागर की ओर बढ़ता गया।

'रत्नाकर' और 'महोदधि'

अरब सागर का प्राचीन नाम है 'रत्नाकर' और बंगाल की खाड़ी का 'महोदधि'। ये दोनों नाम अन्वर्थक लगते हैं। चिरकाल से इसी अरब सागर के रास्ते अरब देशों, अफ्रीकी महाद्वीप और भूमध्यसागर तटवर्ती यूरोपीय देशों से भारत का व्यापार-वाणिज्य चलता आया है। इसी व्यापार के कारण भारत की इतनी समृद्धि बढ़ी कि वह 'सोने की चिड़िया' कहलाने लगा। इसी से 'रत्नाकर'

नाम की सार्थकता है। रहा 'महोदधि'। वह बंग सागर का पर्याय है। बंगाल की खाड़ी बहुत गहरी है—शायद जिस प्रकार के तूफानों के कारण बंगलादेश, पश्चिमी बंगाल और उड़ीसा आदि बंगसागर के तटवर्ती प्रदेशों को बार-म्बार ध्वंस का शिकार होना पड़ता है, इसमें इस खाड़ी की अधिक गहराई भी एक कारण हो और इस गहराई के कारण ही उसका नाम 'महोदधि' पड़ा हो। एक बात स्मरणीय है : रामेश्वरम् के मन्दिर में मुख्य द्वार पर द्वार-पाल के रूप में एक ओर 'रत्नाकर' नाम की पाषाण-प्रतिमा है और दूसरी ओर 'महोदधि' नाम की। ये दोनों सागर जैसे हिन्दमहासागर की पूर्वी और पश्चिमी भुजाएं हैं। जिन ऋषियों ने इस प्रकार की कल्पना की है और बृहत्तर भारत का ऐसा सांकेतिक चित्र उपस्थित किया है, उनकी कल्पना की बार-बार बलिहारी !

समुद्री व्याधि से ग्रस्त

१७ अगस्त के सवेरे से ही जहाज डोलने लगा। जब सामने से लहरें आतीं तो जहाज सधे हुए घुड़सवार की तरह आगे-पीछे हिलता। यही अंग्रेजी में 'पिचिंग' कहलाता है। जब यह पिचिंग देर तक चले तो अच्छा नहीं लगता। मन में अस्वस्ति और शरीर में अस्वस्थता प्रतीत होने लगती है। लेकिन उसे रोका कैसे जाए ? लहरों की उंचाई जितनी अधिक होगी, जहाज उतना ही अधिक डोलेगा। झूले पर आदमी झूल रहा हो तो उस पर से उतर जाए। पर यहां तो एक बार जहाज में बैठे, फिर मंजिल तक पहुंचे बिना उतरने का कोई प्रश्न ही नहीं। यह मंजिल भी आठ दिन से पहले आने वाली नहीं।

धीरे धीरे लोगों की तबियत खराब होनी शुरू हुई। कुछ भी खाने की इच्छा न होती। जी हमेशा मिचलाता रहता। खाया-पीया सब उल्टी के रास्ते बाहर। समुद्री व्याधि (सी-सिकनेस) प्रारंभ हो गई। पहले कुछ यात्रियों की तबियत खराब हुई, फिर और अधिक लोग चपेट में आ गए। जहाज के डाक्टर और नर्स सवेरे सारे जहाज का 'राउंड' लगाते, जिनकी तबियत खराब होती उन्हें गोलियां देते और साथ ही ढाढस बंधाते। समझाते कि यह सामान्य बात है, अक्सर ऐसा होता ही है। पर कुछ लोगों की जल्दी घबराने की आदत होती है। शायद इसी-लिए नीतिकारों ने कहा है :—"एतत् परमं तपः यद् व्याहितस्तप्यते"—व्याधिग्रस्त होने पर जो कष्ट होता है उसे धैर्यपूर्वक सहन करना भी भारी तप है। पर जहाज के ९९ प्रतिशत यात्री पहली बार समुद्र-यात्रा पर निकले थे। उन्हें इससे पहले इस प्रकार की यात्रा में होने वाले कष्ट का कोई अनुभव नहीं था। यात्रियों में महिलाओं की संख्या भी काफी थी। यह समुद्री व्याधि पहले उन्हीं से शुरू हुई। फिर तो दिग्गज भी धराशायी होने लगे। बहुतों का मन पड़ौसियों की तबियत खराब होते देख कर अस्व-स्थ हो जाता। कुछ महिलाएं रोने लगीं। कुछ ने कानों को हाथ लगाया कि अब कभी समुद्र-यात्रा का नाम नहीं लेंगे। एक सम्पन्न व्यक्ति सपरिवार यात्रियों में शामिल थे—उनकी पत्नी, लड़का, नौकर और स्वयं की चिकित्सा के लिए डाक्टर और पत्नी की चिकित्सा के लिए वैद्य साथ में। वैद्य और डाक्टर अलग-अलग इसलिए कि खुद को आयुर्वेद माफिक नहीं और पत्नी को ऐलोपैथी माफिक नहीं—इसलिए दोनों के लिए अलग-अलग चिकित्सक। पर दैव-दुर्विपाक देखिए– वे स्वयं अस्वस्थ, उनकी पत्नी अस्वस्थ, युवा पुत्र अस्वस्थ, नौकर अस्वस्थ और दोनों चिकित्सक अस्वस्थ। वे कहने लगे—"मुझसे एक लाख रुपया ले लो, पर मुझे वापिस बम्बई पहुंचा दो।"

इस प्रकार अपर डैक में यदि ९० प्रतिशत यात्री अस्वस्थ हुए तो प्रथम श्रेणी में ५० प्रतिशत। पर अपर डैक में और प्रथम श्रेणी में दोनों ही जगह डैक पर खूब खुली हवा थी। वहां बैठने पर राहत मिलती। ज्यों-ज्यों पश्चिम की ओर बढ़ते जा रहे थे, त्यों-त्यों ठंड भी बढ़ती जा रही थी। अगस्त का बरसात का मौसम, समुद्र वैसे ही क्षुब्ध और रफ। ऐसे समय भी आर्यों में उत्साह की कमी नहीं। लोग भजन-कीर्तन-गोष्ठी और सन्ध्या-हवन आदि के द्वारा अपना समय व्यतीत करते, उनमें रस लेते। ऐसे समय जब एक दिन किसी ने भाषण देते हुए समुद्र-यात्रा का महत्व बतलाया और कहा—"धन्य हैं वे जिन्हें इस प्रकार समुद्र-यात्रा का अवसर मिला है"—तब जिन की तबियत ठीक नहीं थी उन्हें बड़ी खीझ महसूस हुई। पर तबियत ठीक होने केबाद उन्होंने भी उस बात के महत्व का अनुभव किया।

'हिन्दुस्तान' के
सहायक सम्पादक

श्री क्षितीश वेदालंकार

महा सम्मेलन को सफल बनाने
में जिनका अप्रतिम योग रहा

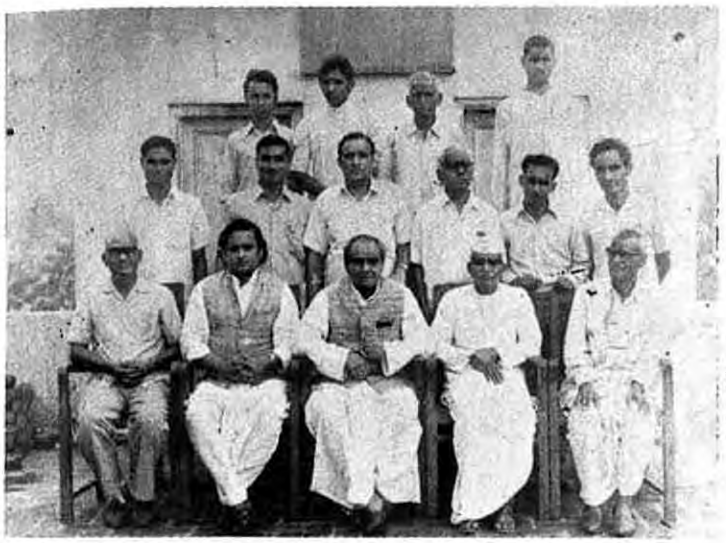

सार्वदेशिक सभा के अधिकारी
तथा कर्मचारी गण

'हिन्दुस्तान
समाचप'
संवादसमिति
के संचालक

श्री बालेश्वर अग्रवाल

श्री शिवकुमार गोयल,
संवाददाता

श्री प्रेमचन्द

श्री फतहचन्द शर्मा आराधक,
'नवभारत टाइम्स'

द्वादश आर्य महासम्मेलन की स्वागतकारिणी के सदस्य

श्री मोहनलाल मोहित
स्वागताध्यक्ष

श्री डा० हरिदत्त घूरा
अध्यक्ष आर्य सभा मौरिशस

श्री रामलाल गुमानी
मंत्री स्वागत समिति

श्री ब्रह्मदत्त नन्दलाल
कोषाध्यक्ष

श्री बी घरभरण जी
मंत्री श्रम एवं समाज कल्याण

श्री राम सुन्दर मोदन एम. एल. ए.
अध्यक्ष प्रचारणी सभा

श्री गौतम तिलक एम. एल. ए.
आर्य सभा मौरिशस

श्री यशकरण मोहित
सहायक मंत्री

श्री सुखी राम प्रसाद
उपाध्यक्ष

श्री श्रद्धानन्द स्वादीन
सदस्य

श्री धनीलाल सोवरन
मंत्री प्रचारिणी सभा

श्री हरीलाल चूड़ामणि
सहायक मंत्री

श्री लेखराज मणि गंगा
सदस्य प्रचारिणी सभा

श्री मोतीलाल तोरल
सहायक मंत्री

श्रीमती लखावती हरगोविन्द
सदस्य

श्री नारायणदास सुकन
उपाध्यक्ष

श्री प्रहलाद राम शरण

श्री देव करण सकुन
कोषाध्यक्ष प्रचारिणी सभा

श्री टी. कालीचरण
मंत्री

पं. तिलकधारी
सम्पर्क अधिकारी

श्री बी. दशरथ
उपाध्यक्ष प्रचारिणी सभा

पं. जयराम सीतोहोल
अध्यक्ष सेवा समिति

भारत से मौरिशस गए दो अन्य यात्री

श्री विद्याभूषण प्रसाद
वैशाली

श्री जयसिंह गायकवाड़
जबलपुर

डैक पर दिन भर मेला सा लगा रहता। सवेरे और शाम को तो हवा इतनी प्राणदायक होती कि बहुतों की तबियत इस स्वच्छ हवा ने ही ठीक कर दी। जहां आस-पास सैकड़ों मीलों तक कहीं बस्ती का नाम-निशान न हो, वहां वायु-दूषण का भी अवसर कहां! लोग डैक पर टहलते, व्यायाम करते, प्राणायाम करते, उठते-बैठते, गप्प लगाते, पढ़ते-लिखते और विभिन्न विषयों की गोष्ठियां आयोजित करते तथा परस्पर विचार-विनिमय करते।

कई दिन से न कोई अखबार, न कोई डाक, न कोई मुलाकाती, न कोई चिट्ठी-पत्री, न कोई बस्ती, न कोई पहाड़, न कोई जंगल, न कोई टापू। ये सब जैसे 'सपने की सम्पत' बन गए। कैसी आत्म-केन्द्रित थी 'अकबर' की दुनिया, सारे संसार से कटी और चारों ओर अथाह जल-राशि से घिरी! बम्बई से जब चले थे, तब समुद्र का पानी मटमैला था, फिर धीरे-धीरे नीला होने लगा। ज्यों-ज्यों भूमध्यरेखा निकट आती गई, त्यों-त्यों समुद्र का जल कृष्णायमान होने लगा। नीले रंग की भी कितनी छायाएं (शेड्स) हो सकती हैं—कभी उजली, कभी हल्की, कभी मिश्रित—यह सब लम्बी समुद्र यात्रा में ही पता लगता है।

कृष्ण जन्माष्टमी

इसी तरह २१ अगस्त को आ गई कृष्ण जन्माष्टमी। यात्रा करते-करते पांच दिन बीत चुके थे। अस्वस्थ यात्री भी स्वस्थ होते जा रहे थे। फिर जन्माष्टमी के पर्व का उत्साह। स्वामी ब्रह्मानन्द दण्डी की अध्यक्षता में डैक पर ही कृष्ण जन्माष्टमी की सभा हुई। इस सभा में जहाज के कप्तान भी आए, तथा अन्य अधिकारी भी। विभिन्न वक्ताओं ने योगेश्वर कृष्ण के जीवन के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला। इसी अवसर पर श्री क्षितीश वेदालंकार ने महाभारत के घटनाक्रम का विश्लेषण करते हुए बताया: "जिस प्रकार मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने उत्तर भारत और दक्षिण भारत को राजनैतिक दृष्टि से एकता के सूत्र में आबद्ध किया था, उसी प्रकार श्रीकृष्ण ने भारत के पूर्वी खण्ड और पश्चिमी खण्ड को एकता के सूत्र में आबद्ध करके और केन्द्र में सुदृढ़ शासन की स्थापना करके भारत को अखण्ड बनाया था। उसी सुदृढ़ केन्द्र का परिणाम था कि भारत लगभग चार हजार साल तक अजेय बना रहा। जब भारत का केन्द्रीय शासन कमजोर हो गया, तभी विदेशियों को इस देश पर हमला करने का साहस हुआ और भारत को एक हजार साल की लम्बी अवधि तक पराधीनता का दुख भोगना पड़ा। कहां तो आचार्य चाणक्य ने कहा था: "न त्वेव आर्यस्य दास भावः," और कहां यह सहस्र वर्ष व्यापिनी दासता!" श्री वेदालंकार के युक्तियुक्त प्रमाण-पुरस्सर प्रवचन को अनेक यात्रियों ने अपनी समुद्र-यात्रा की सब से बड़ी उपलब्धि माना।

२० अगस्त को प्रातः दस बजे जब 'अकबर' ने भूमध्य-रेखा पार की, तब एक विचित्र सा रोमांच हुआ। यह रेखा कहीं खिंची हुई तो है नहीं, भूगोलविदों ने दोनों ध्रुवों के हिसाब से पृथ्वी को दो गोलार्धों में बांटा हुआ है। उन्हीं दोनों उत्तरी और दक्षिणी गोलार्धों को समान रूप से विभक्त करने वाली काल्पनिक रेखा है—भूमध्यरेखा। इसे पार करने का मतलब है कि अब हम पृथ्वी के उत्तरी गोलार्ध को पारकर दक्षिणी गोलार्ध में प्रवेश कर रहे हैं। भूगोल के तथ्य के हिसाब से रेखांश की हर १५ डिग्री पर समय में एक घंटे का अन्तर पड़ जाता है। प्रशांत महा-सागर में जब जहाज एशिया और अमेरिका के बीच १८० रेखांश पर होते हैं, तब उन्हें आते या जाते एक पूरा दिन घटाना या बढ़ाना पड़ता है। इसी रेखांश को अंग्रेजी में 'डेट लाइन' कहा जाता है। 'अकबर' भी जब भूमध्यरेखा के बाद रेखांश की १५ डिग्री पार कर गया तब घड़ियां एक घंटा पीछे कर दी गई और जहाज के सब काम उसी हिसाब से चलने लगे। इतने लोगों के लिए प्रतिदिन दोनों समय (दिन में १२ बजे और रात्रि को ८ बजे) भोजन की, तथा दोनों समय (प्रातः ६ बजे और सायं ४ बजे) चाय की, यथा समय व्यवस्था करना भी अपने आप में एक बहुत बड़ा आयोजन था, जिसे जहाज के कर्मचारी कुशलता से निभाते थे। रोज ठीक समय पर चाय की और भोजन की घंटी बज जाती।

एक दिन जहाज के कप्तान से बात करने पर पता लगा कि हमारी आंखें एक बार में चारों तरफ २५० वर्ग-मील में फैला हुआ समुद्र देख सकती हैं—यही हमारी आंखों की क्षितिज-रेखा है। फिर जहाज के कप्तान ने यह

भी बताया कि उस समय जिस जगह समुद्र में हम चल रहे हैं यहां से क्षितिज-रेखा की दूरी तक कहीं कोई जमीन नहीं है। एक यात्री ने पूछा कि हमारा जहाज जिस स्थान पर चल रहा है, उस जगह समुद्र की गहराई कितनी है। कप्तान ने यंत्र से देखकर बतलाया—'लगभग चार मील'। पानी की गहराई में मनुष्य जितना नीचे तक उतर सकता है—मुश्किल से कुछ सौ फुट—उसके हिसाब से चार मील की गहराई की कल्पना करते-करते भी दिमाग चकराने लगे। इस प्रकार की जानकारी के साथ जब यह भी पता लगता है कि समुद्रों की अधिकतम गहराई लगभग ६ मील और पृथ्वी की अधिकतम ऊंचाई भी लगभग ६ मील है (संसार के सबसे ऊंचे पर्वत माउंट एवेरेस्ट की ऊंचाई २९,२०० फुट है जो ६ मील के लगभग बनती है) तो प्रकृति के इस महान् सन्तुलन पर आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। प्रकृति में इस संतुलन को कायम रखने वाले प्रभु की लीला का तो कहना ही क्या! जमीन पर रहने के अभ्यस्त मानव को समुद्र के बारे में अधिक सोचने की आदत नहीं, अन्यथा समुद्रों का निर्माण भी एक बहुत बड़ा चमत्कार है। तभी तो वेद ने कहा है: "यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः।"—हिमाच्छादित चोटियों वाले पर्वत और नाना नदी-नदों से समन्वित समुद्र जिसकी महिमा गाते हैं···अब जब पृथ्वी के खनिज-भंडार समाप्त होने लगे हैं, तब फिर वैज्ञानिकों का ध्यान अमुद्र की ओर गया है। अब समुद्र से वनस्पति, प्रोटीन, नाना धातुएं और पैट्रोल प्राप्त करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। पौराणिक कथा के अनुसार समुद्र मंथन में से १४ रत्न निकले थे। अब क्या नए सिरे से समुद्र-मन्थन होगा और आधुनिक युग के लिए उपयोगी, नए प्रकार के, रत्न समुद्रगर्भ से निकलेंगे!

गोष्ठियों का आयोजन

आचार्य विष्णु शर्मा ने कहा हैं :—

काव्यशास्त्र-विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा॥

—बुद्धिमान लोगों का समय काव्य चर्चा से या शास्त्र-चर्चा से व्यतीत होता है और मूर्ख लोगों का समय सोकर गुजरता है या आपसी कलह में। आर्य यात्रियों में साहित्य-कारों और काव्य-प्रेमियों की कमी नहीं थी। एक दिन श्री सुमन की अध्यक्षता में कवि-सम्मेलन रखा गया जिसे जल-पोत के मुख्य कार्यालय से ही प्रसारित किया गया। ध्वनि-विस्तारक यंत्रों की ऐसी व्यवस्था थी कि हरेक यात्री अपने-अपने स्थान पर बैठा हुआ ही ऐसे कार्यक्रम को सुन सकता था। सब यात्रियों तक पहुँचाई जाने वाली कोई भी सूचना या आदेश इसी तरह पहुँचाया जाता था। इस कवि-सम्मेलन में अनेक कवियों ने भाग लिया। डा० सुरेशचन्द्र शास्त्री की कविता खूब प्रशंसित हुई। अगले दिन महिला कवि-सम्मेलन रखा गया जिसमें केवल महिलाओं ने भाग लिया। श्रीमती सुधा टंडन की कविता ने यात्रियों को लोटपोट कर दिया। एक दिन कुमारी प्रतिभा पण्डित की अध्यक्षता में संगीत सम्मेलन रखा गया। एक दिन सब यात्रियों को मौरिशस की धार्मिक, सामाजिक और राज-नैतिक गतिविधियों का तथा वहां हिन्दी और आर्यसमाज की स्थिति का परिचय देने के लिए उन विषयों के जान-कार लोगों के व्याख्यान प्रसारित किए गए जिससे यात्री-गण मौरिशस में जाने से पहले वहां की पूरी पृष्ठभूमि से परिचित हो जाएं। इन सब कार्यक्रमों के आयोजन में 'हिन्दुस्थान समाचार समिति' के उत्साही प्रबन्ध संचालक श्री बालेश्वर अग्रवाल ने बहुत अच्छा योग दिया। इन सब कार्यक्रमों से जहां यात्रियों को मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त हुआ, वहां समुद्र यात्रा की एकरसता से भी छुटकारा मिला।

कृष्णपक्ष चल रहा था। कृष्णपक्ष में रात को आकाश की शोभा देखते ही बनती है। बड़े नगरों में रहते हुए लोगों को आकाश की ओर देखने की फुरसत नहीं मिलती, पर यहां चारों ओर जलराशि से घिरे इस जलपोत में प्रातः काल सूर्योदय का, सायंकाल सूर्यास्त का और रात को तारों की बरात का जो सुहावना दृश्य देखने को मिलता, उससे प्रकृति-प्रेमी सहृदय व्यक्तियों की तो सारी मानसिक ऊब मिट जाती। उन्हें तो इस दृश्यावली से और डैक की शीतल-स्वच्छ वायु से जैसे नवजीवन-सा मिलता। पर लगातार ८ दिन तक भूमि का दर्शन न कर सकने के कारण यात्री वैसे ही आकुलित हो गए जैसे शिशु अपनी

मां को चिरकाल तक न देखने पर व्याकुल होता है। इसीलिए तो वेद ने कहा :—"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः" —भूमि मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूं। पुत्र अपनी माता से अधिक देर तक दूर कैसे रहे !

आखिर २४ अगस्त आया। ब्राह्मवेला के झुटपुटे में ही यह खबर फैल गई कि बादलों की ओट में कुछ पहाड़ियां सी नजर आ रही हैं। धीरे-धीरे सब यात्री डैक पर जमा होने लगे। ज्यों-ज्यों सूर्योदय होता गया और सूर्य की किरणें बादलों के आर-पार देखने की सामर्थ्य प्रदान करने लगीं, त्यों-त्यों पहाड़ियों का अस्तित्व उभरता गया। लोग जिराफ की तरह गर्दन ऊंची कर करके ताकने लगे। जब तसल्ली नहीं हुई तो दूरबीनें निकलीं और वे एक हाथ से दूसरे हाथ में जाती रहीं। अन्त में बहुमत से निश्चय हुआ कि हो न हों, ये मौरिशस की पहाड़ियां ही हैं। आदमी जमीन पर रहने का आदी है, इसलिए रोज-रोज जमीन पर रहते हुए नहीं उकताता, पर जमीन के अलावा यदि आकाश में या समुद्र में उसे कुछ दिन लगातार रहना पड़ जाए, तो वह उकता जाता है। आदमी स्थलचर जीव है न !

कैसे रहे होंगे वे पुराकाल के साहसी नाविक जिनके पास न तो आधुनिक सुख-सुविधाओं से सम्पन्न ऐसे जहाज थे, न इतने बचाव के साधन, और फिर उन्हें कुछ दिन नहीं, कई-कई महीने समुद्र में ही बिताने पड़ते थे ! कैसी रही होगी उनकी भूमि-दर्शन की ललक और कोई नया तटवर्ती प्रदेश देखते ही उन्हें कितनी प्रसन्नता होती होगी !

धीरे-धीरे सब कुछ स्पष्ट होता गया। बन्दरगाह और उसकी गोदी (डॉक) दीखने लगी। गहरे जल में खड़े और अनेक जहाज दीखने लगे। तट के पार पहाड़ियों की हरियाली दृष्टिगोचर होने लगी।

१२ बजे के लगभग एक पाइलट स्टीमर मौरिशस का झंडा फहराता हुआ 'अकबर' को वी० आई० पी० का सा सम्मान देकर उसका स्वागत करने आया और तट की ओर जाने में उसकी अगवानी करता रहा।

ठीक एक बजे 'अकबर' मौरिशस की राजधानी पोर्ट लुई के डॉक पर लग गया। सीढ़ियां लगा दी गईं। सबसे पहले जहाज के कप्तान श्री दुबे अपनी यूनिफार्म में 'अकबर' से नीचे उतरे। कुछ सामान्य औपचारिकताएं पूरी की गईं। उसके बाद मौरिशस की आर्यसभा के पदाधिकारी, श्री आनन्द स्वामी सरस्वती और श्री प्रतापसिंह शूर जी वल्लभदास तथा श्री ओम्प्रकाश त्यागी—जो पहले ही वायुयान से मौरिशस पहुंच चुके थे, जलपोत के यात्रियों का स्वागत करने, उन्हें बधाई देने और यात्रा की कुशल-क्षेम पूछने जलपोत के ऊपर आए। तब तक आर्य यात्री ओम् के झंडे हाथों में लिए, वैदिक धर्म की जय और 'भारत मौरिशस मैत्री अमर रहे' के नारे लगाते हुए 'अकबर' के डेक पर जमा हो गए थे। पासपोर्टों की जांच करने वाले और हैल्थ सार्टिफिकेटों की जांच करने वाले अधिकारी भी जलपोत के ऊपर ही आ गए और उन्होंने बारी-बारी से उन दोनों चीजों की जांच करने के पश्चात् यात्रियों को नीचे डॉक पर उतरने की अनुमति दे दी। तब तक यात्रियों के स्वागतार्थ मौरिशस के अन्य नागरिक भी डॉक पर जमा हो गए थे।

यात्री उतरे। साफ-सुथरी नई बसें तैयार थीं। एक-एक कर उनमें यात्री बैठते गए और बसें उन्हें दयानन्द नगर के पंडाल में पहुंचाती रहीं। आर्य महासम्मेलन का कार्यक्रम २२ अगस्त से ही शुरू हो चुका था—और आज था २४ अगस्त। सम्मेलन का मुख्य कार्यक्रम आज से ही प्रारंभ होना था।

पोर्टलुई में समारोह

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम पिता की आज्ञा मानकर १४ वर्ष के लिए वन को चले गए। पीछे से ननिहाल से लौटने पर जब श्री भरत को सब वृत्तान्त ज्ञात हुआ तो श्री राम को वन से वापिस लौटाने का संकल्प करके अयोध्या के नागरिकों के प्रतिनिधियों समेत वे चित्रकूट पहुंचे। भरत ने राम से अनुनय-विनय में कसर नहीं छोड़ी। पर राम ऋषियों की योजना को और राक्षस-राज रावण की समाप्ति के उद्देश्य को अधूरा छोड़कर कैसे लौट सकते थे। जब राम किसी भी तरह अयोध्या लौटने को तैयार नहीं हुए, तब भरत श्रीराम की चरण-पादुका अपने साथ लेते आए। उन चरण-पादुकाओं को सिंहासन पर विराजमान करके वे उन्हीं की ओर से राजकाज चलाने लगे और स्वयं नन्दीग्राम की पर्णकुटी में रह कर तपस्या-पूर्ण जीवन बिताने लगे। जब १४ वर्ष पूरे हो गए, वनवास की अवधि समाप्त हो गई, रावणवध के पश्चात् लंका को मित्रराष्ट्र बनाने का उद्देश्य पूरा हो गया, तब भरत कितनी व्याकुलता से राम की प्रतीक्षा कर रहे थे। जब दशकन्धर-विजयी राम अयोध्या लौटे होंगे तो भरत उनसे कितनी ललक से मिले होंगे !

भरत-मिलाप जैसा ही दृश्य आर्य-यात्रियों को मौरिशस पहुंचने पर देखने को मिला। वहां के निवासी आतुर थे और कह रहे थे : "हमारे भारत के भाई-बहन और पूज्य-जन जहाज में भरके हमें गले लगाने आ रहे हैं।" ये यात्री जिधर से भी गुजरते जाते, 'नमस्ते जी, नमस्ते जी' के प्रसन्नतापूर्ण अभिवादन सुनने को मिलते। तीन दिन का यह सम्मेलन क्या था, इसने भारत और मौरिशस के अमर सौहार्द और अविच्छिन्न पारिवारिक संबंधों को उजागर कर दिया। ऋषि दयानन्द ने विश्वभर में प्रेम की गंगा बहाने का जो स्वप्न लिया था, उसी का संक्षिप्त रूप प्रकट हो रहा था।

मौरिशस की सरकार ने, पोर्ट लुई के नगर निगम ने और अन्य संभ्रान्त नागरिकों ने इस सम्मेलन की सफलता में जो योग दिया वह अविस्मरणीय रहेगा। नगर निगम के कर्मचारियों ने इतना भव्य और विशाल पंडाल निःशुल्क बनाकर दिया था। शुगर एसोसियेशन ने पंडाल के लिए वाटर-प्रूफ चद्दरें दी थीं। बिजली बोर्ड ने बिजली मुफ्त दी थी। सरकार के मंत्रिमंडल के सदस्यों ने तथा अन्य सरकारी अधिकारियों ने मुक्त हृदय से प्रत्येक प्रकार की सहायता दी थी। यह सब क्यों न होता—आखिर इन सब के मन में सामाजिक और राजनैतिक चेतना का जितना भी अंश था, वह सब मूलरूप से आर्यसमाज की ही तो देन था। आर्यसमाज के प्रति अपने आभार को वे और किस प्रकार प्रकट करते ! फिर ऐसी अभूतपूर्व ऐतिहासिक घटना मौरिशस के इतिहास में या संसार के किसी भी देश के इतिहास में और कब घटी थी !

उत्सवमय नगर

इसके अतिरिक्त जितने दिन सम्मेलन होता रहा उतने दिन राजधानी की प्रमुख सड़कों पर जगह-जगह रात को बिजली की रंग-बिरंगी, नाना पुष्पाकृतियों से बनी, वन्दनवार ऐसे सजी रहतीं जैसे किसी विवाह वाले घर में सजती हैं। मौरिशसवासियों के लिए यह किसी विवाह से भी बढ़कर हर्ष का अवसर था। विवाह केवल दो व्यक्तियों का या दो परिवारों का मिलन होता है, पर यहां तो दो

राष्ट्रों का मिलन हो रहा था। सारा पोर्टलुई नगर जैसे उत्सवमय बन गया था। भारतीय उच्चायुक्त और उनके समस्त सहयोगी इस सम्मेलन को अपना आत्मीय सहयोग देते, यह तो स्वाभाविक ही था।

२२ अगस्त से आचार्य कृष्ण की अध्यक्षता में ब्रह्म-पारायण यज्ञ प्रारम्भ हो चुका था जो प्रातः और सायं दोनों समय चलता अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिके विद्वान स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती ने ओम् की पताका का ध्वजारोहण किया था। आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री सम्मेलन से कुछ दिन पहले पहुँच कर मौरिशस की प्रमुख आर्य समाजों में भाषण देकर और रेडियो तथा टेलीविजन पर भेंटवार्ताएं देकर टापू की जनता को वैदिक धर्म का संदेश सुना चुके थे और सम्मेलन के समस्त कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करवा चुके थे। सम्मेलन की प्रत्येक गतिविधि पर, वे नाटक के सूत्रधार की तरह, अपनी सूक्ष्मेक्षिका सदा लगाये रखते। २३ अगस्त को डी० ए० वी० कालेज में आर्य साहित्य की और हिन्दी पुस्तकों की प्रदर्शनी लग चुकी थी जिसका उद्घाटन मौरिशस में भारत के उच्चायुक्त श्री कृष्णदयाल शर्मा ने किया था।

यात्रियों की ओर से

२४ अगस्त की रात्रि को साढ़े सात बजे विशाल जनसमूह के समक्ष मुख्य सम्मेलन की कार्यवाही आरम्भ हुई। ईश प्रार्थना के पश्चात् सबसे पहले सार्वदेशिक सभा के उपमंत्री श्री भगवानदेव शर्मा ने भारतीय यात्रियों की ओर से निम्न मर्मस्पर्शी वक्तव्य द्वारा आभार प्रकट किया:

"मौरिशस के धर्म बन्धुओ,

हम भारत के आर्य नर नारी विशाल हिन्दमहासागर की उत्ताल तरंगों को लाँघकर आपके दर्शन करने, आप लोगों के सत्संग से लाभ उठाने और एक साथ बैठकर विश्वभर में वैदिक संदेश प्रसारित करने के उपायों पर विचार करने के लिए यहां आए हैं। हम अपने हृदय-सरोवर के पुष्प आपको अर्पण करते हैं। धर्म बन्धुओ! आप हमारी इस तुच्छ भेंट को स्वीकार करें।"

"आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द का स्वप्न था कि संसार वैदिक धर्म के सूर्य की रश्मियों से आलोकित हो जाय और संसार के समस्त प्राणी वैदिक धर्म के महा-वृक्ष की शीतल छाया के नीचे सुख और आनन्द का अनुभव करें। महर्षि का यह स्वप्न मूर्त्त रूप धारण कर रहा है, यह बड़े संतोष की बात है। इस स्वप्न की झांकी भारत से बाहर यत्र-तत्र देख पड़ती है, परन्तु आपके द्वीप में यह झांकी बहुत भव्य है।"

हम आर्यों के इस प्रथम सांस्कृतिक अभियान की व्यवस्था कर आपने आर्य समाज के इतिहास में वैसा ही स्वर्णिम पृष्ठ जोड़ा है, जैसा भगवान बुद्ध के अनुयायियों ने बौद्धधर्म के इतिहास में जोड़ा था। निश्चय ही यह भावी सन्तति के लिए मार्ग दर्शक का काम करेगा। इस अभियान का आप लोगों ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के माध्यम से हमें अवसर प्रदान किया, इसके लिए हम आपके आभारी हैं।"

इसके बाद मौरिशस आर्य सभा के प्रधान श्री हरिदत्त घूरा ने महासम्मेलन की अध्यक्षता के लिए श्री प्रतापसिंह शूर जी वल्लभदास का नाम प्रस्तुत किया और देश-विदेश की प्रान्तीय सभाओं के प्रतिनिधियों ने इस प्रस्ताव के अनुमोदन-स्वरूप अध्यक्ष को माल्यार्पण किया।

यह उल्लेखनीय है कि इस सम्मेलन के लिए जहां ७०० प्रतिनिधि (६३७ यात्री 'अकबर' जलपोत से और शेष विमान से) भारत से आए थे, वहां लगभग ४०० प्रतिनिधि दक्षिण अफ्रीका से आए थे। इसके अतिरिक्त पूर्वी अफ्रीका, टांगानिका, जंजीबार और दारेसलाम से भी कुछ प्रतिनिधि आए थे। इस प्रकार लगभग १,२०० प्रतिनिधि विभिन्न देशों से हिन्द महासागर के मोती मौरिशस की भूमि में एकत्र हुए थे। शेष मौरिशस की जनता तो हजारों की संख्या में वहां थी ही।

सम्मेलन का समारम्भ

श्री मोहनलाल मोहित ने स्वागताध्यक्ष की हैसियत से जो समयोचित भाषण दिया उसमें उन्होंने अपने यहां की परिस्थिति का संक्षिप्त उल्लेख करते हुए देश-देशान्तर से आए प्रतिनिधियों को यात्रा में हुए कष्टों के लिए और स्वागत-सम्मान में अज्ञानवश रह गई त्रुटियों के लिए विनम्रतापूर्वक क्षमायाचना की। सदा धोती और पगड़ी धारण करने वाले, टापू के वर्तमान आर्य समाज संगठन के

प्राणभूत सूत्रधार श्री मोहित की यह विनम्रता सबके हृदय को छू गई।

इस सम्मेलन का उद्घाटन मौरिशस के प्रधानमंत्री डा० शिवसागर रामगुलाम को करना था, पर अकस्मात् राजनैतिक विवशता के कारण उन्हें जापान की यात्रा पर जाना पड़ा, इसलिए मौरिशस के गवर्नर-जनरल श्री रहमान उस्मान ने सम्मेलन का उद्घाटन किया। सौभाग्यवश वे भी कच्छ के प्रवासी भारतीय थे। उन्होंने कच्छ के ही निवासी, अध्यक्ष श्री प्रताप भाई, का मंच पर ही आलिंगन करते हुए पहले हिन्दी में, पीछे सरकार के सर्वोच्च अध्यक्ष होने के नाते मौरिशस की राजभाषा अंग्रेजी में, अपने विचार व्यक्त किए। उसके बाद कार्यवाहक प्रधानमंत्री श्री अब्दुल रज्जाक ने प्रतिनिधियों का अभिनन्दन करते हुए कहा कि "आर्यसमाज का आन्दोलन इस द्वीप के इतिहास का अंग बन गया है और आर्य समाज ने इस टापू के राष्ट्रीय जीवन के विविध क्षेत्रों में अद्वितीय योग दिया है। स्वामी दयानन्द एक महान् आध्यात्मिक नेता थे और उन्होंने सामाजिक समानता और न्याय के आधार पर मानव जाति को परस्पर मिलाने और कृत्रिम भेदभाव मिटाने का प्रशंसनीय प्रयास किया था।"

आर्ययात्री जिस यात्रा कम्पनी के जहाज में आए वह 'मुगल लाइन्स', जिस जलपोत में आए वह 'अकबर', जिस स्थान पर सम्मेलन हो रहा था वह ताहिर मियां का बगीचा, और सम्मेलन के उद्घाटन-कर्ता श्री रहमान उस्मान और ऋषि दयानन्द का गुणगान करने वाले श्री अब्दुल रज्जाक—सबके सब मुसलमान और इस्लाम से सम्बद्ध। आर्य समाज की सम्प्रदाय-निरपेक्षता का इससे बढ़ कर प्रमाण और क्या चाहिए ?

गवर्नर-जनरल श्री रहमान उस्मान ने कहा : "महर्षि दयानन्द ने सब मनुष्यों को परस्पर मिलाने के लिए आर्य समाज की स्थापना की थी। आज जगत् भय, अज्ञान, रोग और निर्धनता से पीड़ित है और सर्वत्र अशान्ति, अविश्वास और अनैक्य का बोलबाला है। जन्म की जातपाँत और रंग-भेद ने मानव को मानव से पृथक कर दिया है। मानव ने ऐसी समस्याएं पैदा कर दी हैं जिनका समाधान वह नहीं कर पा रहा है। इन समस्याओं के समाधान का प्रभावशाली उपाय धर्म ही है। आर्य समाज लोगों को आस्तिक बनाने और ईश्वरीय नियमों पर चलने का मार्ग दिखाने में प्रयत्नशील है। मौरिशस के भाग्य-निर्माण में आर्य समाज का योगदान सर्वोपरि रहा है।"

भारत के उच्चायुक्त श्री कृष्णदयाल शर्मा ने कहा : "मौरिशसवासियों के हृदय में भारत के लिए स्नेह और मैत्री का अगाध सागर लहराता हैं। भारत भी मौरिशस की मित्रता पर गर्व करता है। मौरिशस में भारतीय आए और बस गए। भारतीय संस्कृति को प्राणों से भी अधिक मूल्यवान् मानकर उन्होंने इसे यहां जीवित रखा। भारतीय संस्कृति समन्वय, समता और एकता में विश्वास करती है।"

मौरिशस के विदेशमंत्री, लार्ड मेयर और पार्टी मौरिशियां नामक राजनीतिक दल के प्रभावशाली नेता श्री गायतां जुबाल ने प्रतिनिधियों का अभिनन्दन करते हुए अपनी ओजस्वी वाणी में कहा : "मौरिशस भारतीय यात्रियों का दूसरा घर है। आर्य समाज ने छूआछूत और जात पांत की कृत्रिम दीवारों को ढहाकर समाज-सुधार की दिशा में प्रशंसनीय कार्य किया किया है। आज भी मौरिशस को हजारों मील दूर से (भारत से) उज्ज्वल प्रकाश प्राप्त हो रहा है।"

इस अवसर के लिए देश-विदेश से जो शुभकामना-संदेश प्राप्त हुए, वे आर्यसभा मौरिशस के मंत्री श्री टी० कालीचरण ने पढ़कर सुनाए। इन सन्देशों में भारतीय कांग्रेस के अध्यक्ष श्री शंकरदयाल शर्मा का भी एक संदेश था जिसमें इस महासम्मेलन के लिए भारत के सब से प्रमुख राजनैतिक दल और शासक दल की ओर से शुभकामना प्रकट की गई थी। सेवा-शिविर के संचालक और मौरिशस की युवा पीढ़ी को भारतीय संस्कृति से अनुप्राणित करने में अग्रसर, लोकप्रिय नेता, स्वामी कृष्णनन्द इन दिनों लन्दन में रोगशैया पर पड़े थे। उन्होंने रोगशैया से ही अपना सन्देश भेजा था। इसके अतिरिक्त सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र के अन्य अनेक नेताओं ने अपने शुभकामना संदेश भेजे थे।

इसके बाद सम्मेलन के मनोनीत अध्यक्ष श्री प्रतापसिंह शूर जी वल्लभदास ने अपना अध्यक्षीय भाषण पढ़ा

जिसमें आर्य समाज के उद्देश्य, उसकी सफलताओं तथा भावी कार्यक्रम पर अच्छा प्रकाश डाला गया था। (यह भाषण अन्यत्र पढ़ें)।

अधिवेशन की उक्त सारी कार्यवाही अत्यन्त उत्साह-पूर्ण वातावरण में चली। पत्रकारों और कैमरामैनों का दल अपने कार्य में मुस्तैदी से लगा था। यह सारी कार्य-वाही साथ-साथ ही टेलिविजन पर भी दिखाई जा रही थी और रेडियो से प्रसारित भी की जा रही थी।

विभिन्न सम्मेलनों की धूम

अधिवेशन के इन तीन दिनों में विभिन्न भाषणों के अतिरिक्त कुछ महत्वपूर्ण सम्मेलन भी हुए—जैसे शिक्षा सम्मेलन, युवक सम्मेलन, वेद सम्मेलन, कवि सम्मेलन, महिला सम्मेलन, राष्ट्रीय एकता सम्मेलन और प्रतिनिधि सम्मेलन। शिक्षा सम्मेलन की अध्यक्षता बिहार के प्रसिद्ध आर्य नेता और सार्वदेशिक सभा के वर्तमान प्रधान डा० डी० राम ने की। युवक सम्मेलन की अध्यक्षता आर्यवीर दल के भूतपूर्व संचालक और सार्वदेशिक सभा के वर्तमान महामंत्री श्री ओम्प्रकाश त्यागी ने की। कवि सम्मेलन की अध्यक्षता प्रसिद्ध साहित्यकार और कवि-श्रेष्ठ श्री क्षेमचन्द्र सुमन ने की। महिला सम्मेलन की अध्यक्षता मेरठ की विदुषी प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्त्री श्रीमती शकुन्तला गोयल ने की। राष्ट्रीय एकता सम्मेलन की अध्यक्षता मौरिशस के कृषिमंत्री और प्रभावशाली राजनेता श्री सत्यकाम बुलेल ने की। वेद सम्मेलन की अध्यक्षता सार्वदेशिक सभा की धर्मार्य सभा के अध्यक्ष, वैदिक-अनुसंधान-कर्ता, अंग्रेजी मासिक पत्रिका 'वैदिक लाइट' के संपादक, आचार्य वैद्य-नाथ शास्त्री ने की।

शिक्षा सम्मेलन का उद्घाटन मौरिशस के माननीय शिक्षामंत्री श्री राजमोहन सिंह जोमाधर ने किया। युवक सम्मेलन का उद्घाटन मौरिशस के माननीय युवा क्रीड़ा मंत्री श्री दयानन्द वसन्तराय ने और संयोजन सार्वदेशिक सभा के उपप्रधान श्री छोटूसिंह एडवोकेट ने किया। राष्ट्रीय एकता सम्मेलन का उद्घाटन मौरिशस के मान-नीय अर्थमंत्री श्री वीरस्वामी रिंगादू ने किया। महिला सम्मेलन का उद्घाटन हैदराबाद की श्रीमती सुशीला विद्यालंकृता ने किया। वेद सम्मेलन का संयोजन दक्षिण अफ्रीका के श्री नरदेव वेदालंकार ने किया, जिनका भाषण बड़ा प्रभावपूर्ण रहा। कवि सम्मेलन का संयोजन श्री मुनीश्वर चिन्तामणि ने और उद्घाटन श्री ब्रजेन्द्र भगत मधुकर ने किया। कवि सम्मेलन के अध्यक्ष पद से श्री सुमन ने मौरि-शस में हिन्दी की प्रगति और साहित्यिक गतिविधियों पर अच्छा प्रकाश डाला।

शोभा यात्रा का दृश्य

२६ अगस्त रविवार को प्रातः १० बजे से १२ बजे तक राजधानी पोर्ट लुई की मुख्य सड़कों पर विशाल जलूस निकला। इस ऐतिहासिक शोभा-यात्रा का दृश्य भी दर्शनीय था। इसमें मौरिशस के आर्य नर-नारियों, आर्य समाजों एवं संस्थाओं के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त दक्षिण अफ्रीका और पूर्वी अफ्रीका के आर्य बन्धुओं ने भी भाग लिया। रविवार का अवकाश होने के कारण दर्शकों की भी खूब भीड़ थी। स्थान-स्थान पर जलूस में शामिल नर नारियों का स्वागत किया जा रहा था।

आगे-आगे शहनाई, फिर बैण्ड, फिर गैरिक वेष में संन्यासी-मंडल, फिर मौरिशस और भारत के विशिष्ट आर्य नेता। उसके बाद विभिन्न देशों और भारत के विभिन्न राज्यों तथा स्थानीय आर्य समाजों के प्रतिनिधि। जब ओम् ध्वज तथा आर्य समाज के नामपट्ट लिए चार-चार की पंक्ति में लगभग बीस हजार आर्यों की अनुशासन-बद्ध सांस्कृतिक सेना स्थान-स्थान पर बने तोरण द्वारों से होकर राजधानी की साफ-सुथरी सुन्दर सड़कों पर पद-प्रयाण करती हुई और 'दयानन्द के वीर सैनिक बनेंगे' का गीत गाती हुई निकली, तो देखने वाले अवाक् होकर इस नयनाभिराम दृश्य को देखते ही रह गए।

इसी दिन दोपहर को हुआ महिला सम्मेलन। वर्षा के बावजूद भीड़ इतनी कि दस हजार श्रोताओं की क्षमता वाला पंडाल भी छोटा पड़ गया। महिला सम्मेलन में माननीय भारतीय उच्चायुक्त की पत्नी श्रीमती वीणा शर्मा ने वैदिक काल में नारी जाति की उच्च स्थिति पर सुन्दर प्रकाश डाला। मौरिशस की प्रसिद्ध महिला कार्य-कर्त्री और महिला मंडल की मंत्रिणी श्रीमती लाखावती

हरगोविन्द का अपने यहां की नारियों की समस्या पर प्रभावशाली भाषण हुआ।

इधर पंडाल में जब महिला सम्मेलन चल रहा था तब आर्य सभा भवन में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिनिधि सम्मेलन हो रहा था जिसमें मुख्यतः विदेशों से आए प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में दक्षिण अफ्रीका के श्री नरदेव वेदालंकार, केनिया के श्री सत्यदेव वेदालंकार, नैरोबी के श्री अच्छरादास, तंजानिया के श्री कृष्णरावल आदि महानुभावों ने अपने-अपने देशों में आर्य समाज की स्थिति का विवरण दिया और अपनी-अपनी कठिनाइयां उपस्थित कीं। वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार कार्य को आगे बढ़ाने के लिए और स्थानीय सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए सबने सार्वदेशिक सभा से आवश्यक सहयोग और मार्गदर्शन की प्रार्थना की। सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों ने अपनी ओर से पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया।

समारोह का समापन

२६ अगस्त की रात को खुले-अधिवेशन में अनेक प्रस्ताव पारित हुए। इस महान् ऐतिहासिक सम्मेलन के समारोह का समापन करते हुए श्री आनन्द स्वामी सरस्वती ने मौरिशस की जनता, वहां के कर्मठ कार्यकर्ताओं, मौरिशस प्रशासन एवं नगर पालिका को सक्रिय सहयोग के लिए आशीर्वाद और धन्यवाद देते हुए वैदिक धर्म के आध्यात्मिक स्वरूप पर प्रकाश डाला और समस्त संसार को वैदिक धर्म के झण्डे के नीचे आने का आह्वान किया। आर्य सभा मौरिशस के उपमंत्री श्री मोती तोरल ने समस्त अभ्यागतों, सहयोगियों, कार्यकर्ताओं, सरकारी अधिकारियों तथा जनता का आर्यसभा की ओर से धन्यवाद दिया और अन्त में शान्ति पाठ तथा आरती के पश्चात् वैदिक धर्म की जय के तुमुल घोष से महासम्मेलन का यह कार्यक्रम २६ अगस्त की रात को ११ बजे समाप्त हुआ।

महासम्मेलन की इस ऐतिहासिक घटना के स्मारक के रूप में मौरिशस में एक भव्य यज्ञशाला बनाने का निश्चय किया गया जिस के लिए बाहर से आए आर्य यात्रियों ने पचास हजार रु० के दान की घोषणा की।

सम्मेलन के समस्त कार्यक्रमों में और यात्रियों के भोजन की व्यवस्था में रविवेदप्रचारिणी सभा, उसके कार्यकर्ताओं और श्री आर० एस० मोदन ने अप्रतिम योग दिया।

प्रस्तावों का सार

सम्मेलन में कुल मिलाकर आठ प्रस्ताव पारित हुए। (इन प्रस्तावों का अविकल पाठ अन्यत्र पढ़ें।) एक प्रस्ताव में मौरिशस, गियाना, फिजी, दक्षिण अफ्रीका, पूर्वी अफ्रीका, थाई लैण्ड, मलयेशिया, बर्मा आदि देशों के प्रवासी बन्धुओं को इस बात के लिए बधाई दी गई कि उन्होंने विषम परिस्थितियों का सामना करते हुए भी आर्य संस्कृति की ज्योति को प्रज्वलित रखा और आर्य समाज के कार्य को गति दी। इन बन्धुओं से आग्रह किया गया कि वे वैदिक धर्म के संदेश को केवल प्रवासी भारतीयों तक ही सीमित न रखें बल्कि उन-उन देशों के मूल निवासियों तक भी इस संदेश को पहुंचावें। साथ ही इस बात के लिए प्रेरणा दी गई कि भारत से बाहर आर्यसमाज का जो कार्य हुआ है उसका विस्तृत इतिहास लिपिबद्ध करके प्रचारित किया जाए।

एक अन्य प्रस्ताव में कहा गया कि जीवन को सुखी बनाने के लिए भौतिकवाद और वैदिक अध्यात्मवाद का समन्वय आवश्यक है, क्योंकि उसके बिना जीवन एकांगी बन जाएगा। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सार्वदेशिक सभा ने विभिन्न राज्यों में अध्यात्म शिविर लगाने की योजना बनाई है जिसका लाभ उठाया जाना चाहिए।

अन्य दो प्रस्तावों में धर्म और आध्यात्मिकता का यथार्थ स्वरूप वर्णित किया गया और कहा गया कि इसी स्वरूप का पालन करने से संसार में सुख और शान्ति की स्थापना हो सकती है—जब तक विभिन्न मत-मतान्तरों के अयथार्थ स्वरूप चलते रहेंगे तब तक संसार में अशान्ति, कलह और पारस्परिक वैमनस्य नहीं मिटाये जा सकते। मानव समाज से अपील की गई कि वह वर्णाश्रम-व्यवस्था पर आधारित समाज-व्यवस्था को अपनावे और वर्णव्यवस्था भी गुण-कर्म पर आधारित हो, जन्म पर नहीं।

एक अन्य प्रस्ताव में मातृशक्ति को उचित सम्मान एवं अधिकार दिए जाने पर बल दिया गया और शिक्षा-प्राप्ति के समान अवसरों को उचित बताया गया।

हिन्दी संयुक्त राष्ट्र संघ में मान्य हो

अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से जिस प्रस्ताव को सबसे महत्व-पूर्ण कहा जा सकता है वह था हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ में मान्यता देने के संबंध में। यह सौभाग्य भी मौरिशस के इस आर्य महासम्मेलन को ही प्राप्त हुआ। भारत ने हिन्दी को अपनी राष्ट्रभाषा घोषित किया है, पर उसके किसी सम्मेलन में अब तक इस प्रकार का प्रस्ताव पारित नहीं हुआ था, जबकि मौरिशस के महासम्मेलन ने सर्वसम्मति से इस प्रस्ताव को पारित किया।

इस प्रस्ताव का औचित्य इस बात में है कि इस समय भारत में तथा अन्यत्र हिन्दी भाषाभाषियों की संख्या कुल मिलाकर चालीस करोड़ से कम नहीं है। संसार की और कितनी भाषाएं हैं जिनके बोलने वालों की संख्या इतनी हो ? चीन को छोड़कर और किसी देश की इतनी आबादी ही नहीं। जिन देशों की भाषाएं इस समय संयुक्त राष्ट्र संघ में स्वीकृत हैं उनके बोलने वालों की संख्या हिन्दी बोलने वालों से बहुत कम है। जब तक भारत पराधीन था तब तक शायद हिन्दी को गुलामों की भाषा समझ कर इसकी ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया। किन्तु अब तो भारत स्वाधीन है, इसलिए उसकी राष्ट्रभाषा को उचित मान्यता प्राप्त होनी ही चाहिए। इसके अलावा हिन्दी केवल भारत तक सीमित नहीं है, जहां-जहां प्रवासी भारतीय गए हैं, वहां-वहां वे अपने साथ हिन्दी को ले गए हैं और उनका अधिकांश दैनिक कार्य इसी भाषा में चलता है। इसलिए एक राष्ट्र से ऊपर उठकर इसका प्रयोग जब अन्य राष्ट्रों में भी लाखों लोग कर रहे हैं, तब इसे अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता क्यों न प्राप्त हो ?

योग साधना शिविर

२७ और २८ अगस्त को प्रातः मौरिशस के "आर्य सभा भवन" में आध्यात्मिक योग साधना शिविर लगा जिसमें ६० साधकों ने भाग लिया। श्री भगवान देव शर्मा सभा उपमंत्री ने योगासन सिखाए और श्री महात्मा आनन्द स्वामी ने साधना एवं ध्यान लगाने का अभ्यास करवाया। वैज्ञानिक ढंग से लगाए गए इस शिविर से लोग बहुत लाभान्वित हुए।

"अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज करने की तो कथा ही क्या कहनी, किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतंत्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है।··· ···कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मतमतान्तरों के आग्रह से रहित, अपने और पराये का पक्ष-पात शून्य, प्रजा पर माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुख-दायक नहीं होता।"

—सत्यार्थ में प्रकाश में महर्षि दयानन्द

पंचम रश्मि

असितगिरि समं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे

सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी ।

लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं

तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ।।

—हे ईश ! अथाह जलराशि से समन्वित सिन्धु की दवात बने, कृष्णपर्वत का सारा काजल घोलकर स्याही तैयार की जाए, देवताओं के सुन्दर वृक्ष कल्पतरु की शाखाओं की लेखनी बने, विस्तृत पृथ्वी कागज के स्थान पर प्रयुक्त हो और स्वयं शारदा अनन्तकाल तक आपके गुणों का वर्णन लिखने बैठे, तब भी उन गुणों का पार नहीं पाया जा सकता ।

●

मौरिशस दर्शन

दर्शनीय स्थानों की यात्रा □

विदाई की वेला □

वापिस दिल्ली □

फलश्रुति □

●

दर्शनीय स्थानों की यात्रा

मौरिशस है तो छोटा-सा टापू, पर है अनेक विचित्रताओं से भरा हुआ। यह बहुरंगीय, बहुभाषीय, बहुधर्मीय और बहुजातीय (मल्टी-कलर्ड, मल्टी-लिंग्वल, मल्टी-रिलीजस, मल्टी-रेशल) द्वीप इतना वैविध्यपूर्ण है कि सहसा सुनने पर विश्वास नहीं होगा। हिन्द महासागर का मोती, हिन्द महासागर का रत्न, श्वेत रेत का द्वीप, इन्द्रधनुषों का द्वीप—आदि इसके विशेषण ही इसके सौन्दर्य और वैविध्य को द्योतित करते हैं। इन्द्रधनुष तो इतना सुलभ है कि वहां चाहे जब देखा जा सकता है।

सबसे अधिक विचित्र बात यह है कि मौरिशस में हर दो मील के बाद मौसम बदल जाता है। भारत में सैंकड़ों मीलों के पश्चात् जो परिवर्तन दृष्टिगोचर होंगे वे मौरिशस में दो मील के बाद ही दिख जाएंगे। ७२० वर्गमील के इस छोटे से टापू में ऐसे स्थान हैं जहां गर्मी के मारे पसीना आएगा, प्यास लगेगी और कपड़े पहनना अखरेगा। पर वहां से कुछ आगे बढ़ने पर ऐसे स्थान मिल जाएंगे, जहां कंपकंपी छूटेगी और गर्म कपड़े पहनने की इच्छा होगी। बारिश तो अत्यन्त सुलभ है ही, पर वह भी थोड़ी देर के लिए। अभी-अभी बादल छाए, धड़ाधड़ वर्षा हुई, इन्द्रधनुष निकला और कुछ क्षणों के बाद ही जादू की माया की तरह सब गायब। चमकती धूप निकल आवेगी। महाकवि कालिदास ने लिखा है—"क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः।" शायद मौरिशस की रमणीयता का एक रहस्य यह भी है कि यहां की प्रकृति बहुत शीघ्र पट-परिवर्तन कर लेती है।

राजधानी पोर्टलुई प्रायः समशीतोष्ण है। पर क्यूर पाइप और मिडलैण्ड ठंडे स्थान हैं। अधिकांश गोरे तथा अमीर लोग इन ठंडे स्थानों पर ही रहते हैं। पीतों गरम स्थान है। और ये सब स्थान पोर्टलुई से दस मील के अन्दर ही अन्दर हैं। इस प्रकार २० मील के घेरे में तीनों प्रकार के स्थान मिल जाएंगे—शीत, उष्ण और समशीतोष्ण।

जिस प्रकार सर्दी-गर्मी वाले स्थान हैं, उसी प्रकार वर्षा वाले और गैरबारिश वाले भी। ऐसे स्थान हैं जहां वर्षा खूब होती है—इतनी कि खेतों की सिंचाई के लिए पानी की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। फिर ऐसे भी स्थान हैं जहां खेतों की सिंचाई के लिए नदियों से नहरें निकाली गई हैं। इन नदियों या नहरों की तुलना भारत की नदियों या नहरों से न करें। भारत में जैसे छोटी-छोटी पहाड़ी नदियां होती हैं वैसी नदियां और रजवाहे जैसी वैसी ही छोटी-छोटी नहरें। धरातल क्योंकि पहाड़ी है, इसलिए नहरें पक्की ही हैं। कुछ स्थानों पर वर्षा का इतना अभाव रहता है कि ऊपर बड़े-बड़े फव्वारे लगा कर खेतों की सिंचाई की जाती है।

पहाड़ यद्यपि ऊंचे नहीं हैं, इसलिए उन पर बर्फ नहीं गिरती, पर थोड़ी उंचाई के छोटे-छोटे पहाड़ काफी हैं। ऐसे भी क्षेत्र है जहां पहाड़ बिल्कुल नहीं, केवल समतल मैदान है, पर समतल मैदान भी ऊंचे-नीचे तो हैं ही।

यूरोप के अनेक देशों के समुद्र-तट स्नान के लिए विख्यात हैं। मौरिशस का समुद्र-तट भी स्नानार्थियों के लिए यूरोप के किसी देश से कम नहीं है। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि समुद्र-तट न तो एक दम गहरा है और न

ही उसमें मानव-भक्षी शार्क मछलियां पाई जाती हैं। इस लिए स्नान सर्वथा निरापद है—और फिर तट पर दूर तक बिछा रजत-सन्निभ श्वेत रेत तो जैसे स्नानार्थियों को आमंत्रण-सा देता है।

भूगर्भविदों के अनुसार यह द्वीप ज्वालामुखी से बना है। इस की सुरंगें, इसकी झीलें, इसके प्रपात और इसमें अभी तक कहीं-कहीं विद्यमान बड़े-बड़े द्रोण (क्रेटर) इसी बात के साक्षी हैं कि कभी यह द्वीप ज्वालामुखी के विस्फोट के कारण समुद्र से निकला था। यहां सांप और बिच्छू जैसे विषधर सरीसृप, शेर, चीते और भेड़िये जैसे हिंस्र श्वापद तथा अन्य भयानक जानवर जंगलों या पहाड़ों में कहीं नहीं मिलते। इस लिए समुद्र तट के समान इसके जंगल और पहाड़ भी निरापद हैं।

जंगलों में आबनूस और सागवान की इमारती लकड़ी तथा कपूर के वृक्ष बहुतायत से पाए जाते हैं। जब सन् १९१४ में स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी यहां पहली बार आए थे तब उन्होंने जेलर श्री लेखराम के रसोईघर में कपूर की लकड़ी ईंधन के रूप में जलती देखी थी। श्री लेखराम ने बताया था कि कपूर की यह लकड़ी सालों से मेरे यहाँ ईंधन के तौर पर प्रयुक्त होती है, मेरे यहां ही क्यों, और भी अनेक घरों में यही लकड़ी जलाने के काम आती है। इससे वहां कपूर के वृक्षों की बहुतायत की कल्पना की जा सकती है। इसके अलावा यहां आम, लीची, अमरूद, आड़ू अनानास, पपीता और केला खूब होता है।

दर्शनीय स्थान

२७ अगस्त को सवेरे ही बसों का काफिला बन्दरगाह पर पहुंच गया। सब यात्री तैयार थे। ९ बजे से मौरिशस के दर्शनीय स्थानों की यात्रा प्रारंभ हुई। इन दर्शनीय स्थानों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :

पोर्टलुइ—राजधानी है और मौरिशस का मुख्य बन्दरगाह है, फ्रांसीसी गवर्नर लोबुर्दोने ने १७३६ में इसकी स्थापना की थी। पर्वतों की अर्धवृत्ताकार उपत्यका में स्थित है। यहां १८ वीं सदी की कई पुरानी किन्तु पुख्ता इमारतें आज भी मौजूद हैं जिन्हें फ्रांसीसियों ने बड़े शौक से बनवाया था। इन इमारतों में राजभवन, नगरपालिका भवन और सर्वोच्च न्यायालय के भवन दर्शनीय हैं जो उस युग की फ्रांसीसी वास्तुकला के श्रेष्ठ नमूने हैं। एक अद्भुतालय (म्यूजियम) है। नगर के बाह्य अंचल में घुड़दौड़ का मैदान है जो दिल्ली के रामलीला मैदान से भी बड़ा है। कभी यह स्थान सेना की कवायद के काम आता था, पर अब घुड़दौड़ के काम आता है। इसी मैदान की बगल में आर्यसभा भवन बना है और उसी के पार्श्व में ताहिर पार्क में दयानन्द नगर बना था जिसमें महासम्मेलन के लिए पंडाल खड़ा किया गया था। मौरिशस के अधिकांश स्थानों के नाम अभी तक फ्रेंच ही चले आ रहे हैं। इस मैदान का नाम है चैम्प दे मार्स।

क्यूरपाइप—यह पोर्टलुई के बाद दूसरे नम्बर का नगर है। मौरिशस के अधिकतर संभ्रान्त लोग यहीं रहते हैं। इसकी बस्ती के आवास स्थानों और बाजार की दुकानों पर भी पोर्टलुई की तरह ही फ्रांसीसी वास्तुकला की छाप है।

वाकोआ—यहां भारतीय उच्चायुक्त का निवास स्थान है। भारतीयों की आबादी भी काफी है। क्यूरपाइप और वाकोआ के बीच लगभग २,००० फुट की उंचाई पर एक विशाल द्रोण (क्रेटर) है जिसकी गहराई २८० फुट और चौड़ाई ६०० फुट है। विशाल हवनकुण्ड के आकार के इस द्रोण—गहरे खड्ड—को अनेक भारतीय 'रावण का हवन-कुण्ड' कहकर याद करते हैं। जब मौरिशस को मारीच द्वीप का नाम दे दिया गया, तो उसके साथ रावण का नाम भी स्वतः जुड़ गया। इतना बड़ा हवनकुण्ड सिवाय रावण या कुंभकर्ण के और किसका हो सकता है!

पेम्लेमाउस उद्यान—कुछ लोगों का कहना है कि इस विशाल वनस्पति वाटिका का नाम डचों द्वारा लगाए सन्तरा जाति के एक फल वृक्ष के नाम पर पड़ा है। परन्तु अनेक लोगों का कहना है कि यह नाम तमिल के 'ब्रौम्बोलमस' शब्द के आधार पर पड़ा है। इसमें इतनी तरह के देशी-विदेशी वृक्ष लगे हुए हैं कि अपने वैविध्य के कारण यह उद्यान विश्वविख्यात है। चार फुट लम्बे पत्तों वाला कमल यहां के सिवाय अन्यत्र दुर्लभ है। कपूर, दालचीनी, लौंग और इलायची के पेड़ भी यहां हैं। यहां ताड़ जाति का एक ऐसा पेड़ है जिस पर सौ साल में केवल एक

ही बार फूल आता है और उसके बाद वह पेड़ आप ही आप मुरझा जाता है। अब तक इस उद्यान में यह घटना केवल एक ही बार घटी है और तब विश्व के सुदूर स्थानों से उस दृश्य को देखने के लिए वनस्पति-विशेषज्ञ इस उद्यान में आए थे।

रोचेस्टर प्रपात—ऊंचे पठार पर स्थित ईख के खेतों में से होकर इस प्रपात को सड़क जाती है। सदियों से अनवरत गति से गिरते पानी ने ज्वालामुखी के लावा से बने पर्वत की दीवार को बड़े विचित्र ढंग से काटकर पत्थरों में तरह-तरह की आकृतियों का निर्माण कर दिया है।

गंगा तालाब—ज्वालामुखी के द्रोण में बना यह एक विशाल प्राकृतिक सरोवर है। फ्रांसीसियों ने इस स्थान का नाम रखा था—'ग्रांड बेसिन' (ग्रां बासीं), पर भारतीयों ने इसका नया नामकरण कर दिया है—गंगा तालाब। यह हिन्दुओं का मौरिशस में सबसे बड़ा तीर्थ स्थान है। वे इस सरोवर को गंगा की तरह पवित्र मानते हैं। अब से कुछ अर्से पहले तक इसे 'परी तालाब' कहा जाता था। इस नाम का उद्गम उस काल की अनुश्रुतियों में खोजा जा सकता है जब यहां फ्रांसीसियों का शासन था और मजदूरों से गुलामों जैसा व्यवहार किया जाता था।

कहा जाता है कि उस स्थान के पास ही एक फ्रांसीसी जमींदार के खेत थे जिनकी रखवाली के लिए उसने एक हबशी गुलाम को रखा हुआ था। एक दिन किसी बात पर क्रुद्ध होकर उस गोरे जमींदार ने उस गुलाम को इतना पीटा कि वह मरणासन्न हो गया। उस गुलाम को जमींदार उसी खड्ड में पटक गया था जहां यह सरोवर है। रात को एकान्त निर्जन में पर्वत के शिखर पर परियां नृत्य करने के लिए आया करती थीं। उस रात जब परियां आईं तो उन्हें कहीं पास से ही रोने और पीड़ा से कराहने की आवाज आई। परियां वहां पहुँचीं तो देखा कि एक व्यक्ति मरणासन्न अवस्था में पड़ा है। परियों को उसकी दशा पर दया आई और उसकी प्यास बुझाने के लिए उन्होंने उसे वरदान दिया कि तेरे इन आंसुओं से यहां एक तालाब बन जाएगा और उस पानी को लोग पवित्र मान कर उसका आचमन किया करेंगे।

इस तालाब का पानी मीठा और शीतल है। शिवरात्रि के अवसर पर हजारों हिन्दू धोती पहन कर इस तीर्थ की परिक्रमा करते हैं और फिर यहां से जल भर कर मन्दिरों में शिव की मूर्तियों पर चढ़ाते हैं। जैसे भारत में गंगोत्तरी या हरिद्वार से लोग कावड़ में गंगाजल लेकर रामेश्वरम् के मन्दिर में शिवजी पर चढ़ाते हैं, उसी प्रकार की भक्ति-भावना से मौरिशसवासी हिन्दू भी इस तालाब का जल कावड़ में ले जाकर शिवजी पर चढ़ाते हैं। शिवरात्रि का त्यौहार यहां के हिन्दुओं का सबसे बड़ा त्यौहार बन गया है। उस अवसर पर इतना बड़ा समारोह होता है कि मौरिशस के प्रधानमंत्री डा० शिवसागर रामगुलाम स्वयं धोती पहनकर फूलों से सजी कावड़ ले जाने वाले तीर्थयात्रियों की नंगे पैर अगवानी करते हैं। महाशिवरात्रि मौरिशस का सबसे बड़ा राष्ट्रीय पर्व है और उस सारे पर्व में इस तालाब की सर्वप्रमुख भूमिका है।

अब इस गंगा तालाब के किनारे एक ओर पक्के घाट बना दिए गए हैं। ऊपर एक छोटा-सा शिवमन्दिर भी बना दिया गया है और साथ ही 'भागीरथी भवन' के नाम से एक विशाल सभागार बना है जिसकी दीवारों पर राम और कृष्ण के जीवन से संबंधित चित्र लगे हैं। सभागार में बैठने के लिए बेंचों की व्यवस्था है। भवन ऐसी कुशलता से बना है कि उसमें दिन में प्राकृतिक प्रकाश के कारण अन्य कृत्रिम साधनों से प्रकाश की आवश्यकता नहीं पड़ती। सभागार में ही धार्मिक साहित्य का अच्छा पुस्तकालय बनाने की भी योजना है। यहां स्थायी रूप से एक पुजारी रहता है जो प्रतिदिन तुलसी रामायण की कथा करता है।

प्लेन शैम्पेन—केन्द्रीय पठार का यह सबसे ऊंचा स्थान है (२,४२५ फुट)। यहां से घाटी में ब्लैक रिवर के प्रवाह का बहुत अच्छा दृश्य दिखाई देता है। क्षितिज पर समुद्र विद्यमान है ही। नदी के दोनों ओर जो घना जंगल है उसमें तरह तरह की इमारती लकड़ी के तथा अन्य वृक्ष हैं। पक्षी-प्रेमियों के लिए यहां पक्षियों की भी कमी नहीं है।

फ्रांसीसियों ने इस स्थान का जो नामकरण किया है उसी से यह पता लगता है कि इस प्राकृतिक सौन्दर्यस्थली पर पहुँच कर वे शैम्पेन शराब पीकर उन्मत्त होकर विहार

किया करते होंगे। भौतिकवादी सभ्यता के अनुयायियों ने प्राकृतिक दृष्टि से सुन्दर सभी स्थानों का यही सर्वोत्तम उपयोग समझा है, जबकि वैदिक संस्कृति के उपासक को ऐसे स्थान पर पहुंचकर और प्रकृति की सुषमा को देखकर अनायास प्रभु की महिमा का गान करने को मन करेगा।

चैमरेल—देहाती रास्ते से होकर टेढ़ी मेढ़ी सड़क यहां तक पहुंचती है। यह स्थान भी संसार में अनोखा है। इस स्थान पर एक टीला है जिसकी मिट्टी अनेक रंगों की है। इस मिट्टी को शीशी में भरने पर ऐसा लगेगा जैसे इन्द्रधनुष को शीशी में बन्द कर लिया हो। टीले की मिट्टी कहीं नीली है, कहीं पीली, कहीं हरी और कहीं लाल। सरकार ने इस मिट्टी के ले जाने पर प्रतिबन्ध लगा रखा है, नहीं तो शायद अद्भुत वस्तुओं के प्रेमी इस टीले को ही समाप्त कर डालते। फिर भी यादगार के तौर पर थोड़ी सी मिट्टी शीशी में भरी हुई बिकती है, पर वह इतनी मंहगी है कि सब उसे खरीदने की हिम्मत नहीं करेंगे। इसके पास ही चैमरेल का सुन्दर प्रपात है।

इन सब स्थानों को देखते देखते शाम हो गई। फिर भी छोटा-सा टापू है, एक दिन में ही आसानी से इन सब स्थानों को देखा जा सकता है। यात्रियों की प्रत्येक बस के साथ दो दो गाइड थे, इसलिए किसी भी स्थान का परिचय पाने में कोई असुविधा नहीं हुई।

यों २७ अगस्त का दिन बीत गया।

विदाई की वेला

फिर आ गया २८ अगस्त का दिन—विदाई की वेला।

अभी दो दिन पहले ही, महासम्मेलन में हुए कवि-सम्मेलन के अवसर पर संयोजक श्री मुनीश्वरलाल चिन्तामणि ने यात्रियों का स्वागत करते हुए अपनी निम्न कविता पढ़ी थी':—

आज हमारे घर मेहमान आये हैं।

आये हैं आशीर्वाद देने हिमालय का
गंगा-यमुना के जल से अभिषेक करने हमारा
आज साकार करने हमारे जवान सपनों को
साहित्यकार महान् आये हैं।
आज हमारे घर मेहमान आये हैं।

तरसते रहे हैं जीवन भर
जिस वेद ज्ञान रूपी अमृत के लिए,
धर कर वह अमृत-कलश हाथों में हमारे
किया है कृत कृत्य हमको इस लघु भारत में आज।
आपने वेदों के गान गाये हैं।
आज हमारे घर मेहमान आये हैं।

प्यासी थी गागर हमारी आंखों की
आकर आपने इनमें
'सत्यार्थप्रकाश' का गंगाजल छलकाया
सन्देश महर्षि दयानन्द का सुनाया।
आने से आपके आ गई बहार देश के चमन में
आज पथ के कांटे बन गये सुमनों का हार
आप हमारे अधरों पर सुमधुर गान लाये हैं।
आज हमारे घर मेहमान आए हैं।

आप आये कि साहित्य के हर वीरान गमले में
आनन्द के, प्रेरणाओं के, नए सपनों के
सुमन खिल गये
करते हैं पुनः पुनः प्राण स्वागत आपका
आप वेद-उपनिषद का अमर ज्ञान लाये हैं।
आज हमारे घर मेहमान आए हैं।

इतना ही क्यों ? कवि-सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री व्रजेन्द्र भगत 'मधुकर' ने अपने मधुर स्वर में कविता पढ़ते हुए कहा था :

मन मन्दिर में श्रद्धा दीप जला,
अर्चन से स्वागत करते हैं।
आस्तिकत के शुचि थाल सजा,
पूजन से स्वागत करते हैं।

सम्मेलन में आर्य जनों का,
देव जनों का, सभ्य जनों का
सकल सनातन सन्त जनों का,
धर्म-धुरन्धर धीर जनों का
वीर महान गंभीर जनों का,
परम पवित्र प्रवीण जनों का
मंगलमय मधुरिम गीतों से,
अभिनन्दन स्वागत करते हैं।

माला मोती हीरा चांदी कंचन से स्वागत करते हैं
अक्षत कुंकुम धूप सुगन्धी चन्दन से स्वागत करते हैं

शुभ-चरणों में माथ झुकाकर
तन मन से स्वागत करते हैं

बिठला कर कोमल नयनों में
अभिनन्दन स्वागत करते हैं।

जिसके मानस में बहती है,
युग युग से गंगा की धारा
हिमगिरि की उन्नत चोटी से
गुंजित आजादी का नारा
चमके ऐसे सब देशों में जैसे नभ में मंगल तारा
पुण्य पुरातन उस धरती का,
अभिनन्दन स्वागत करते हैं।

जिस देश में राम कृष्ण गांधी
गौतम ने पतितोद्धार किया
पथ से विचलित मानव मन में
सत्यभाव संचार किया
ऋषिराज दयालु दयानन्द ने
सत्यार्थ प्रकाश प्रचार किया
उस देश के विद्वद् मंडल का
अभिनन्दन स्वागत करते हैं

जिस देश में हरदम सतियों की
लज्जा की पूजा होती है
सीता सावित्री अनसूया
राधा की पूजा होती है
जिस देश में रणचंडी काली
दुर्गा की पूजा होती है
उस देश के अमर तिरंगे का
अभिनन्दन स्वागत करते हैं

जिस देश ने शोषित देशों को
आजादी का वरदान दिया
चाचा नेहरू की बेटी का
गुणगान किया, सम्मान किया
मित्रों का फिर तो क्या कहना,
दुश्मन का भी कल्याण किया
उस देश की गौरव गरिमा का
अभिनन्दन स्वागत करते हैं।

भारत से स्वर्णिम संस्कृति की
अविरल-गति घड़ियां चलती हैं
आर्थिक संकट की आंधी में
चांदी की नदियां बहती हैं
साहित्य मनोरम उपवन में
कविता की कलियां खिलती हैं
इसलिए सुनो दुनिया वालो,
अभिनन्दन स्वागत करते हैं।

धन भाग "भगत" जन आज हुआ
मिलने आये भारतवासी
संदेश सुहाना ले करके
कैलासपुरी से सन्यासी,
आसीस लिये हर्षित मन में
हरने संकट सुरपुरवासी
जय जय जय जननी भारत मां
अभिनन्दन स्वागत करते हैं।

उस देश के पावन प्रतिनिधि का
जी-जान से स्वागत करते हैं।
भारत का स्वागत करते हैं।

भाव-भीने इन मधुर गीतों के स्वर अभी कानों में गूंज ही रहे थे कि विदाई की वेला आ पहुँची। स्वागतकर्ताओं को, और जिनका स्वागत किया जा रहा था उनको भी, बखूबी मालूम था कि इससे अधिक ठहरने की व्यवस्था नहीं है। पर इन दोनों में से किसी को भी यह गुमान नहीं था कि विदाई की यह वेला इतनी जल्दी आ जाएगी। मानव का मन कितना छलनामय है! स्वयं जानबूझ कर स्वयं को ही छलता रहता है। इस छलना का भी अपना एक सुख है।

पर सब कार्यक्रम पहले से ही तय था। 'अकबर' जल-पोत के एक दिन अतिरिक्त रुकने का अर्थ था चालीस हजार रु० का हर्जाना। कुछ यात्री तो यह आग्रह भी करने लगे कि सब लोग परस्पर मिलकर हर्जाने की यह राशि पूरी कर देंगे, 'अकबर' किसी तरह एक दिन तो और रुक जाए। पर 'अकबर' भी बंधा हुआ था। उसे ६ सितम्बर

को बम्बई से कुवेत को रवाना होना था—उस तारीख के लिए वह पहले से ही बुक था। इसलिए उसे ५ सितम्बर को बम्बई पहुंचना था और ५ सितम्बर को बम्बई पहुँचने का अर्थ था २८ अगस्त को पोर्टलुई से हर हालत में रवाना हो जाना।

जलपोत पर सवेरे ही घोषणा कर दी गई कि सब यात्री दोपहर के एक बजे तक जहाज पर पहुंच जाएं, 'अकबर' ठीक सायं ४ बजे अपना लंगर खोल देगा। यात्रियों को बारम्बार चेतावनी दे दी गई कि यदि कोई यात्री समय पर नहीं पहुंच पाएगा तो उसकी जिम्मेवारी 'अकबर' के अधिकारियों की नहीं होगी। यह कोई रेलवे स्टेशन तो था नहीं कि एक गाड़ी छूट गई तो दूसरी पकड़ लेंगे या यदि आज नहीं जा सके तो कल चले जाएंगे। यात्रा के प्रबन्ध-संचालक श्री रामलाल मलिक ने भी सब यात्रियों से बड़ी विनम्रतापूर्वक अनुनय-विनय की कि देखना, मेरे नाम को और अपने आर्यत्व को बट्टा मत लगाना। नहीं तो जहाज वाले भी क्या कहेंगे कि आर्य-समाजी ऐसे ही होते हैं।

२४ से लेकर २६ अगस्त तक सब लोग महासम्मेलन के कार्यक्रम में व्यस्त रहे। २७ अगस्त दर्शनीय स्थानों को देखने में निकल गया। फिर जो १००-१०० डालर की व्यवस्था करके भारत से चले थे, उनका क्या होगा। कुछ की जेबें कुलबुला रही थीं। सौ डालर से अधिक का तो प्रश्न ही नहीं था। कुछ संन्यासी और थोड़े से यात्री ऐसे भी थे जिन्होंने डालर लिये ही नहीं थे, यह सोचकर कि हमें क्या करना है। पर सब लोग तो संन्यासी और वीत-रागी नहीं थे। तरह तरह के सामानों से भरे हुए पोर्टलुई के बाजार यात्रियों को आकृष्ट कर रहे थे। फिर 'ड्यूटी फ्री' बन्दरगाह होने के कारण कुछ चीजें सचमुच वहां सस्ती थीं। बाजार १० बजे से पहले खुलना नहीं था। एक बजे जहाज पर वापस पहुंचना ही था। केवल दो ढाई घंटे का ही समय था। इतने थोड़े समय में ही यात्रियों ने अपनी अपनी आवश्यकता और रुचि की चीजें खरीदीं और चल दिए जहाज की ओर। बारह बजे से ही सब लोग बन्दरगाह की ओर लौटने लगे।

पर न सब लोगों की रुचियां एक जैसी होती हैं, न ही प्रवृत्तियां। कुछ लोगों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की हड़बड़ी में समय का भी ध्यान नहीं रहा। जहाज चलने से पहले भी कई औपचारिकताएं पूरी करनी पड़ती हैं और लंगर खोलने में भी समय अपेक्षित होता है। इसलिए जहाज वालों ने यात्रियों को एक बजे तक जहाज पर पहुँ-चने को कहा था। यात्रियों के लिए समय का थोड़ा बहुत मार्जिन तो जहाज वाले भी रखते ही हैं। पर उसकी भी सीमा होती है।

बन्दरगाह पर वे क्षण

इधर मौरिशसवासी सवेरे से ही बन्दरगाह पर इकट्ठे होने शुरू हो गए थे। आखिर अपने पूर्वजों के देश से आए धर्मबन्धुओं को विदाई देनी थी। कितने ही लोगों के दादा-परदादा भारत से मौरिशस गए थे। वे वहीं बस गए। उनकी वंश बेल वहीं बढ़ती रही। अब तक हो गए उनके पुत्र पौत्र और नाती नातिनें। इनमें से कितनों ने केवल भारत का नाम सुना था और बाप-दादा के मुख से भारत की, गंगा और हिमालय की, तथा राम और कृष्ण की नाना कथाएं सुनी थीं, पर भारत का कभी उन्होंने दर्शन नहीं किया था। कैसा होगा वह भारत, उनके पूर्वजों का देश, उनके सपनों का देश! कैसे होंगे वहां के लोग—कैसे बोलते-चालते होंगे—कैसे रहते-सहते होंगे! क्या कभी इस जन्म में वे भारत का और वहाँ के निवासियों का साक्षात् दर्शन कर सकेंगे! साधनों के अभाव में उनकी यह मानसिक तड़प मन ही मन में विलीन नहीं हो जाती होगी!

पता नहीं, उनके लिए भारत आना संभव हो या न हो, पर ७०० भारतीय यात्री तो उनकी भूमि में पहुंच ही गए। उनको निकट से देखने-सुनने और उनसे बातचीत करने का अवसर तो उन्हें मिल ही गया। बहुतों को तो लगा होगा कि उनके पुरखे ही जैसे स्वर्गलोक से उतर आए! कितनों ने इसे अपना अहोभाग्य माना होगा। पर उनका भी सपना टूटने का वक्त आ गया था। भारतीय यात्री विदा हो रहे थे। दोपहर होने तक तो बन्दरगाह पर अच्छा खासा मेला लग गया। कितने ही बच्चे सवेरे से भूखे-प्यासे बन्दरगाह पर आ गए थे। बच्चों की भावना शायद सबसे अधिक तीव्र होती है। आबाल-वृद्ध नर-नारी

कौन नहीं था विदा देने वालों में। और तो और, कुछ मुसलमान बन्धु भी विदा देने आए थे। आखिर उनको भी तो अपना वतन और अपने हमवतनी उसी उसी तरह याद आते हैं!

'फिर आए आर्यसभा के पदाधिकारी—श्री मोहनलाल मोहित, श्री टी० कालीचरण तथा अन्य लोग। कुछ लोग जलपोत के ऊपर भी आए। ज्यों-ज्यों जलपोत के रवाना होने की घड़ी नजदीक आती गई त्यों-त्यों जलपोत पर विदा करने के लिए आने वालों की भी परीक्षा की घड़ी आ गई। थोड़ी देर के लिए वे भूल गए थे कि वे विदा करने आए हैं, वे समझ रहे थे कि हम भी भारतीयों के साथ भारत की यात्रा पर जा रहे हैं।

मौरिशस की कुछ आर्य महिलाएं भी भारतीय महिलाओं को विदाई देने के लिए जलपोत पर आईं। जलपोत की यात्री महिलाओं ने उनसे कहा: "हमें भूलियेगा नहीं।" उन महिलाओं ने भाव-विभोर होकर उत्तर में कहा: "जो हिन्दमहासागर भारत के चरण पखारता है, वही हिन्दमहासागर यहां हमारे मस्तक का अभिषेक करता है। इस हिन्दमहासागर की एक एक लहर से हमें आपकी याद आएगी, हम आपको कैसे भूल सकती हैं।" अन्त में मौरिशस स्थित भारतीय हाई कमिश्नर श्रीकृष्ण दयाल शर्मा ने भारतीय यात्रियों को भाव-विभोर होकर विदाई संदेश दिया।

आखिर चार बजे। जहाज ने लंगर खोल दिया। कुछ यात्री अब भी भागे-भागे आ रहे थे। जो यात्री देर से आ रहे थे उनके प्रति सबके मन में आक्रोश था। आखिर गलती भी तो इन्सान से ही होती है। सीढ़ियां हटाई जाने लगीं। जलपोत पर विदाई देने के लिए आए आर्य सभा के पदाधिकारी-गण भारी मन से जहाज से उतरे। और यह लो, जहाज ने आखिरी भोंपू बजाया, सीढ़ियां हटा ली गईं। हाथ और रूमाल हिलने लगे। बन्दरगाह पर और जहाज पर दोनों जगह ओम् के झंडे लहराये। "वैदिक धर्म की जय" और "भारत-मौरिशस मैत्री अमर रहे" के जयघोष गगन में गूँजे और 'अकबर' चल पड़ा।

यह भी कैसा विचित्र दृश्य है—मुख से जयघोष करना चाह रहे हैं, पर आवाज मुंह से बाहर नहीं निकल रही। बल्कि मुँह से आवाज निकलने के बजाय आंखों से पानी निकल आया है। आंखों में आने वाला यह पानी सामान्य नहीं है—ये संसार के सबसे अनमोल मोती हैं। और हिंदमहासागर का मोती यह मौरिशस उन्हीं अनमोल मोतियों के अर्घ्य से अपने धर्मबन्धुओं को विदा दे रहा है।

ऐसे समय कठोर से कठोर व्यक्ति का हृदय भी विगलित हुए बिना नहीं रहता। इधर बन्दरगाह के प्लेटफार्म पर खड़े विदा देने वालों की यह हालत थी, तो 'अकबर' के डैक पर चिरकाल से जमे यात्रियों के मन भी बोझिल हो गए थे। वे चल रहे थे भारत की ओर, पर उनके हृदय का कोई टुकड़ा जैसे मौरिशस में ही छूटा जा रहा था। कैसे होते हैं ये स्नेह के बंधन। महाकवि बाण के शब्दों में "लोहेभ्योऽपि हि कठिनतराः खलु स्नेहमया बंधनपाशाः"—स्नेह के बन्धनपाश लोहे से भी अधिक कठोर होते हैं।

बम्बई की ओर

जैसे अब से १२ दिन पहले बम्बई का समुद्र तट छोड़कर मौरिशस की ओर चले थे और उस समय सूर्यास्त हो रहा था, ठीक वैसे ही मौरिशस का समुद्र-तट छोड़कर जब जहाज बम्बई की ओर चल पड़ा, तब भी सूर्यास्त होने को आ गया। विदाई की इस वेला में जैसे सूर्य भगवान भी आरक्त हो उठे।

तट से १५-२० मील दूर निकल आने पर जहाज के कप्तान ने बन्दरगाह के अधिकारियों को वायरलैस सन्देश भेजकर पूछा कि पीछे कोई यात्री बचा तो नहीं है। उन्हें उत्तर मिला कि जहाज रवाना हो जाने के बाद चार-पांच यात्री और आए हैं और वे यहां परेशान हैं। कप्तान ने तुरन्त पाइलट स्टीमर द्वारा उन्हें भेजने को कहा। वे यात्री आए। जहाज चलता रहा, स्टीमर भी चलता रहा, और चलते जहाज में ही बीच समुद्र में सीढ़ियां अधर लटका कर उन मुसाफिरों को उनके सामान समेत जहाज पर चढ़ाया गया। तब पता लगा कि संकटकाल के समय जहाज के कर्मचारी किस प्रकार काम करते होंगे।

फिर 'अकबर' निर्द्वन्द्व भाव से सागर की लहरों को चीरता हुआ आगे बढ़ चला। फिर वही अथाह जल-

राशि चारों ओर, और अकबर की अपनी एकाकी दुनियां। फिर वही कर्मचारी, वही अधिकारी, वही भजन-कीर्तन-गोष्ठियां और वही दिन चर्या। फिर भूमध्यरेखा का लंघन और घड़ियों को डेढ़ घण्टा आगे सरकाना। फिर आठ दिन तक वही आत्मकेन्द्रित वातावरण।

पर इस बार एक बात अच्छी रही। जहाज में लोगों की तबियत खराब नहीं हुई। इसके दो कारण हो सकते हैं। एक तो यह कि लौटते हुए समुद्र शांत था, उसकी उत्ताल तरंगों ने जो परीक्षा लेनी थी, वह मौरिशस जाते हुए ही ले ली थी। दूसरा यह कि यात्री भी अब कुछ-कुछ अभ्यस्त हो गए थे। अभ्यास सब चीजों को आसान बना देता है। जैसे पहले काव्यशास्त्रविनोद से काल यापन होता था, वैसे ही इस बार भी। कुछ लोगों ने मौरिशस में हुए कवि-सम्मेलन को तथा कुछ विशिष्ट भाषणों को अपने अपने टेप रिकार्डरों में टेप कर लिया था। उन टेपों को लोग सुनते रहते। जो लोग नए टेप रिकार्डर लाए थे, वे इन टेपों की सहायता से कवि-सम्मेलन की कविताओं को और भाषणों को महा-सम्मेलन की यादगार के रूप में अपने पास सुरक्षित रखने के लिए नए सिरे से टेप करते रहते।

ये सात दिन कैसे बीते, पता नहीं लगा। जैसे जाते समय जमीन के लिए तरस गए थे, फिर वैसे ही भूमि-दर्शन की प्यास जाग आई। आठवें दिन, ५ सितम्बर को लगभग दस बजे 'अकबर' फिर बम्बई इन्दिरा डाक पर पहुँच गया। जहाज के कर्मचारियों और अधिकारियों से विदा लेने का प्रसंग आया। विदाई की वेला हमेशा ही हृदय के तन्तुओं को झनझनाती है। जहाज के कर्मचारी तो याद करेंगे ही, स्वयं इस्पाती हृदय का 'अकबर' भी याद करेगा कि कभी आर्य यात्रियों की टोली मेरी गोद में बैठकर अपने धर्मबन्धुओं से मिलने मौरिशस गई थी। और 'अकबर' के वायुमंडल में इतने दिनों तक संध्या-हवन के जो मंत्र गूँजते रहे, उनकी गूँज क्या सरलता से मिट जाएगी!

बंदरगाह पर ही श्री प्रतापभाई और श्री ओम्प्रकाश त्यागी यात्रियों के स्वागत के लिए उपस्थित थे। वे पोर्ट-लुई से वायुयान द्वारा बम्बई पहले ही पहुंच गए थे। सब यात्रियों को सकुशल वापिस पहुँचा देखकर श्री ओम्प्रकाश त्यागी के हृदय को जितनी सान्त्वना मिली होगी, उतनी शायद ही किसी और के हृदय को मिली हो। आखिर इस महान् ऐतिहासिक अभियान रूपी यज्ञ के ब्रह्मा क्रो वे ही थे।

● ●

★=|=|=★=|=|=★=|=|=★=|=|=

"भारत में आज भी ऐसे श्रोत्रिय ब्रह्मण मिल सकते हैं जिन्हें आदि से अन्त तक समूचे वेद कण्ठस्थ हैं। मुझे अपने ही निवासस्थान पर ऐसे लोगों से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है जिन्होंने मेरे द्वारा संपादित ऋग्वेद संस्करण में अशुद्धियों की ओर निस्संकोच होकर मेरा ध्यान खींचा। मैं उनके आत्म-विश्वास को देखकर दंग रह गया।···जो भारत में सिविल एडमिनिस्ट्रेशन सर्विस में नियुक्त होने वाले हों, वे इस बात का ध्यान रखें कि इन सजीव पुस्तकालयों (श्रोत्रिय ब्राह्मणों) से जो कुछ भी सीख सकें, सीख लें।"

—मैक्समूलर

=|=|=▣=|=|=▣=|=|=▣=|=|=▣

वापिस दिल्ली

बम्बई की आर्य जनता भी इन यात्रियों की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थी। ५ सितम्बर की शाम को आर्य समाज काकड़वाड़ी में इन यात्रियों के स्वागत में विशेष सभा का आयोजन किया गया जिसमें विशिष्ट महानुभावों ने मौरिशस सम्बन्धी अपने संस्मरण सुनाए। इस सभा में बम्बई की समाजों के अन्य सदस्यगण और अधिकारी भी उपस्थित थे। बम्बई की आर्य समाजों ने, (जिनमें आर्य काकड़वाड़ी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है,) आर्य समाज स्थापना शताब्दी समिति ने, श्री प्रताप सिंह शूर जी वल्लभदास, श्री जयदेव आर्य, श्री गुलजारीलाल आर्य, श्री भगवतीप्रसाद गुप्त, श्री देवव्रत शास्त्री आदि महानुभावों ने आर्य यात्रियों के बम्बई-प्रवास को, अब लौटते हुए (और उससे पहले मौरिशस जाते हुए भी,) सुखद बनाने में अपनी ओर से कोई त्रुटि नहीं रहने दी। आर्यसाज चेम्बूर, भाण्डुप और शिवाजी पार्क ने और सर्व श्री मेघराज गुप्त, दीनानाथ खन्ना, रामप्रताप शुक्ल और धर्मवीर गुलाटी ने अच्छा सहयोग दिया। १५ अगस्त को श्री वर्षा में भीगते हुए भी प्रताप सिंह शूर जी वल्लभदास विशिष्ट आर्य बन्धुओं के साथ यात्रियों को धर्मशाला में पहुँचाने के कार्य में व्यस्त रहे थे। अनेक वक्ताओं ने मौरिशस में आर्य समाजियों के अतिरिक्त वहाँ के सनातन धर्मी भाइयों की ओर से दिये गये हार्दिक सहयोग के लिये भी कृतज्ञता प्रकट की। सार्वदेशिक सभा के महामंत्री श्री ओम्प्रकाश त्यागी ने मुगल लाइन्स के प्रबन्ध-संचालक श्री एस० जी० जग्गी और उनके साथियों के नौ-परिवहन मंत्री श्री राजबहादुर के और विदेश मंत्री श्री स्वर्णसिंह के समुचित सहयोग की सार्वजनिक रूप से सराहना की।

उस समय भारत के अनेक भागों में बाढ़ आ रही थी और बाढ़ के कारण कई स्थानों की रेलगाड़ियां बन्द पड़ी थीं। पर आर्य-यात्रियों की विशेष गाड़ी ६ सितम्बर को बम्बई सेन्ट्रल से पूर्व योजना के अनुसार रात को ठीक ११ बजे चल ही पड़ी। बम्बई के आर्य नेताओं ने स्टेशन पर भावभीनी विदाई दी। यात्रीगण मौरिशस प्रवास की मधुर स्मृतियों में खोये-खोये सो गये।

फिर अगले दिन सूरत, भड़ौंच, बड़ौदा, रतलाम, कोटा, भरतपुर, मथुरा सब वही स्टेशन आए और उन स्टेशनों पर लोगों ने यात्रियों के स्वागत में पुष्पमालाएं अर्पित कीं। उन सबके मन में जिज्ञासा थी कि मौरिशस में हुए महासम्मेलन के विषय में कुछ विवरण पता लगे। विस्तार से बता पाना मुश्किल था, क्योंकि गाड़ी अधिक देर ठहरने वाली नहीं थी। जितनी थोड़ी देर ठहरती, उतनी देर में ही श्री ओम्प्रकाश त्यागी ध्वनि-विस्तारक यन्त्र से मौरिशस सम्बन्धी यत्किंचित् विवरण सुना पाते।

मौरिशस जाते हुए उत्तर भारत के यात्री तो विशेष गाड़ी से बम्बई पहुँचे थे पर पूर्वी, पश्चिमी तथा दक्षिणी भारत के यात्री अपने-अपने स्थानों से अलग-अलग गाड़ियों में आकर बम्बई में एकत्र हो गए थे। तभी तो ७०० यात्रियों का यह अद्भुत सार्थवाह मौरिशस पहुंच सका था। अब बम्बई पहुंचकर पूर्वी, पश्चिमी तथा दक्षिणी भारत के यात्री अलग हो गये। उत्तर भारत के यात्री ही विशेष गाड़ी से दिल्ली आने के लिये रह गये। जिस तरह विभिन्न दिशाओं से आने वाले यात्रियों के मन में उस समय नया उत्साह था, अब बिखरते हुए सबके मन में वियोग-जन्य उदासी थी। "समागमाः सापगमाः"—संयोग के साथ वियोग तो लगा ही हुआ है। पर सबके मन में मौरिशस के महासम्मेलन की सफलता की प्रसन्नता भी थी। वियोग-जन्य उदासी क्षणिक थी, जैसे काव्य का संचारी भाव, पर

प्रसन्नता तो इस अभियान रूपी महाकाव्य का स्थायी भाव था।

बड़ौदा में कर्मवीर, आर्य नेता, ७५ वर्ष की आयु होने पर भी अपनी कर्मठता से युवकों को लज्जित करने वाले, श्री पं० आनन्दप्रिय जी और उनके कन्या गुरुकुल की बालिकाओं तथा रश्मि बहन आदि स्नातिकाओं ने जैसे पहले जाते हुए हार्दिक स्वागत किया था, वैसे ही अब फिर हार्दिक स्वागत किया।

बाढ़ की विभीषिका

गुजरात की सीमा में प्रवेश करते ही, भयंकर बाढ़ के समाचार मिलने शुरू हो गये थे। सूरत के पास ताप्ती और भड़ौंच (जो पुराकाल में भृगुकच्छ नाम का प्रसिद्ध बन्दरगाह रहा है) के पास नर्मदा में भी बाढ़ आई हुई थी। नर्मदा नदी तो इतने विकराल रूप में उफनी थी कि उसने मध्य प्रदेश और गुजरात के काफी बड़े भूभाग को अपनी सर्वग्रासी लपेट में ले लिया था। गर्मी के मौसम में यही इलाके भीषण अकाल से ग्रस्त थे और बरसात की समाप्ति पर अब भीषण बाढ़ की चपेट में आ गये। प्रकृति की भी कैसी लीला है! दाहोद पहुंचने तक तो यह अंदेशा हो गया कि शायद विशेष गाड़ी दिल्ली पहुंच ही न पाए। सारी रेल लाइन पानी के नीचे थी। लोग कह रहे थे कि पिछले १५ दिन से इस प्रदेश में सूरज के दर्शन नहीं हुए। सैंकड़ों मकान और मवेशी पानी में बह गये थे। लोगों की सम्पत्ति-हानि के अलावा प्राण-हानि भी काफी हुई थी। फ्रन्टियर मेल ६ घंटे लेट थी। दिल्ली से और भी कोई गाड़ी तब तक दाहोद नहीं पहुंची थी। ऐसी हालत में यात्रियों के मन की गति क्या रही होगी, कल्पना करें। लोग बार-बार रेल अधिकारियों से कहते थे गाड़ी चलाने को, पर उनका कहना था कि जब तक अगले स्टेशन से सलामती का संदेश न आ जावे, हम गाड़ी कैसे चला सकते हैं। उनका कहना ठीक ही था। यात्रियों के मन की भावना अपनी जगह थी, पर यहां तो सैंकड़ों लोगों की जान जोखिम में थी। दाहोद में विशेष गाड़ी तीन घंटे खड़ी रही।

आखिर गाड़ी चली। पर उसके आगे-आगे पायलट इन्जिन चला—जो यह देखता चलता कि पानी के नीचे कहीं सारी लाइन बह तो नहीं गई है और लाइन के ऊपर पानी कितना गहरा है। इस तरह धीरे-धीरे जब गाड़ी रतलाम पहुंची और फिर मध्य प्रदेश की सीमा में से निकलकर कोटा तक पहुंच गई, तब यात्रियों को विश्वास हो गया कि अब सकुशल दिल्ली पहुंचने में बाधा नहीं होगी, क्योंकि बाढ़-ग्रस्त इलाका पीछे छूट चुका है। पर अभी भरतपुर बाकी था। वहां भी एक बांध पड़ता था। कहीं वर्षा की अधिकता के कारण और पानी के दबाव के कारण वह बांध खिसक गया तो वहाँ भी जल-प्रलय आ सकती है।

पर भरतपुर सुरक्षित था और इन्द्रदेव के कोप का शिकार नहीं बना था। वहां के आर्यजनों के मधुर आतिथ्य ने सद्यः आई इस निश्चिन्तता को मधुरिमा से ओत-प्रोत कर दिया। फिर मथुरा आया। अब दिल्ली आने में क्या कसर थी!

पहले सूचना मिली थी कि ६ सितम्बर की रात को ११ बजे चली गाड़ी ७ ता० को आधी रात के बाद अर्थात् जब ८ ता० शुरु हो जाएगी, तब पहुंचेगी। पीछे सूचना मिली कि ८ ता० की शाम को ४ बजे पहुँचेगी। फिर संशोधित सूचना मिली कि ८ ता० की रात को ८ बजे गाड़ी दिल्ली पहुंचेगी। इसमें रेलवे अधिकारियों का कोई दोष नहीं था। भयंकर बाढ़ और वर्षा के कारण परिस्थिति ही ऐसी हो गई थी।

नई दिल्ली स्टेशन पर

अन्त में ८ सितम्बर की रात को १२ बजे आर्य यात्रियों की यह विशेष गाड़ी नई दिल्ली रेलवे स्टेशन पर पहुँची।

यात्री-गण सोचते थे कि इस आँधी पानी के मौसम में, आधीरात को, पुरजनों और परिजनों में से कौन स्टेशन पर आएगा। पर नहीं, स्टेशन तो खचाखच भरा था। केवल इष्टमित्र और सगे सम्बन्धी ही इस अभूतपूर्व ऐतिहासिक यात्रा से लौटे यात्रियों का स्वागत करने नहीं आए थे, प्रत्युत दिल्ली के महापौर श्री केदारनाथ साहनी स्वयं सारी दिल्ली की जनता की ओर से स्वागत करने के लिए अन्य स्थानीय आर्य नेताओं के साथ प्लेटफार्म पर उपस्थित थे।

वैदिक धर्म की जय के नारों के आदान प्रदान के साथ गाड़ी रुकी। पुष्पमालाओं का अम्बार लग गया। आपस में गले मिलने की धूम मच गई। जैसे देर के बिछुड़े हुए साथी मिल रहे हों। पर देर के कहां! अभी १३ अगस्त को ही तो विशेष गाड़ी आर्य यात्रियों को लेकर उस महान् अभियान के लिए चली थी और आज ८ सितम्बर को उस महान अभियान को सफलतापूर्वक सम्पन्न करके यात्री वापिस आ गये हैं। महीना भर भी तो नहीं हुआ। पर सबके मन में प्रसन्नता ऐसी थी जैसे सालों के बिछुड़े हुए मिले हों।

लोग माउण्ट एवरेस्ट पर विजय प्राप्त करने वालों का स्वागत करते हैं। चन्द्रमा के धरातल पर चरण रखने वाले प्रथम मानवों का संसार भर में स्वागत हुआ। वे अपने ढंग के अलग अभियान थे। वे मानवीय कष्ट-सहन की क्षमता और वैज्ञानिक उन्नति से प्रेरित अभियान थे। पर सभी अभियानों में एक तत्व समान होता है—वह है दृढ़-संकल्प। मौरिशस के अभियान में कष्ट-सहिष्णुता और प्राण-संकट जैसी बात नहीं थी। न ही वैज्ञानिक उन्नति से यह अभियान प्रेरित था। परन्तु दृढ़ संकल्प वाला तत्व इस अभियान में भी ज्यों का त्यों विद्यमान था।

आर्य जनता की प्रतिनिधि-भूत सार्वदेशिक सभा ने मौरिशस में आर्य महासम्मेलन करने का संकल्प किया था। मौरिशस के आर्यों ने इसके लिए प्रेरणा दी थी और आर्य जनता के उत्साह ने इस अभियान को पूरा किया था। यह कोरा साहसिक या वैज्ञानिक अभियान भले न हो, पर यह धर्म-विजय का अभियान तो था ही। यह दो राष्ट्रों की आत्माओं के मिलन का अभियान था। यह "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" की दिशा में आगे बढती आर्य जनता के उत्साह का द्योतक और ऋषियों के "चरैवेति चरैवेति" उपदेश को सार्थक करने वाला अभियान था। इसलिए आर्य जाति के लिए यह एक ऐतिहासिक घटना थी।

फलश्रुति

भारतवर्ष के इतिहास में, मौरिशस के इतिहास में, हिन्दू जाति के इतिहास में और आर्यसमाज के इतिहास में अपने ढंग की यह अभूतपूर्व घटना घटित हो गई। मौरिशस में अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन सकुशल सम्पन्न हो गया। भारत से ७०० यात्री और अन्य देशों से ५०० यात्री पोर्टलुई में आर्यसमाज के नाम से एकत्रित हुए और उन्होंने देश-विदेश में आर्य समाज तथा वैदिक धर्म के प्रचार के उपायों पर विचार किया। जिन लोगों को इस आयोजन की सफलता में सन्देह था, वे भी चकित रह गए और आर्य समाज के आलोचक भी सन्तुष्ट हुए। अन्तर्राष्ट्रीय जगत् में और स्वयं भारत सरकार की दृष्टि में आर्य समाज की साख बढ़ी। पर जो घटना जितनी बड़ी होती है, वह उस घटना के सूत्रधारों पर उतनी ही बड़ी जिम्मेदारी भी डालती है।

भारत के विभिन्न भाषाओं के दैनिक समाचार पत्र जहाँ इस अभियान के प्रत्येक चरण से जनता को अवगत कराते रहे, वहां इस अभियान की सफल समाप्ति के बाद उन्होंने मौरिशस के सम्बन्ध में जनता की बढ़ती हुई जिज्ञासा की पूर्ति के लिए वहाँ की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थिति पर अनेक लेख प्रकाशित किए। मौरिशस जाने वाले यात्रियों से लोगों ने विभिन्न गोष्ठियों और स्वागतार्थ आयोजनों के माध्यम से वहाँ के संस्मरण सुने। आम भारतीय जनता की रुचि मौरिशस में बढ़ी और मौरिशस का नाम नगर-नगर गांव-गांव तक पहुंच गया।

सार्वदेशिक की भावी योजनाएं

सार्वदेशिक सभा के महामंत्री श्री ओम्प्रकाश त्यागी ने सभा के इस बढ़े हुए उत्तरदायित्व को समझते हुए पत्र-प्रतिनिधि सम्मेलन बुलाकर जनता को इस बात से अवगत कराया कि भविष्य में प्रवासी भारतीयों की वैदिक धर्म के प्रति आस्था बनाए रखने के लिए सार्वदेशिक सभा क्या-क्या योजनायें बना रही है। उन्होंने प्रेस-कान्फ्रेंस में बताया कि दिल्ली में प्रवासियों की सुविधा के लिए सार्वदेशिक सभा एक प्रवासी-भवन का निर्माण कराएगी। श्री सी० एफ० एण्ड्रूज और महात्मा गांधी भी इस दिशा में सोच रहे थे और मूर्धन्य पत्रकार श्री बनारसी दास चतुर्वेदी तो प्रवासी-भवन के निर्माण के लिए लगातार आन्दोलन भी करते रहे हैं। पर उस पीढ़ी को भारत के स्वातन्त्र्य-संघर्ष से ही फुरसत नहीं थी। पराधीन भारत में लोग इस ओर विशेष ध्यान नहीं दे पाये। पर अब तो भारत स्वतन्त्र है। अवसर भी अनुकूल है। आशा करनी चाहिए कि भारत सरकार भी प्रवासी-भवन के निर्माण में अपने दायित्व को पूरा करने में संकोच नहीं करेगी।

श्री त्यागी ने बताया कि प्रवासी भवन के अतिरिक्त विदेशी छात्रों को अधिक से अधिक छात्रवृत्तियां देने की, और विद्वान् साधु संन्यासी और वैदिक मिशनरियों को प्रचारार्थ विदेशों में भेजने की भी एक बृहद् योजना सार्वदेशिक सभा बना रही है। इस योजना में भी सरकार का सहयोग अपेक्षित है। इसके अतिरिक्त विदेशी भाषाओं में ऋषि-कृत ग्रन्थों का अनुवाद तथा वेदों का भाष्य छापने की भी सार्वदेशिक सभा की योजना है।

मौरिशस के महासम्मेलन में हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ में मान्यता देने की मांग की गई थी। इस मांग की पूर्ति के लिए भारतीय जनता को भी आन्दोलन में सक्रिय योग देना होगा। हिन्दी सेवी संस्थाओं और संगठनों को तो उस दिशा में विशेष जागरूक होना ही चाहिए।

श्री त्यागी ने मौरिशस जाने वाले समस्त यात्रियों को पत्र लिखकर सार्वदेशिक सभा की ओर से धन्यवाद दिया और सार्वजनिक रूप से लेख लिखकर भी इस समस्त अभियान में शुरू से लेकर अन्त तक किसी भी स्तर पर सहायता देने वाले सरकारी गैर सरकारी, आर्यसमाजी तथा गैर आर्यसमाजी—सभी के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त किया और अन्त में अन्तरंग सभा की स्वीकृति से मौरिशस के अन्तर्राष्ट्रीय महासम्मेलन से सम्बद्ध समस्त घटनाचक और कार्य-कलाप को पूर्वापर प्रसंग सहित लिपिबद्ध करने के लिए यह स्मारिका निकालने का निश्चय किया—जो इस समय पाठकों के हाथ में है।

सम्मेलन की उपलब्धियाँ

एक प्रश्न रह गया—इस महासम्मेलन की फलश्रुति क्या है ?

इस प्रश्न के उत्तर के दो भाग हैं। पहला भाग है—मौरिशस से सम्बद्ध और दूसरा भाग है—भारत से सम्बद्ध।

जहाँ तक मौरिशस का सम्बन्ध है, उत्तर यह है कि इस सम्मेलन से वहाँ के प्रवासियों को यह आश्वासन मिलेगा कि हमारे पूर्वजों की भूमि—भारतमाता—हमें भूली नहीं है। केवल मौरिशस के प्रवासियों को ही क्यों, अन्य देशों के भी भारतवंशी प्रवासियों को इस सम्मेलन से उच्च आत्मबल प्राप्त होगा। मौरिशस की समस्त जनता में पारस्परिक सौहार्द के नए सेतुओं का निर्माण होगा। वहां के समस्त हिन्दू आपसी मतभेदों को भुलाकर संगठित होंगे और अन्य मतावलम्बियों से मिलकर सम्प्रदाय-निरपेक्ष लोकराज्य मौरिशस के भाग्य-निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। वे महसूस करेंगे कि अब हम केवल प्रवासी नहीं, बल्कि अपने राष्ट्र के मुख्य घटक हैं, इसलिए इसके निर्माण का और इसकी प्रगति का सबसे बडा दायित्व भी हमारा ही है। आर्य समाज के कार्य को तो वहाँ बल मिलेगा ही।

मौरिशस के सन्दर्भ में यह न भूलना चाहिए कि यह टापू बेशक छोटा सा है, पर यहां यूरोपीय, अफ्रीकी और एशियायी संस्कृतियों का संगम अद्भुत रूप से हुआ है। जिस तरह प्रयाग में गंगा-यमुना-सरस्वती का संगम है, जिस तरह कन्याकुमारी में हिन्द महासागर, अरबसागर और बंग सागर का संगम है, उसी तरह यहाँ यूरोप, अफ्रीका, और एशिया महाद्वीपों की संस्कृतियों का संगम हुआ है। यों यह मौरिशस सांस्कृतिक त्रिवेणी का प्रयागराज है। ये तीनों संस्कृतियां वहां संघर्ष की मुद्रा में भी हैं, और समन्वय की मुद्रा में भी। भारतीय जनता समन्वय की मुद्रा की कर्णधार है, क्योंकि समन्वय उसकी सांस्कृतिक विरासत है। इसमें उसे अब तक सफलता मिली है। इसीलिए उसका वहां प्रभुत्व और वर्चस्व विद्यमान है। पर विरोधी शक्तियां भी प्रसुप्त नहीं हैं। वे किसी न किसी रूप में सिर उठाती रहती हैं। मौरिशस की जनता को उन राष्ट्र-विरोधी शक्तियों का बड़ी कुशलता से सामना करना होगा। आशा करनी चाहिए कि इस सम्मेलन से उन्हें राष्ट्र-विरोधी शक्तियों से लोहा लेने के लायक पर्याप्त संबल मिलेगा।

भारत के संदर्भ में

जहां तक उक्त प्रश्न के उत्तर का भारत के साथ सम्बन्ध है, वहां यह कहा जा सकता है कि भारतवासी सैंकड़ों वर्षों से धर्म-विजय के मूलमंत्र को भूल चुके थे। विजिगीषा के बजाय वे पराजय-मनोवृत्ति से अक्रान्त थे। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के जयघोष में केवल वाणी का ही विलास रह गया था, कर्मशौर्य का नहीं। द्वीप-द्वीपान्तर और देश-देशान्तर की चर्चा भी केवल सिद्धान्त-पक्ष को ही स्पर्श करती थी, व्यवहार-पक्ष को नहीं। इस सम्मेलन के बाद से भारतवासियों में पुनः धर्म-विजय की भावना पैदा होगी। वे पुनः प्राचीन आर्यों की इस वाणी के मर्म को समझेंगे—"अहमिद्रो न पराजिग्ये"—मैं इन्द्र हूं—मैं पराजित नहीं हो सकता।

इसके अलावा भारतवासी भी अब प्रवासियों की उपेक्षा नहीं करेंगे। उन्हें अपने धर्म-बन्धुओं के प्रति अपने कर्त्तव्य का बोध होगा। बृहत्तर भारत की भावना उनके मन-प्राण को प्रेरित करेगी और संकीर्ण राष्ट्रवाद तथा संकीर्ण सम्प्रदायवाद से उबर कर वे राष्ट्रवाद के सही और व्यापक अर्थ को समझेंगे।

अब तक भारत-विरोधी शक्तियां भारत पर यह आरोप

लगाती रही हैं कि विभिन्न देशों में गए प्रवासी भारतीयों को भारत उन देशों की सामान्य सांस्कृतिक जीवनधारा से एकाकार नहीं होने देता। पर यह आरोप मिथ्या है क्योंकि भारतीय संस्कृति का अपना वैशिष्ट्य उसे अन्य संस्कृतियों से पृथक् करता है। अन्य संस्कृतियाँ जहाँ अनात्मवादी और भोग-प्रधान हैं, वहां भारतीय संस्कृति आत्मवादी और त्याग-प्रधान है। वैदिक संस्कृति के उदात्त तत्वों, आध्यात्मिक गहराइयों और दार्शनिक ऊंचाइयों के आगे सारे संसार के मनीषी नतमस्तक हैं। तभी तो प्राचीन आर्य मनु की वाणी में खम ठोक कर कहते रहे—

एतद् देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥

भारत को 'जगत्-गुरू' की उपाधि यों ही तो नहीं मिली थी। अपनी संस्कृति की उदात्तता के बल पर ही उसका गुरुत्व था। जो औरों को प्रकाश देने की सामर्थ्य रखता है, उससे यह कहना कि तुम गैरों का अन्धकार स्वीकार करके उसमें विलीन क्यों नहीं हो जाते—कितना असंगत है! यह गौरव काल्पनिक नहीं है, विभिन्न संस्कृतियों के इतिहास से स्वयंसिद्ध है। मौरिशस का इतिहास इस गौरव का सबसे बड़ा साक्षी है। इस सम्मेलन का एक परिणाम यह होना चाहिए कि भविष्य में इस प्रकार के आरोप भारत पर न लगाए जाएं। इतना ही क्यों, इस सम्मेलन का यह बड़ा सुफल समझना चाहिए कि अब प्रवासी भारतीय स्वयं इस प्रकार के आरोपों का उत्तर दे दिया करेंगे और भारत तक उन आरोपों की आंच नहीं आने देंगे।

इस सम्मेलन से भारत और मौरिशस की मैत्री को तो चार चांद लगेंगे ही, अन्य भी वे सब देश, जहां-जहां भारतीय प्रवासी गए हैं, भारत की मैत्री के लिए लालायित होंगे और इसी प्रकार के महासम्मेलनों का आयोजन अपने देश में भी करना चाहेंगे।

"मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे" के वैदिक आदर्श पर चल कर भारत किसी दिन विश्वमैत्री का आगार बने और मौरिशस का यह अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन उस विश्व-मैत्री का आधार बने—प्रभु से यही प्रार्थना है।

ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

●●

जग जान ले कि न आर्य
केवल नाम के ही आर्य हैं।
नाम के अनुरूप वे
करते सदा शुभ कार्य हैं॥

मौरिशस में

आर्यसमाज के प्रमुख कार्यकर्ता:—

सर्वश्री मोहनलाल मोहित, रामलाल गुमानी, महेश सरदार, डा० जगगुरु शिवगोविन्द, दर्शन बोनामाली, धर्ममित्र अपाडू, गौतम तिलक, रामकृत जगेसर, डा० सुदर्शन जगेसर, जदुनन्दन द्वारिका, टी० कालीचरण, रामरत्न विद्यार्थी, वेणीमाधव, प्रयाग बिका, धर्मवीर घूरा, भरत चौरड़िया, राजगुरु रामसाहा, शिवदत्त महावीर, रामलगन, रामरूप रामसाहा, भोला, सहदेव पाण्डे, आचाना नगाडू, रामनारायण साधु, पंचू, नारायण संजीवी, डा० रामेश्वर ओरी, राजमल रामसाहा, सनासी, महावीर किन्नू, देवलाल सौवर्ण, विष्णुदेव मेघराज, रामावतार, रामधन पूरण, जगदेव सिंह, रघुनाथ रामगुलाम, रामप्रसाद सुखू, ब्रह्मदत्त नन्दलाल, बुधराम फागू, मुनी सरदार, मोती मिनीक, रामकरण सौबरण, रतनरामदीन, कुँवरसिंह, विक्रमसिंह रामलाल, हरिलाल चूड़ामणि, यशकरण मोहित, रामेश्वर जयपाल, सत्यकाम बुलेल (वर्तमान कृषि मंत्री), भृगुनाथ घरभरण (वर्तमान व्यापार मंत्री), तारामन बन्धन (वर्तमान विधायक), रवीन्द्र घरभरण (भारत में वर्तमान राजदूत), रामसुन्दर मोदन (वर्तमान उपमंत्री, नगर नियोजन), हरिदत्त घूरा, मुनीन्द्रनाथ, डा० रुद्रसेन नियुत, डा० राजेन्द्र हरि, रुद्रदत्त किन्नू, सुजन साधु, विश्वेश्वर धुरंधर, डा० जगदीश चन्द्र मोहित, वासुदेव विष्णुदयाल, बाबूलाल रामलखन, शंकर सोबनाथ, दीपनारायण, रामनरायण राय, नन्दकिशोर सबल, कान्त तिलक, दीपनारायण विगन, प्रल्हाद रामशरण, दीपनारायण पदारथ, हरि मातादीन, रामप्रसाद बन्धन आदि।

मौरिशस में आर्यसमाज की प्रमुख महिला कार्यकर्त्रियां :—

श्रीमती लाखावती हरगोविन्द, श्रीमती यशोदा फागू, श्रीमती सत्यनिष्ठा नन्दलाल, श्रीमती लक्ष्मी रामप्रसाद, श्रीमती रुक्मिणी रामकवर, श्रीमती राधिका मणि, श्रीमती सरला देवी आदि।

मौरिशस में जिन स्थानों पर आर्यसमाजों की स्थापना हो चुकी है :—

पोर्टलुई, क्यूरपिप, त्रियोल, गुडलेन्स, लावेनीर, प्लेन दे रोश, पेचित रोजाली, शामुनी सावान, कां तुरेल क्लाक, वासें रोड, शेमे ग्रेन्ये, हेरमीताज, माहेबर्ग, मोर्सेलमां, प्लेनमायां, लेस्कालिये, ओल्वड, साविनिया, लालोरा, सेंप्येर, पेचिवेरजे, लाग्रेमाँ, दे फेर, बुआदे आमुरेत, काँ दे मास्क, पोस्त दे फ्लाक, क्वीन विक्टोरिया, लेस्पेरांस, रेनियो मोरेल, पेची राफे, मामजेल जान, ग्रांगोव, बेल्वी मोरेल, रोशन्वार, क्रोतेज, ग्रांबे, काप मालेरे, पेची पाके पुद्रदोर, जेरे मे, ब्वारुज, उमेमारी, लाले मांग, काँबेतों, आतलास, त्रिआंग, जेरमे, ब्वाज़ाको, ला ओतेर, रोसतेर, बृतानिया-सावान, ग्रांबुआन, लाफलोरा, बुआशेरी, तापाक, बेलेर आरद्वे, सातो, बेनारेस, सावाना, तेरासिन, वेलोम सिते, काँ जाब, काँ स्याजी, लेस्कालिये लासूजिन, सावेनिया, त्रोआ बुचिक, मोंदेजेर, मारताबा, ग्रोबुआ, रोसबेल, मारदालबेर, मों

देजेर कार्यें, पेची बेलेर, एडेसे, कारो आकास्या, पेचीसाब, फेरने, सोंचिलेर, ब्रेवालों, रिशमार, बोनमेर, कां इचचे, पेचित रेचेत, पेचीशेमें, कोस्तांस, सेंरेमी, पालमार, प्लेन जेसनी, बेराजियेर, बोनाकेई, ब्रेंच रोउ, पोस्त दे फ्लाक, स्वाजी, मिशनक्रोश, लालमाटी, लातापी, कॉ-दे मास, ग्रां-रेचेत, कात कोको, मांर लोशो, मेनी, दारनी, तीन बुतिक, त्रियो, तेर मिनिस, बुआ रुज, सोलिचिद, फ्लोरिदाले, पम्पे-लमुस, पेचित रोजाली, ग्रांड रोजाली, कां दे जारार, इलोत, नेव्येम मिल, दिमाउन्त, मोंगू, तोस्का, ब्वामांग, फोंजीसाक, मागी रोड, पों प्राले, सैंतांद्रे, मोसेलमां, देपीने, जुवांस, कां-इच्ये, पोएंत ओ कासी, मारीजान, एनेस फ्लोरां, बेलवेदेर, पोंब्लां, कारोलिन, वापितो, काशो, लातान्यें, सेंतक्रोआ, कोको, रिश्तेर, रोसबुआ, मेलरोज, पाई, रिपाई, मोंताई ब्लांश, दगोचियेर, प्रोविदांसे, लेस्पेरांस, शेरी लियेनार, सातोनेफ, तोस्ते, स्टेनले, त्रेफ ओत्रेनी, बेलरोज, आवेनी सें लुई, पालमा, सोलफेरिनो, आले ब्रियां, कॉ फक्रो, साल रेनो, राबिन्सन रोड, फोरेस्ट साइड, वाक्वा, क्लेफों रोड, रेन्यों, मराठी, नुवेल दे कुवेर्त, मालेंगा आदि ।

मौरिशस में अभी तक गांवों-कस्बों-शहरों—सबके नाम फ्रांसीसी हैं, इसलिए भारतीय कानों को ये नाम अट-पटे लग सकते हैं । परन्तु इस सूची से इतना पता अवश्य लग जाएगा कि वहां आर्य समाजों की संख्या कितनी अधिक है । इस समय वहां कुल मिलाकर सवा तीन सौ से ऊपर आर्य समाजें हैं । यदि तुलना ही करनी हो तो यों करिए : दिल्ली की कुल आबादी लगभग पचास लाख और उसमें आर्यसमाजों की संख्या डेढ़ सौ । जबकि मौरि-शस की कुल आबादी लगभग साढ़े आठ लाख और इस थोड़ी सी आबादी में आर्यसमाजों की संख्या सवा तीन सौ से अधिक । इससे कोई भी यह अनुमान लगा सकता है कि वहां आर्य समाज का आन्दोलन कितना लोकप्रिय है ।

मौरिशस में महिला आर्य समाजें:—

लावानेर, नुवेल दे कुवेर्त, बेलरोज, रिश्तेर, सेंतक्रोआ, पोर्टलुई, काशी, पितों, फोंजीसाक, पालेमूस, बुआरूज, बेना-केई लावाँचिर, मिशनकोस, गुडलेन्स, जेरमें, ब्वाजाको, बेलवी मोरेल, आदि ।

इन सब आर्यसमाजों (महिला आर्यसमाजों सहित) की स्थापना किस किस सन् में हुई, वहां कौन-कौन पदा-धिकारी और कार्यकर्ता हैं और प्रत्येक आर्य समाज की गति-विधि क्या-क्या है—इस सबका विस्तृत विवरण, 'आर्यसभा मौरिशस के इतिहास' में देखा जा सकता है । यह ग्रन्थ १९७२ में ही आर्यसभा की ओर से प्रकाशित हुआ है । हमने भी उसी पुस्तक के आधार पर उक्त सूची दी है ।

—सम्पादक

●●

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥

—नीतिज्ञ लोग निन्दा करें, चाहें स्तुति, लक्ष्मी चाहे आवे या छोड़कर चली जावे, चाहे आज ही मृत्यु आ जावे या युगों के बाद आवे, धीर पुरुष कभी न्यायोचित पथ से विचलित नहीं होते ।

षष्ठ रश्मि

स्तुता मया वरदा वेदमाता

प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजनाम् ।

आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं

ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम् ॥

—अथर्ववेद १९।७१।१

—हमने संस्कारवान् जनों को पवित्र करने वाली वेदमाता की स्तुति की है, वह हमें आयु, बल, सन्तान, पशु, कीर्ति, धन और मोक्ष प्रदान करे ।

प्रस्ताव-माला

पोर्टलुई में पारित प्रस्ताव

प्रस्ताव संख्या—१

वेद पर आधारित सत्य सनातन वैदिक धर्म और वैदिक संस्कृति में विश्वास रखने वाले आर्य बन्धुओं का यह सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन अपने उन आर्य बन्धुओं के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है जिन्होंने मौरिशस, गायना, फिजी, डच-गायना, पूर्वी-अफ्रीका, दक्षिण अफ्रीका में भारत से आकर विषम परिस्थितियों में नाना प्रकार की यातनाओं को सहन कर इन देशों को आबाद किया और अशिक्षिम तथा धार्मिक दृष्टि से अनभिज्ञ होते हुए भी अपने धर्म, संस्कृति व परम्पराओं की रक्षा की और उक्त राष्ट्रों के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान किया । अतः यह सम्मेलन निर्णय करता है कि :—

१—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा प्रत्येक देश में भारतीयों के पुरुषार्थ का संक्षिप्त इतिहास तैयार करावे ताकि भावी सन्तान उससे सदैव प्रेरणा लेती रहे ।

२—विदेशों में रहने वाले भारतीय बन्धुओं में अपने धर्म व संस्कृति के प्रति आस्था बनी रहे इसके लिये सार्वदेशिक सभा उनके मार्गदर्शनार्थ समय-समय पर सुयोग्य उपदेशकों को भेजती रहे और विदेशी भाषाओं में वैदिक साहित्य का निर्माण करे ।

३—प्रत्येक देशीय आर्यसमाज व आर्य प्रतिनिधि सभा अपने यहां पुस्तकालय व वाचनालय की व्यवस्था करे जहां वैदिक साहित्य के अध्ययन का सुअवसर प्राप्त हो सके ।

४—प्रत्येक देशीय आर्य प्रतिनिधि सभाएं वैदिक साहित्य का वहां की स्थानीय भाषा में अनुवाद कराकर अन्य जनों में वितरण करे ताकि उनके हृदयों में वैदिक धर्म के प्रति श्रद्धा व आस्था उत्पन्न हो सके।

५—यह सम्मेलन समस्त देशीय वैदिक धर्मियों से अपील करता है कि वह आपस के छोटे मोटे विवादों को भुलाकर अपनी एकता को बनाये रखें और अपने परिवारों में आपसी वार्तालाप अपनी मातृ-भाषा में ही करें और वैदिक पर्वों को अनिवार्य रूप से मनाने का प्रयत्न करें ।

६—समस्त देशीय वैदिक धर्मियों को चाहिए कि अपने सैद्धान्तिक मतभेदों को भुलाकर कम से कम श्रावणी, विजयदशमी, रामनवमी, दीपावली, होली आदि पर्वों को सामूहिक रूप से मनायें ताकि सब में आपसी प्रेम बना रहे ।

७—अब तक भारत से बाहर होने वाले धर्म-प्रचार का लक्ष्य भारत के मूल निवासी रहे हैं । उनमें धार्मिक भावना जागृत करने की आवश्यकता तो है ही परन्तु प्रत्येक देश के वहां के मूल निवासियों में वैदिक धर्म के प्रचार का कार्य कुछ भी नहीं हुआ है । इसलिये स्थानीय निवासियों में वैदिक धर्म का प्रचार हो सके, ऐसी योजना बनानी चाहिए । इसके लिये योग्य प्रचारक तैयार किये जाने चाहिएं और वहां की स्थानीय भाषाओं में उपयोगी साहित्य प्रकाशित किया जाना चाहिए ।

प्रस्ताव संख्या—२

सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन संसार की सुख शांति को दृष्टि में रखकर इस बात पर घोर चिन्ता व्यक्त करता है कि संसार इस भ्रान्ति में ग्रस्त हो गया प्रतीत होता है

कि निर्धनता के कारण ही संसार में अनाचार, अत्याचार एवं वर्ग-संघर्ष हो रहा है और भौतिक उन्नति के द्वारा सर्वत्र सुख शान्ति की स्थापना हो जावेगी। परन्तु तथ्य यह है कि भौतिक उन्नति के साथ साथ अन्याय, अत्याचार व वर्ग-संघर्षों में लगातार वृद्धि हो रही है।

इस सम्मेलन का दृढ़ मत है कि कोरा भौतिकवाद संसार का कल्याण न कर सकेगा। भौतिकवाद एवं भोग-वाद, मानव की स्वार्थ पर आधारित आसुरी प्रवृत्तियों को जागृत कर, उसकी ऐन्द्रिक असीमित इच्छाओं को जन्म देकर, उसके अन्दर असन्तोष की ज्वाला भड़का देते हैं और वह असन्तोष मानव को मानसिक गरीबी के गर्त में डालकर उसकी सुख और शान्ति का सदैव के लिए अपहरण कर लेता है। इसके विपरीत कोरा अध्यात्मवाद मानव को भौतिक गरीबी में डाल उसको नाना प्रकार के कष्टों में डाल देता है।

सम्मेलन की दृष्टि में भौतिकवाद तथा अध्यात्मवाद के समन्वय के द्वारा ही संसार का कल्याण सम्भव है। भौतिक वाद व अध्यात्मवाद दोनों में से अकेला कोई भी समाज को सुखी बनाने में असमर्थ है। दोनों मिलकर ही लक्ष्य की पूर्ति कर सकते हैं। भारतीय धर्म व संस्कृति की यही संसार को अद्वितीय देन रही है। भौतिकवाद व भोगवाद से पीड़ित पाश्चात्य जनता ने उक्त सत्य को अनुभव कर लिया है और वह अब शान्ति की खोज में नाना रूप धारण कर भारत की ओर दौड़ रही है।

परन्तु सम्मेलन को यह देखकर खेद व वेदना हो रही है कि जब भौतिकवादी जगत भारतीय तत्त्वज्ञान के सम्मुख नतमस्तक हो रहा है तब भारत की जनता भौतिकवाद व भोगवाद की ओर पागलों की भांति अग्रसर हो रही है। सम्मेलन की दृष्टि में इसका मूल कारण धर्म-निरपेक्षता के नाम पर अध्यात्मवाद की सर्वथा उपेक्षा कर भौतिकवाद को अधिक बढ़ावा देना है।

अतः यह सम्मेलन सुख और शान्ति की इच्छुक मानव जाति से अनुरोध करता है कि :—

(क) वह भौतिकवाद व भोगवाद की मृगमरीचिका के पीछे दौड़ना बन्द कर भौतिकवाद तथा वैदिक धर्म द्वारा प्रतिपादित अध्यात्मवाद दोनों का समन्वय कर संसार को स्वर्ग बनाने का प्रयत्न करे।

(ख) यह सम्मेलन संसार के विविध प्रशासनों से अनुरोध करता है कि वे भौतिकवाद के साथ वैदिक अध्यात्मवाद की भावना को भी बढ़ावा दें और नैतिक शिक्षा को स्कूली शिक्षा का अनिवार्य अंग बनावें।

(ग) यह सम्मेलन आर्यसमाजों को निर्देश देता है कि वह अपने मंच पर वैदिक अध्यात्मवाद के प्रवचनों तथा व्यक्तिगत जीवन में योग साधना व स्वाध्याय को बल दें और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित आध्यात्मिक शिविरों में भाग लेकर आध्यात्मिक धारा को देश में बलवान् बनावें।

प्रस्ताव संख्या—३

अनार्य बुद्धि के कारण संसार की वर्तमान दशा अत्यन्त शोचनीय है, सर्वत्र असन्तोष, अशान्ति, वैर, विरोध, कलह और सन्ताप दृष्टिगोचर होते हैं। जो प्रयत्न इस पारस्परिक अविश्वास तथा द्वेष भावना आदि को दूर करने के लिये किये जा रहे हैं, वे सब असफल हो रहे हैं। इस परिस्थिति को अत्यन्त असंतोषजनक अनुभव करते हुए आर्यसमाज निम्न-लिखित घोषणा का, जो मन्तव्यों से व्यक्त होती है और जिसका आर्यसमाज अब तक प्रचार करता आ रहा है, व्यापक प्रसार करना अपना कर्त्तव्य समझता है। आर्य समाज का दृढ़ विश्वास है कि सत्य सनातन, सार्वभौम वैदिक धर्म के मुख्य सिद्धान्तों को समझकर उन पर आचरण करने और वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था के आधार पर सामाजिक संगठन करने पर ही मानव समाज का कल्याण सम्भव है, अन्यथा नहीं, क्योंकि वेद समस्त धर्मों और शास्त्रों का मूल है। अतः उसकी आदर्श शिक्षाओं को समस्त समुचित उपायों से संसार में फैलाना शान्ति और कल्याण के लिये परमावश्यक है :

१—ईश्वर एक है, वह हम सब प्राणियों का पिता है। जीवों के पुरुषार्थ और ईश्वर की दया इन दोनों के संमिश्रण से ही संसार में सुख की प्राप्ति हो सकती है। अतः प्रत्येक आर्य का कर्त्तव्य है कि

वह पुरुषार्थ और ईश्वर-विश्वास इन दोनों गुणों को भली प्रकार धारण करे।

२—मनुष्य जाति एक है, उसमें राष्ट्रीय, साम्प्रदायिक, जाति और रंग तथा अन्य संकुचित भावनाओं के आधार पर द्वेषपूर्ण तथा हिंसात्मक भेद-भाव करना संसार की अशान्ति का मुख्य कारण है। आर्यसमाज इस भेद-भाव को दूर करना अपना मुख्य कर्त्तव्य समझता है।

३—सच्ची नागरिकता का आधार वेद के आधार पर मनु महाराज के बताये हुये धृति-क्षमा आदि १० लक्षण तथा यम-नियमादि हो सकते हैं। इनके अपनाये बिना मनुष्य सुयोग्य नागरिक नहीं बन सकता। अतः प्रत्येक आर्य का इन लक्षणों को अपनाना और प्रचार करना आवश्यक कर्त्तव्य है।

प्रस्ताव संख्या—४

मानव-जीवन में धार्मिक एवं आस्तिक मूल्यों के निरन्तर ह्रास को यह सम्मेलन विश्व की एक भयावह घटना समझता और धर्मजीवी कहे और समझे जाने वाले नर-नारियों को प्रेरणा करता है कि वे उपदेश के साथ-साथ अपने क्रियात्मक जीवन से इन दोनों की महत्ता प्रतिपादित करें और इनमें आस्था उत्पन्न करने में कोई प्रयत्न उठा न रखें।

धर्म ईमान का वा अनर्गल क्रियाकलाप का नहीं, अपितु सत्यज्ञान एवं सत्यकार्य का विषय है और समाज को एकता की डोरी में बांधने वाला साधन है। जो जीवन मनुष्यों एवं प्रभु के निरीक्षण पर खरा उतरे, एक मात्र वही सच्चे धर्म का प्रमाण-पत्र है।

वैदिक धर्म अथवा मानव धर्म मानव के अभ्युदय व निःश्रेयस सिद्धि की प्रणाली है, वह ऐसी प्रवृत्ति है—जो अपना और अपने साथ समाज का हित-संपादन करना सिखाती है—जो बुद्धि और हृदय दोनों को समान रूप में घेरे रहती है, जो यह मानती है कि यदि बुद्धि भावातिरेक से शून्य हो तो वह व्यर्थ है और यदि भावातिरेक बुद्धि से प्रेरित न हो तो वह भी व्यर्थ है। ये दोनों भी व्यर्थ हैं यदि पक्षपात-रहित सत्य और न्यायाचरण से अनुप्राणित करके मनुष्य को कर्त्तव्यानुष्ठान की ओर प्रेरित न कर सकें।

वैदिक धर्म, धर्म के इसी प्रकार के स्वरूप का प्रतिपादन करता है और आर्य समाज संसार में इसी प्रकार के धर्म को प्रचारित करने की आवश्यकता पर बल देता है।

इस सम्मेलन की सम्मति में धर्म के संदर्भ में संसार से विरक्ति और संसार के आनन्द में घोर आसक्ति की भूल को लोग अनुभव करके अब सत्य धर्म की ओर अग्रसर होने लगे हैं। अतः वैदिक धर्मियों को सच्चे धर्म को पुनः प्रतिष्ठित करने के इस अलभ्य अवसर से पूरा पूरा लाभ उठाना चाहिए और लोगों को धर्म के नाम पर पथ-भ्रष्ट होने से बचाना चाहिए जिसके लिए स्वार्थी तत्व सक्रिय हैं।

प्रस्ताव संख्या—५

सत्य सनातन वैदिक धर्मियों का यह सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन इस बात पर खेद व चिन्ता व्यक्त करता है कि संसार के अनेक देशों में मातृ-शक्ति को उचित स्थान व अधिकार नहीं दिया जाता है जिसके परिणाम-स्वरूप राष्ट्रों का समुचित विकास व उत्थान नहीं हो पा रहा है और मानव समाज में दैवीय प्रवृत्तियों के स्थान पर दानवीय विचारों को बल मिल रहा है। इस सम्मेलन का दृढ़ मत है कि राष्ट्र का वास्तविक निर्माण माता की कोख व गोद में होता है या गुरुओं के चरणों में होता है। इस प्रकार माता और गुरुओं के उत्थान व पतन में राष्ट्र का उत्थान व पतन निहित होता है। वैदिक धर्मानुसार "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः" अर्थात् जिस राष्ट्र में नारियों का आदर होता है वहीं देवताओं का निवास होता है।

यह सम्मेलन इस बात पर भी आश्चर्य तथा चिन्ता व्यक्त करता है कि कई देशों में नारी-उत्थान के नाम पर नारी को पथ-भ्रष्ट किया जा रहा है और पुरुष तथा नारी के आवश्यक व स्वाभाविक सम्बन्धों को बिगाड़ा जा रहा है और इस प्रकार गृहस्थाश्रम की आधार शिला को हिलाया जा रहा है जिसके कुपरिणाम बड़े ही भयावह होंगे।

अतः यह सम्मेलन संसार के सभी राष्ट्रों के कर्णधारों एवं सरकारों से अपील करता है कि :—

१—यदि वे अपने देशों में मानवीय गुणों का विकास चाहते हैं तो वे नारी जाति को राष्ट्र-निर्माण-शक्ति

मानकर उसे समुचित सम्मान व अधिकार प्रदान करें ताकि वह राष्ट्र के निर्माण व प्रशासन में अपना योगदान कर सके।

२—महिलाओं को पूर्ण मताधिकार तथा राष्ट्र के किसी भी पद पर चुने जाने का पूर्ण अधिकार मिलना चाहिए।

३—चलचित्रों व विज्ञापनों में नारियों के अंग-प्रत्यंग के अभद्र व उच्छृंखल प्रदर्शन पर प्रतिबन्ध लगना चाहिए।

४—यह सम्मेलन महिलाओं से भी अपील करता है कि वे अपने स्वरूप, शक्ति व कर्त्तव्य को पहिचानें और समाज में अपने स्थान व अधिकारों के लिए संघर्ष करें।

प्रस्ताव संख्या—६

यह सम्मेलन देश-देशान्तर के आर्यों, आर्य समाजों, प्रान्तीय सभाओं एवं आर्य संस्थाओं को प्रेरणा करता है कि वे सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा निर्धारित आर्य समाज स्थापना शताब्दी के, जो १९७५ में बम्बई में होगी, कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए अभी से सक्रिय हो जायें और सभा को अपना नैतिक, आर्थिक तथा हर प्रकार का पूरा पूरा सहयोग दें। इस कार्यक्रम की मोटी रूप-रेखा इस प्रकार है :—

१—हिन्दी और अंग्रेजी में चारों वेदों के भाष्य का प्रकाशन।

२—महर्षि दयानन्द की अमर कृति सत्यार्थ प्रकाश का विविध भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं में प्रकाशन एवं पुनर्मुद्रण।

३—विश्व की भाषाओं में महर्षि की प्रामाणिक जीवनी का प्रकाशन।

४—विविध विषयों पर पुराने और उच्च कोटि के साहित्य का प्रकाशन।

५—विविध विश्वविद्यालयों में दयानन्द पीठ की स्थापना।

६—उच्चकोटि के प्रचारकों के प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण केन्द्र खोलना।

७—विशाल एवं सुसज्जित पुस्तकालयों के साथ उच्च-कोटि के अनुसंधान केन्द्रों की स्थापना।

८—संस्कृत भाषा तथा संस्कृत आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन व नित्य स्वाध्याय को प्रोत्साहन देना।

९—देशान्तर में वैदिक धर्म के प्रचार व प्रसार तथा संगठन को बढ़ावा देना।

१०—दयानन्द सेवाश्रमों के द्वारा सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की सहायता कर उन्हें समाज तथा राष्ट्र का सम्मानित अंग बनाना।

११—जन्म-जाति, धर्म, देश पर आधारित संकीर्ण मनोवृत्ति को समाप्त कर समूची मानव जाति को विश्वबन्धुत्व के सूत्र में बांधना।

इस कार्यक्रम की पूर्ति के लिए सभा ने १॥ करोड़ रुपये की अपील प्रसारित की है जिसमें प्रत्येक आर्य परिवार को प्रति सदस्य कम से कम एक रुपया देना चाहिए। यह सम्मेलन इस धनराशि को पूर्ण करने के लिए भी आर्यों का आवाहन करता है।

प्रस्ताव संख्या—७

यह सम्मेलन निश्चय करता है कि भारत तथा भारत से बाहर स्थित आर्य समाजों को निम्नलिखित कार्यों को विशेष बल देना चाहिए :—

१—समस्त आर्य समाजों की शक्ति को केन्द्रित करना।

२—ऐसे साधन उपलब्ध करना जिनसे आवश्यकता पड़ने पर समस्त समाज की संगठन-शक्ति का सुगमता से लाभ उठाया जा सके।

३—समाज के प्रेस को शक्तिशाली बनाना।

४—समाज के मंच को अधिक आदरणीय, गंभीर, उत्तरदायित्वपूर्ण एवं संगठित बनाना।

५—ग्रामवासियों, कृषकों, श्रमजीवियों, विद्यार्थियों एवं महिलाओं में विशेष प्रचार तथा कार्यक्रम की व्यवस्था करना।

६—जात-पात, छुआ-छूत, नस्ल, रंग, ऊंच-नीच के भेदभाव को मिटाने, मादक द्रव्यों के सेवनादि को दूर करने के लिए व्यवहारिक उपाय सोचकर

उन्हें क्रियात्मक रूप देना।

७—प्रत्येक आर्य में यह भावना जागृत करना कि आश्रम व्यवस्थानुसार धर्म-पूर्वक अपने परिवार और देश की आर्थिक व्यवस्था को उन्नत करना उसका कर्त्तव्य है।

८—वैदिक धर्म मनुष्य मात्र के लिए है। अतः जो व्यक्ति या समूह वैदिक धर्म या संस्कृति को अपनाना चाहें उनकी शिक्षा और दीक्षा के संबंध में उचित व्यवस्था करना तथा उनके साथ उदारता पूर्वक सामाजिक सद्व्यवहार के लिए परिस्थिति उत्पन्न करना जिससे उनको किसी कष्ट, असुविधा अथवा भेदभाव का अनुभव न हो।

९—समाज के नर-नारियों में ऐसी भावना उत्पन्न करना जिससे उनको वैदिक शिक्षा पर चलते हुए वैयक्तिक तथा पारिवारिक सुख और शान्ति का अधिक से अधिक लाभ हो सके। इस उद्देश्य से यह सम्मेलन प्रत्येक आर्य समाज से अनुरोध करता है कि वह समाज मन्दिरों में दैनिक संध्या, वेद-पाठ, हवन तथा सत्संग का आयोजन करे।

१०—वैदिक साहित्य की अभिवृद्धि और प्रचार तथा प्रसार का उचित प्रबन्ध करना।

११—स्थानीय लौकिक राजनीति को आध्यात्मिकता से प्रभावित करने के लिए सनातन वैदिक राजनीति के सिद्धान्तों का प्रचार करना।

१२—भारत से बाहर के भूखण्डों में उच्चकोटि का साहित्य और प्रचारक भेजकर आर्य समाज की प्रगति को उन्नतिशील बनाना, वहां आर्य गौरव स्थापित करना तथा नवीन आर्य समाजों की स्थापना द्वारा वैदिक धर्म के प्रचार-क्षेत्र को विस्तृत करना।

१३—नवयुवकों को अपनी ओर आकृष्ट करने तथा आर्य समाज की सदस्यता के योग्य बनाने के लिए समुचित उपायों को काम में लाना।

१४—आर्य समाज स्थापना शताब्दी तथा उसके कार्यक्रम को सफल बनाने में कोई प्रयत्न उठा न रखना।

१५—भारत से बाहर के देशों के मूल निवासियों में वैदिक धर्म एवं संस्कृति के प्रचार और प्रसार की गति को तीव्र करना तथा राजदूतावासों द्वारा निर्धारित वा निर्धारित होने वाले कार्यक्रमों को सात्विक रूप दिलाकर उनकी सफलता में क्रियात्मक योग देना।

१६—स्थान-स्थान पर अध्यात्म-केन्द्रों का आयोजन करना।

१७—जन्म-गत जाति-पांति के बन्धन को तोड़कर गुण-कर्म व स्वभाव के आधार पर विवाहों को प्रोत्साहन देना।

१८—देश-देशान्तर की समस्त प्रतिनिधि सभाओं से अनुरोध किया जाय कि वे अपने देशों की सरकारों से आग्रह करें कि वे आर्य समाज स्थापना शताब्दी के पवित्र अवसर पर महर्षि दयानन्द के जीवन पर उनकी जीवनी के मुख्य अंगों को लेकर स्मृति-सूचक डाक टिकटों का सैट निकालें।

जहां आर्य समाज व प्रतिनिधि सभाएं नहीं हैं वहां की सरकारों से सार्वदेशिक सभा स्वयं सम्पर्क स्थापित करके कार्य को पूरा करावे।

प्रस्ताव संख्या—८

यह सम्मेलन इस बात पर दुःख एवं आश्चर्य प्रकट करता है कि सं० राष्ट्र संघ की स्वीकृत भाषाओं में आर्य भाषा (हिन्दी) को स्थान प्राप्त नहीं है जबकि उसका प्रयोग करने वालों की संख्या ३५ करोड़ से भी अधिक है। इससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह है कि सं० राष्ट्रसंघ ने राजनैतिक दृष्टिकोण को सामने रखकर ऐसी भाषाओं को भी स्वीकृत प्रदान की हुई है जिनका प्रयोग करने वालों की संख्या आर्य भाषा हिन्दी का प्रयोग करने वालों की तुलना में नगण्य है।

इस सम्मेलन का यह दृढ़ मत है कि भाषा का प्रश्न एक मात्र सांस्कृतिक दृष्टि से ही देखा जाना चाहिए। यह सम्मेलन सं० राष्ट्रसंघ से अपील करता है कि वह आर्य भाषा हिन्दी को भी अपनी स्वीकृत भाषाओं में स्थान दे और आर्य भाषा के प्रति इस समय तक जो अनौचित्य हुआ है उसका शीघ्रातिशीघ्र परिमार्जन कर दे।

यह सम्मेलन भारत सरकार को भी प्रेरणा करता है कि वह अपने प्रभाव को कार्य में लाकर आर्य भाषा (हिन्दी) को संयुक्त राष्ट्रसंघ की भाषाओं में स्थान दिलाने का प्रयत्न करे।

Resolutions passed in the Arya Maha Sammelan of Mauritions

Resolution—1

This Sammelan offers its felicitations and tributes to overseas Aryan brethren who having been migrated from their native lands under trying conditions played prominent role in the colonizations of regions and Islands such as Mauritius, Guyana, Fiji, Trinidad, East Africa, South Africa, etc. and who being illiterate and ignorant of religious philosophies remained stuck to their Dharma, Culture and traditions even under heavy odds and contributed substantially to the prosperity and development of their nations.

This Sammelan resolves :—

1. A short history relating to the enterprises of Indians, living in various foreign countries be compiled and published by the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha so that future generations may be profited by it.
2. Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha should arrange to send competent preachers to those regions from time to time so as to keep alive their interest and faith in their Dharma and culture.
3. Every Arya Samaj must provide a library and a reading room for the study of Vedic literature.
4. Every Arya Samaj and Provincial Aryan League must make arrangements for the translation, publication and circulation of Vedic literature in regional languages.
5. Followers of Vedic Dharma are enjoined to amicably settle their differences among themselves and thus maintain accord among themselves.
6. They must use their mother tongue in their homes and celebrate festivals invariably.
7. That there are many Indians who have permanently settled outside India and among them is to be found love and admiration for their culture, religion and languages. Practically everywhere these Indians have through their own initiative, zeal and effort kept these traditional beliefs and practices alive although these have been tremendously influenced and affected by the changing conditions of time, space and environment.

Resolution—2

This Sammelan feels greatly perturbed over the incessant devilish play of disruptive elements and consequent world wide discord, heart burning and tension.

Mankind seems to be labouring under the delusion that poverty is giving rise to oppression, iniquity and class struggle and material prosperity will bring down heaven on earth. But it is apparent that material prosperity could not check the incidence of oppression, crimes and class struggle, nay, it is giving impetus, to them. It is the considered view of this Sammelan that materialism will not

succeed to make the world happy and create peaceful conditions.

Materialism while exciting the animal in man and lower instincts and generating sensuality and discontent is throwing mankind into the deep ditches of mental poverty which debars a man of happiness and peace. Contrary to it, mere spiritualism by making a man materially poor involves him in many troubles.

This Sammelan is of the firm view that synthesis between materialism and spiritualism is the only way to secure world peace and happiness.

Neither of the two is singly capable to deliver the good. Both of them can jointly touch the target. This is the unique gift of Vedic culture to the world. It is consoling that the western public having been fed up with and terrified by indulgence have come to realise this truth and is running towards India in search of peace.

This Sammelan urges upon all peace loving People,

A. To give up running after the mirage of materialism and creature comforts and try to make the world paradise by using things of flesh and the spirit synthetically.

B. This Sammelan directs all the Arya Samajes and the Aryas to lay great emphasis on the spiritual sermons from the pulpit of the Arya Samaj and spiritualise their individual life more and more by taking resort to 'Yog' and to the study of Vedic literature and also to participate more and more in the 'Yog Sadhna' camps which the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha has begun to organize.

Resolution—3

Owing to the working of non-Vedic or degenerate trends or bents of mind world condition has become deplorable, dissatisfaction, turmoil, discord, jealousy, tension. pain and sorrow prevailing every where. All the earnest efforts that are being put in to do away with mutual distrust, heart burning and rancour are not meeting with concrete success.

This conference having been alarmed at such a state of affairs feels called upon to make the following declaration in the light of Vedic ideology which the Arya Samaj has all along been propagating :—

1. The Arya Samaj firmly believes that the well-being of mankind rests on the acquisition of thorough knowledge of the salient doctrines of the true eternal and universal Vedic Dharma as well as translating them into action and also on a social order on the pattern advocated by the Vedas. As the Vedas are the fountain head of all religions and scriptures, it is essential to spread their message in the whole world so as to ensure peace and prosperity.
2. God is one and father of all. Peace can be maintained only through well directed exertion coupled with the grace of God. It is, therefore, incumbent on each and every body to assimilate these two essentials in his life.
3. God is the father and the Earth is the Mother of all. We are all His children belonging to one world family. The whole mankind is one and indivisible. Disruption of its oneness by raising artificial barriers of colour and creed, race and nationality, and barricading it with other narrow hedges generating violence, animosity and hatred, thereby endangering world peace is unholy and a crime against God and humanity. The Arya Samaj feels itself duty bound to propagate universal brother-hood.
4. True citizenship depends on the right and equitable conduct in individual and collec-

tive dealings, also on following the well defined maxims 'live and let others live' 'Do unto others as you desire others do unto you'.

5. Synthesis between the things of the flesh and the spirit leads to full fledged development of life. One sided development makes life miserable both to the individual and the society.

Resolution—4

This Sammelan deplores the deterioration of moral and divine values in man's life and considers it to be a great tragedy.

It calls upon all the religious minded persons to leave no stone unturned to restore the glory of Dharma and God by precept and practice.

Religion does not concern only with faith or irrational and indecent rituals. It has a close bearing on man's conduct. It is the chief bond of humanity. A life that will bear the inspection of men and God is the only certificate of true religion.

Vedic Dharma is a way of life to secure temporal and spiritual betterment. It is a temper that inspires one to do good to oneself and to others. It keeps hold both on the intellect and the heart. Intellect is in vain if it leads not to emotion and emotion is in vain if not enlightened by intellect and both are in vain if not guided by truth and leading to duty.

Vedic Dharma endorses this conception of religion and lays stress on the necessity of propagation of such a religion.

This Sammelan views with satisfaction that people have now come to realise the fatal and dangerous mistake that religion consists in the contempt of the world and its enjoyments. They seem to be prone towards true religion.

It is, therefore, incumbent on the part of the followers of Vedic Dharma to avail fully of this trend of events for installing Dharma on high pedestral and saving people from being led astray by unscrupulous and selfish people in the name of Dharma.

Resolution—5

This Sammelan puts on record its sense of anxiety and grief at the pitiable condition of our women folk in a number of countries where they are denied their rights and respectful status in the society consequent upon which moral upliftment of various nations is jeopardised and lower instincts have got upper hand.

This Sammelan is of the view that a sound foundation of a society is laid up in the womb and lap of a mother or at the feet of preceptors. Thus the upliftment or degeneration of a society depends chiefly on the good or bad plight of the mothers and the preceptors. According to Vedic ideology 'Devas reside where women are honoured.'

It is an irony that women folk are being led astray in the name of progress and their real and good relations are being estranged eroding the foundation of a good and healthy family life; with attendant evil consequences.

This Sammelan appeals to the top ranking leaders and the Governments of all the nations of the World :

1. To accord an honourable place to the women folk, to grant their legitimate rights and privileges, if they care for the full flowering and play of human values. Women must be accorded full voting rights and the right to be elected to any highest post of the nation.
2. Vulgar and indecent exposition and exhibition of their bodily limbs in movies must be banned.

महासम्मेलन के अवसर
पर स्वामी सत्यप्रकाश जी
ध्वजारोहण
कर रहे हैं

ध्वजारोहण के
समय सामूहिक
'ओ३म्' ध्वज गीत

देश-विदेश से आये सन्देशों को
पढ़कर सुनाते हुए आर्य सभा मौरिशस
के महामंत्री श्री टी० कालीचरण

दीपशिखा
प्रज्वलित
कर हिन्दी पुस्तक-
प्रदर्शनी का
उद्घाटन करते
हुए

श्री सत्यकाम बुलेल,
कृषिमंत्री मौरिशस

दक्षिण अफ्रीका की प्रतिनिधि महिलाएं पोर्ट लुई के हवाई अड्डे पर विमान से उतरने के पश्चात्

दक्षिण अफ्रीका से आए लगभग १०० प्रतिनिधियों के नेता श्री एस० छोटई और उनके साथी का पोर्टलुई में स्वागत

बम्बई से पोर्टलुई तक भारतीय यात्रियों को ले जाने और वापिस लाने वाला जलपोत 'अकबर'

मौरिशस में वेद सम्मेलन के
संयोजक श्री नरदेव वेदालंकार (दक्षिण अफ्रीका)।

सम्मेलन की अध्यक्षता
आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री ने की

युवक सम्मेलन के संयोजक श्री छोटूसिंह एडवोकेट।
सम्मेलन की अध्यक्षता श्री ओम्प्रकाश त्यागी ने की

महिला सम्मेलन की संयोजिका श्रीमती लखावती हरगोविन्द।
सम्मेलन की अध्यक्षता श्रीमती शकुन्तला गोयल ने की

कवि सम्मेलन के संयोजक
श्री मुनीश्वर चिन्तामणि।

सम्मेलन की अध्यक्षता
श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन' ने की

मौरिशस के गवर्नर जनरल
सर रहमान उस्मान
महासम्मेलन में भाषण दे रहे हैं।
इनके साथ वाली कुर्सी पर दाईं ओर बैठे हैं
मौरिशस के कार्यकर्त्ता प्रधान मंत्री
श्री अब्दुल रज्जाक मोहम्मद

मौरिशस के लार्ड मेयर
श्री गायतां जुबाल
महासम्मेलन को सम्बोधित करते हुए

शोभायात्रा की एक झांकी

3. This Sammelan appeals to mothers too to recognize their real image, strength and duties and struggle for their proper status and the rights.

Resolution—6

This Sammelan calls upon all the Arya Samajes, Provincial Pratinidhi Sabhas, Aryan Institutions and Aryas in India and Abroad to help the successful implementation of the programme which the Sarvadeshik Arya Pratinidhi Sabha has chalked out in connection with the Arya Samaj Foundation Centenary celebrations which will be held in 1975 and extend their full co-operation, moral and material to the Sabha. Salient features of the programme are as under :

1. Publication of the commentaries on the Vedas in Hindi and English.
2. Publication and reprinting of the Satyarth Prakash, the Magnum opus of Swami Dayanand Saraswati, in Indian and International languages.
3. Publication of an authentic biography of Swami Dayanand in World languages.
4. Publication of old and new literature of outstanding merit.
5. Founding of Dayanand Chairs in Various Universities.
6. Opening of training Centres for the training of preachers of high calibre.
7. Opening of good research centres with well equipped libraries.
8. To provide encouragement to Sanskrit language and to the study of Vedic literature.
9. To encourage propagation of Vedic Dharma and organizational work outside India.
10. To ameliorate the social and economic condition of the Backward classes through well equipped Dayanand Sevashrams and thus raise their social status.
11. To make efforts to eradicate the narrow-mindedness based on casteism, parochialism, nationalism and communalism and to tie the whole mankind with the bond of Universal brother-hood.

The Sabha, has, for the successful implementation of this programme issued an appeal for Rs. one and a half crores to which every Arya Household has to contribute at least one rupee per member.

This Sammelan calls upon the Aryas to help to raise this sum in no time.

Resolution—7

This Sammelan endorses the following programme and calls upon all the Arya Samajes in India and abroad to give effect to it :

1. To focuss the energy of all Arya Samajes.
2. To devise such measures as may easily be availed of fortaking advantage of the organisational strength of the Arya Samaj when occasion arises.
3. To make the press of the Arya Samaj powerful.
4. To keep the sanctity, solemnity and responsibility of the Arya Samaj platform inviolate.
5. To make special prachar arrangements among the village folk, agriculturists, labourers, students and the women folk.
6. To devise and put into effect practical steps for the eradication of discrimination of castes, touchable and untouchable, race and colour, high and low and for prohibition of Wine and other intoxicants.
7. To mould the mental attitude of Aryans as may enable them to derive greatest possible domestic peace and happiness while following Vedic teaching. To achieve it this Sammelan urges upon all Arya Samajes to make provision for daily Sandhya, Vedic Path,

Havan, and Congregation.

8. To bring home to every Arya that according to Varnashram system it is his duty to raise economic standard of his home and country by fair means.
9. Vedic Dharma is meant for the whole mankind. Therefore, it is incumbent on All Arya Samajes to make arrangements on the instruction and for creating conditions of good behaviour towards those who want to embrace Vedic Dharma or Culture individually or collectively.
10. To make arrangements for the propagation and dissemination of Vedic Dharma and Culture.
11. To propagate the principles and doctrines of Vedic politics to influence the secular politics with spirituality, or to spiritualize the politics.
12. To accelerate the peace and progress of Arya Samajes outside India by sending competent preachers and literature, to make Aryan glory vibrant and to widen the prachar area by establishing new units of Arya Samajes.
13. To devise and utilize all sorts of measures to attract the youths and to make them eligible for the membership of Arya Samaj.
14. No-stone should be left unturned to make Arya Samaj Foundation Centinary and its programme a success.
15. To accelerate the pace of work among the original nationals of various countries and to contribute to the suceess of the cultural programme which are arranged by Indian Embassies by giving them decent touch if needed.
16. To arrange for spiritual centres at various places.
17. To encourage Inter-caste marriages according to Vedic ideology.

Resolution—8

This Sammelan puts on record its sense of pain and astonishment that Arya Bhasha Hindi does not occupy a place in the recognised languages of the United Nations though more than 35 crores people make use of it.

This Sammelan is all the more pained and constrained to note that minor languages which are insignificant in comparison with Arya Bhasha Hindi are given recognition out of mere political considerations.

This Sammelan is of the firm view that language question should be treated as a cultural issue and appeals to the United Nations to accord recognition to Arya Bhasha as early as possible and thus make good for the inequity to which Arya Bhasha has so far been subjected.

The Sammelan urges upon the Government of India to use their good offices to get Arya Bhasha Hindi recognised as one of the recognized languages of the United Nations.

सप्तम रश्मि

यथेमां वाचं कल्याणी–

मावदानि जनेभ्यः ।

ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय

चार्याय च स्वाय चारणाय ॥

—यजुर्वेद २६।२

—जैसे मैंने सब मनुष्यों के लिए इस सर्वहितकारिणी कल्याणी वेद वाणी का उपदेश दिया है, वैसे ही तुम भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और नगरवासी तथा अरण्यवासी सभी को इसका उपदेश करो जिससे सभी दुःखों से छूटकर आनन्द को प्राप्त हों ।

भाषण-माला

मौरिशस के १२वें आर्य महासम्मेलन में

स्वागताध्यक्ष का भाषण

श्री मोहनलाल मोहित, ओ० बी० ई०

(दिनांक २४ अगस्त, सन् १९७३)

ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव ॥

पूज्य संन्यासीवृन्द ! सम्मेलनाध्यक्ष ! सभाध्यक्ष जी !
महामहिम गवर्नर जनरल सर रहमान उसमान जी !
प्रधान मन्त्री सर शिवसागर रामगुलाम जी !
आर्यबन्धुओ एवं बहनो !

मौरिशस लघु प्रदेश की इस राजधानी के एक छोर की संकुचित जगह में देश-देशान्तर से इतनी बड़ी संख्या में पधारे हुए आप सज्जनों का स्वागत करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। आप महानुभाव विश्व-कल्याण का महान् उद्देश्य अर्थात् मानव मात्र में मानवोचित मूल्यों की विकास-वृद्धि करने का लक्ष्य लेकर आये हैं। अतः हम बड़ी हार्दिकता के साथ आपका अभिनन्दन और स्वागत करते हैं। इस महासम्मेलन की विशालता और उसकी प्रबन्ध-व्यवस्था के उत्तरदायित्वों की कल्पनामात्र से मैं और हमारे संगी-साथियों के हृदय सहम गये तथा मस्तिष्क चक्कर खाने लगा। क्योंकि हमारी सीमित शक्ति, छोटी जगह, अनेक प्रकार के अभाव और तिस पर इतने बड़े उत्तरदायित्व के बोझ को सम्भालने में कठिनाई प्रतीत होती थी। परन्तु श्रद्धावान् सज्जन जब उत्साह से हाथ बंटाने लगे तो कार्य भार सुलझने लगा। हमारे नवागत आर्य बन्धु जो भारत जैसे महान् देश तथा दक्षिण अफ्रीका से बड़ी संख्या में आये हैं, उनके देश विशाल हैं। सुरीनाम, गायना, त्रिनिदाद तथा पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीका से मौरिशस बहुत छोटा है।

परिवार में सबसे छोटे शिशु को सब कोई प्यार करते हैं। शायद इसी सहज स्नेह से मौरिशस को प्यार किया जा रहा है। इस प्रसंग पर रामायण चतुःशती समारोह-सरणी का भी शुभ समय है। महाकवि तुलसीदास ने कहा है:—

बड़े स्नेह लघुन पर करहीं।
गिरि निज सिरन सदा तृण धरहीं ॥

—अर्थात् बड़े उदार सज्जनगण छोटों से स्नेह करते हैं, जैसे पर्वत निज सिर पर घास-पात धारण करते हैं। यह छोटा प्रदेश मौरिशस, सन्तोष की बात यह है कि सुन्दर तथा सुरम्य स्थल है। प्रकृति ने मनोहर पर्वतमाला, सघन-वन-उपवन और लघु नद-नदी, झील-झरनों से प्रदेश को सजाया है। प्रायः वर्ष भर समशीतोष्ण सुखद वातावरण की वसन्तबहार में जनमन आनन्द विभोर हो जाता है। इस प्राकृतिक सौंदर्य-सम्पन्न देश में आज से १५० वर्ष पूर्व जब हमारे पूर्वज शर्तबन्दी प्रथा में आये थे, उस समय अनेक असुविधायें थीं। प्रदेश प्रायः बियाबान था, जंगल झाड़ और कंटकाकीर्ण था। पराधीनता के कारण आर्थिक दीनता की धूपछाया में जीवन-चक्र चला करता था। वैसे संकट काल में भारतीयों ने कठोर परिश्रम करके बियाबान देश को उपजाऊ और स्वर्णिम नयनाभिराम बनाया।

इस लघु प्रदेश में १९वीं शती के प्रथम दशक में आर्य समाज की स्थापना हुई। आर्य समाज ने वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार किया। वैदिक धर्म शाश्वत सत्यों के साथ धर्म के रूप में मानव-मात्र को बिना रंग-रूप, जन्म, जाति तथा

भूगोल-भेद से रहित सर्व सुख साधना में प्रवृत्त कराने का सुलभ साधन है। ऐसे सार्वभौम धर्म की युग-महापुरुष महर्षि दयानन्द के अनुपम तप-त्याग से प्रेरणा प्राप्त कर आर्य समाज के क्रांतिकारी आन्दोलन ने इस प्रदेश में नव-जागरण-युग के रूप में जन्म लिया। आर्य समाज ने वेद-सूर्य की पावन प्रभा से अविद्यान्धकार को दूर कर जन-मन को जगाया और सद्शिक्षा देकर दुर्गुण और मानसिक दासता से मुक्त किया। बाल-विवाह, बहु-विवाह, शूद्र को शिक्षा से वंचित रखना, जन्मजाति-भेद से ऊंच-नीच मानना तथा छुआछूत आदि सामाजिक कुप्रथा को दूर कर भारतीय समाज को स्वस्थ और शक्तिशाली बनाने में आर्य समाज का योगदान सर्वोपरि है। आर्य समाज ने विद्या-प्रचार और सामाजिक सुधार के द्वारा जन मानस से गुलामी का भाव मिटाकर, स्वदेश भक्ति से देश के वफादार नागरिक बना कर, 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का पाठ पढ़ा कर, भ्रातृ-भाव से ईर्ष्या, द्वेष और घृणा को छुड़वा कर, एक दूसरे से ईमान-दारी और भाईचारे से जीने की कला सिखाई।

महर्षि दयानन्द बहुमुखी प्रतिभा और दिव्य शक्ति के धनी थे। बहनो और बन्धुओ! श्रेष्ठ और सुखी मानव-समाज की नींव सार्वभौम सिद्धान्तों के अनुकूल कलुषरहित चरित्र-निर्माण पर रखी जाती है। इसलिए देश काल की सीमाओं से ऊपर एक ऐसी न्याय-संगत जीवन शैली का निर्माण आवश्यक है, जिससे विश्व भर में नागरिकों को अपनी शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति के लिए अवसर मिल सके। विश्व-कल्याण के लिए—स्वीकृत लक्ष्य के अनुसार जीवन-क्षमता और अभिरुचि के अनुकूल कर्त्तव्य का पालन करना और नारी का समान समादर, तप-त्याग तथा योग्यता अनुसार यथायोग्य सामाजिक-सत्कार और सबसे उत्तम इस जीवन को सुखमय बनाने के लिए प्रशिक्षण अर्थात् आत्म संयम की साधना से तपे हुए चरित्र का निर्माण—आवश्यक है।

उन्होंने जो सन्देश मानव-समाज को दिया, उसमें संसार का उपकार करने का शुभ संकल्प है, केवल भारतीय वा किसी देश-विशेष का नहीं। महर्षि दयानन्द ने जीवन के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण का लक्ष्य लिया, केवल भारतीय जनता के उपकार के लिए नहीं, इसलिए कि युग की ऐसी मांग थी और महर्षि दयानन्द युग-महापुरुष थे। यही आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य महर्षि दयानन्द ने बताया। भारत के प्राचीन नागरिक ऐसी सरल शैली से जीवन बिताकर कभी सुख-लाभ पा चुके थे। महर्षि ने योगाभ्यास और ध्यान-साधना से अनुभव किया कि त्रिविध जीवन समस्याओं से ग्रस्त समाज का समुचित समाधान भी इसी जीवन शैली से सम्भव है। यह गौरवपूर्ण दैवसंयोग था कि सुखी मानव के निर्माण के लिए जो जीवनचर्या उन्हें उपयुक्त प्रतीत हुई वह वेद-सम्मत एवं प्राचीन भारतीय मुनियों द्वारा प्रमाणित थी। यदि यह जीवन-शैली प्रमाणित और परीक्षित न होती तो वे उसे कभी भी स्वीकार नहीं करते। उन्होंने इस जीवन-शैली को इसलिए स्वीकार नहीं किया कि वह भारत की थी और न इसलिए कि वह प्राचीन थी। उनके सामने इस जीवन प्रणाली की एक मात्र विशेषता थी—अतीत में युग-युगान्तर तक सद्व्यवहार कुशलता की सान पर इसका खरा उतरना।

महर्षि ने अनुभव किया कि जिस तरह भौतिक क्षेत्र में एक निश्चित परिणाम पाने के लिए अनिवार्य है कि सुनिश्चित भौतिक सिद्धान्तों का प्रतिपालन हो, उसी तरह मानव समाज में एक निश्चित परिणाम प्राप्त करने के लिए विशिष्ट चारित्रिक परिस्थिति का निर्माण करना अनिवार्य है। जैसे विज्ञान का काम है भौतिक सत्यों का आविष्कार करना, ठीक उसी प्रकार ज्ञान का उद्देश्य है चेतन जगत् के अटल सत्यों को खोजना।

इन्हीं अटल सत्यों का आविष्कार और प्रचार-प्रसार आर्य समाज के माध्यम से करवाना महर्षि दयानन्द का उद्देश्य था। इसी आधार पर उन्होंने प्राचीन भारतीय जीवन-पद्धति का अनुमोदन किया। साथ ही सत्य के आग्रह और अनुसन्धान को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए यह भी निर्देश दिया कि असत्य का परित्याग और सत्य का ग्रहण करने के लिए सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

अब मैं कुछ बातें इस सम्मेलन के सम्बन्ध में करने लगा हूं। इसकी भी कहानी बड़ी रोचक है। गत वर्ष १९ से २१ मई तक १९७२ में भारत के पवित्र भूखण्ड में अलवर की भूमि पर आर्य महासम्मेलन बड़ी सजधज के साथ सम्पन्न हुआ और उसकी अध्यक्षता हमारे देश के

प्रधान मन्त्री सर शिवसागर रामगुलाम जी ने की थी और उसका उद्घाटन इस सम्मेलन के प्रधान श्री सेठ प्रतापसिंह शूर जी वल्लभदास ने किया था। भगवान का यह योग और नियम कितना प्रबल है कि श्री सेठ प्रताप सिंह शूर जी वल्लभदास इस सम्मेलन के प्रधान होंगे और हमारे देश के प्रधान मन्त्री उसका उद्घाटन करेंगे। अलवर सम्मेलन की समाप्ति के अवसर पर ही हमने इस भूमि पर आर्य सम्मेलन के करने का निमन्त्रण आपकी शिरोमणि सभा को दिया था और शिरोमणि सभा ने इसको उदारतापूर्वक स्वीकार कर हमें अनुग्रहीत किया और यह सुअवसर आया कि हम आप सब के दर्शन कर रहे हैं। हमें इस सम्मेलन को केवल एक मेले का ही रूप नहीं देना है बल्कि इससे प्रेरणा लेनी है। इस सम्मेलन द्वारा प्रदेश के नागरिकों और विशेष कर वैदिक धर्म की एकता को अटूट रखने में प्रेरणा मिलेगी। इस देश के सभी आर्य समाजों, सभी वैदिक धर्मियों एवं सभी वर्गों के हिन्दुओं को इस महान् कार्य में एक होकर जुट जाना चाहिए। आर्य सामाजिक बन्धुओं और बहिनों को आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार और विस्तार में अपनी पूरी शक्ति को लगाये रखना चाहिए। हम यह भी चाहेंगे कि देश-देशान्तर के आर्य बंधु आर्यसमाज के संगठन को सुदृढ़ बनाये रखेंगे कि जिससे भगवान् दयानन्द की संदेश दिगदिगंत में गूंजे।

सार्वदेशिक सभा से हमारी प्रार्थना और अनुरोध है कि समस्त भूमण्डल पर महर्षि दयानन्द के अन्तिम इच्छा-पत्र में अंकित देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में जाकर वेद का प्रचार और प्रसार करने की भावना को मूर्त्त रूप दे। आप सभी इस बात को जानते हैं कि सन् १९७५ में आर्य समाज की स्थापना-शताब्दी मनायी जाएगी। यहां आये हुए सभी आर्य बन्धुओं से तथा उनके द्वारा न आये हुओं से भी उसे पूर्ण सफल बनाने में कटिबद्ध हो जाने और तन, मन, धन से पूर्ण सहयोग देने का मैं आग्रह करता हूं।

मैंने और स्वागत समिति के अधिकारियों सहयोगियों तथा बन्धुओं ने इस बात का पूर्ण प्रयत्न किया कि आपको सब प्रकार की सुख-सुविधा मिले। किन्तु अपनी मानव-दुर्बलता के कारण हमारे प्रबन्ध में जो न्यूनता रह गई है उसको आप क्षमा करेंगे। मैं पुनः आप सबका हृदय से स्वागत करता हूं।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

Our Destiny And Arya Samaj

Message Delivered by :
Shri Abdul Razak Mohammed,
Acting Prime Minister, Mauritius

I feel greatly honoured of the privilege of addressing you Arya Samajists who have come here from various countries, with which we have so cordial relations. This is indeed a great occasion for Mauritius. The Twelfth International Conference of the Arya Samaj being held here is without any doubt an event of significance, and we feel proud that the Mother Association of the Arya Samaj chose our country to be the venue of this event.

The Arya Samaj is an institution founded by Swami Dayanand for promoting goodwill among men. I know that his task was not an easy one. He met with many difficulties but armed with wisdom of a rare dimension, he made this institution a strong board from which beacon light would lead humanity towards better understanding, harmony and co-operation.

Mankind as a whole is in our present days, stricken by fear and frenzy of ignorance, poverty, disease. It is more frightened with the dreadfulness of mutual distrust, dissatisfaction, disequilibrium and disunity. The distinction based on caste, creed and colour has caused a fissure between man and man. Man has created problems which he finds difficult to solve. The only effective means to solve those problems is religion. We have to look to religion for guidance. The Arya Samaj is one institution in the Hindu community working with selflessness to show the way to Godliness and to ask everyone to become God loving.

I have quite a number of friends in the Arya Samaj. Because of the friendly relations with them, I have on many occasions, seen the good work which the Arya Samaj is doing in the social and religious fields over here. To bring humanity to the path of rectitude is not an easy task. But, the Arya Samaj could very well be proud of its achievements. As a Minister, I have on more than one occasion, visited the infirmary and Orphanage where the Arya Samaj cares for the less fortunate in life, It is indeed a very well maintained institution. What could be more noble than caring the poor and unfortunate. The Arya Samaj also runs and maintains a number of schools where Hindi

the language through which the wealth of Vedic moral values are accessible, is taught free of charge.

The last but not the least, I cannot forget to mention that the Arya Samaj has played an important part in shaping the destiny of our country. In the peaceful struggle for our independence, the Arya Samaj has always taken an active part. We are happy that Mauritians of all religions including representatives of the Vedic religion are sharing the task of Governmant and are trying together to build up a happy Mauritius, to make it a place where life will be pleasant, and where every one of its inhabitants will have equal opportunity to rise to prosperity.

Before resuming my seat, I would like to offer to all of you my personal good wishes and those of my Government, for a very successful conclusion of your Maha Sammelan, and for very fruitful deliberations which will bring a lot of good to every one of us. May the Arya Samaj live to its ideal to do good to humanity at large without any distinction. May the spirit of fraternity prevail with all of us. May God bless you all. Thank you !

Dynamic Force In Society

Inauguration speech by His Excellency :
Sir Rahman Usman,
Governor General,
Mauritius, on 24-8-73

It gives me a very great pleasure to be present this evening at the inauguration of the Twelfth International Aryan Conference which is being held to honour the memory of a great spiritual leader, Swami Dayanand Sarsawati.

Mauritius indeed is honoured to have provided the venue for such an important gathering and I should like to address a warm welcome to all the delegates who have come to the Conference from India and Africa and from other far off countries. The work of the Arya Samaj movement in Mauritius is now part of our local history. Its most significant achievment has been in the social and educational fields and there can be no doubt that we are indebted to it for the very considerable advance that has been made in so many fields of our national life.

The establishment of the Aryan Vedic School by the early founders of the movement is indeed a pioneering effort and on the roll of its scholars is inscribed the name of many distinguished Mauritians who have contributed to the progress and development of our island home,

Another praise-worthy development which redounds to the credit of the leaders of this great movement has been the creation of the Shradanand Ashram Infirmary and this welfare organisation has done much to alleviate the suffering of a large number of men and women who were in need of care and protection. The establishment of the D.A.V. College has also provided secondary education to many needy students and I am glad to know that, thanks to the generous support it has received from many quarters, it has attracted the attention of scholars outside our own shores.

Others, no doubt, will speak at greater length on the ideals that have inspired the Arya Samaj movement over the years. But I think that it is universally recognised by all schools of thought that the fundamental teaching of its great founder, Swami Dayanand Saraswati, was to snuff out any distinction between men and men and to strive for equality and justice in society. His teachings proved to be a dynamic force in Indian Society and other leaders arose to take up his work which was remarkable for its appeal to the common man. The Swami's testament, the 'Satyarth Prakash', in which he has expounded all his philosophical doctrines has become one of the great classics of modern times.

The Swami has deservedly been acclaimed by leading scholars like Max Muller and Romain Rolland as a great spiritual leader and both have stressed the fact that the supreme endeavour of Swami Dayanand was to search for what unites all men. It is indeed very appropriate that the centenary of the Arya Samaj should be celebrated in 1975 with the enthusiasm and fervour befitting an event of such magnitude. I have no doubt that the celebrations will be attended by a large number of delegates from all over the world.

I should like to offer my warm congratulations to all the organisers of the Twelfth International Aryan Conference and I wish the various societies that are associated with it every success in their work of love and universal brotherhood,

Ganges of Indian Culture

Message by His Exlency
Mr. Krishna Dayal Sharma
High Commissioner of India,
on 24th August, 1973

I am glad that the Arya sabha and Arya Ved Prachirini Sabha have been able to organise the 12th Aryan Conference in Mauritius. This place has been called Dayanand Nagar (or Dayanand town) after the name of Swami Dayanand, the founder of Arya Samaj movement. I would like to congratulate the conveners of this Conference for working so hard to organise a conference of this nature in such

an impressive fashion.

Indian culture is very old indeed, and right from the Vedic age to this date the 'Ganges' of Indian culture has been flowing smoothly in many directions. This is why the sages, saints and poets have called this culture the "Grand Human Sea". The people of Indian origin have migrated and settled down in many countries far and near, and have kept the Indian culture alive in spite of the many strains and stresses, trials and turbulations they have had to face during the past.

People of Indian origin from many countries have come to participate in this conference today. I am glad to be able to say that the Indians who came to this island more than a hundred years ago have kept their cultural values sacred and sacrosanct. On the material plane, I am happy to see that this young nation of Mauritius is proceeding steadily and solidly on the path of progress and prosperity. Mauritius too, like India, is a conglomerate of various cultures and creeds.

Many delegates from my own country are participating in this conference, and hundreds of people from all walks of life have also come here on this occasion. The fact that India occupies a very special place in the hearts of Mauritians can hardly be overemphasised. And the people of India are proud of this special abiding friendship.

The delegates from India, specially those who have not had an opportunity to visit this island before, will be glad to see the impressive social and economic progress Mauritius has made within the brief period of five years since its independence. It is a gratifying feature that nature has been very kind to this "country of rainbows". Like in India, the architects of nation-building in this country have had, and continue to, face problems similar to those facing our country. Nevertheless, the people of this country, under its enlightened leadership, have proved their determination to work hard and face obstacles with courage and determination and the remarkable progress achieved by Mauritius is eloquent evidence of the intrinsic qualities of its people. I have had the good fortune of witnessing this fast rate of development during the two years that I have been in this country.

The confluence of various cultures and creeds in Mauritius, again, is a phenomenon similar to that of India. Indian culture believes in conciliation, equality and unity. Thus, the happiest and most flourishing human beings are those who stand united, their diverse cultures or beliefs notwithstanding. Indian culture also believes that religion and culture are the basic cementing elements which give immortality to the soul of an individual.

Before I conclude, I once again thank the organisers of this Convention and hope that Mauritius will continue to tread the steady path of progress and development, for the chariot of progress knows no rest.

भारत के उच्चायुक्त, महामहिम, श्री कृष्णदयाल शर्मा का सन्देश

मौरिशस में सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन के उद्घाटन के पवित्र अवसर पर इस विराट् आयोजन के लिए आपको हार्दिक बधाई देता हूं।

इस वर्ष बारहवें महासम्मेलन को आर्य महासभा और आर्य रविवेद प्रचारिणी सभा ने मौरिशस में आमंत्रित किया है। स्वामी दयानन्द के नाम पर इस पंडाल का नाम दयानन्दनगर रखा गया है। इसके आयोजकों ने दिन रात एक कर इस समारोह के लिए कठोर साधना की है जिसकी मैं भूरि भूरि प्रशंसा करता हूं।

भारतीय संस्कृति बहुत प्राचीन है और वेदों से लेकर आज तक भारतीय संस्कृति की गंगा अनेक धाराओं में अक्षुण्ण बह रही है। इसी कारण ऋषियों, सन्तों और महाकवियों ने इस संस्कृति को 'महा-मानव-समुद्र' पुकारा है।

इस संस्कृति की सन्तान भारतीय दूर-दूर देशों में जाकर बसे हैं और हजारों विपत्तियों के बीच भी उन लोगों ने अपनी संस्कृति और भाषा को जीवित और जाग्रत रखा है। इस महासम्लेन में अनेक ऐसे देशों से भारतीय संतानें आई हैं। मौरिशस में भी भारतीय आये और बस गये। उन्होंने भारतीय संस्कृति को प्राण से भी अधिक मूल्यवान मानकर उसे जीवित रखा है। मौरिशस का यह स्वाधीन और विकास के पथ पर तेजी से आगे बढ़ता हुआ राष्ट्र सुखी और सम्पन्न है जिसमें भारत की तरह ही अनेक जातियों और संस्कृतियों का समुद्र-संगम है।

इस सम्मेलन में मेरे देश भारत से भी अनेक प्रतिष्ठित प्रतिनिधि भाग ले रहे हैं। भारत से सैंकड़ों नागरिक इस समारोह में भाग लेने आये हैं। मौरिशस-वासियों के हृदय में भारत के लिए प्रेम, स्नेह और मित्रता का अगाध समुद्र लहराता है। भारत भी मौरिशस की मित्रता पर गर्व करता है।

भारत से जो प्रतिनिधि आये हैं उन्हें यह जानकर बहुत प्रसन्नता होगी कि मौरिशस ने स्वतन्त्रता मिलने के बाद केवल पाँच वर्षों में ही बहुत अधिक आर्थिक और सामाजिक प्रगति की है। एक तो स्वयं प्रकृति मौरिशस के ऊपर बहुत उदार है और इन्द्रधनुषों वाले इस देश में थोड़ी-थोड़ी दूर पर प्रकृति का श्रृंगार बदल जाता है। भारत की तरह ही मौरिशस के राष्ट्र-निर्माताओं के सामने हजारों समस्यायें हैं मगर यहाँ की सरकार और जनता ने धैर्य, साहस और मेहनत से उनका मुकाबला किया है और इतने कम समय में अपनी जनता के सुख और सुविधा, शिक्षा, आर्थिक विकास कृषि और सभी क्षेत्रों में तरक्की के लिए सराहनीय सफलता पायी है। मौरिशस विकासशील राष्ट्र है और भारत की ही तरह यहाँ के भी राष्ट्र-निर्माता यहाँ राष्ट्र निर्माण में लगे हुए हैं। जिस तेजी से मौरिशस हर क्षेत्र में विकास कर रहा है, उसे मैंने अपने थोड़े ही निवास-काल में नजदीक से देखा है और मैं इसकी हृदय से प्रशंसा करता हूं।

मौरिशस में संस्कृतियों और जातियों का संगम वैसा ही है जैसा भारत में है, यह मैंने पहले भी कहा है। भारतीय संस्कृति समन्वय, समता और एकता में विश्वास करती है। इस संस्कृति ने अपनी सन्तानों को सदा यही प्रेरणा दी है। जो राष्ट्र एकत्र, संगठित और पानी और दूध की तरह आपस में मिले होते हैं, वे ही सुखी और सम्पन्न रहते हैं, यही शिक्षा इस संस्कृति ने दी है। भारतीय संस्कृति का कहना है कि धर्म और संस्कृति तो मनुष्य की आत्मा को देवत्व, अमरत्व और शक्ति देते हैं जिससे मनुष्य सांसारिक प्रगति के लिए मिल जुल कर उत्साह से आगे बढ़ता जाता है।

इन्हीं शब्दों के साथ मैं आप लोगों को और इस समारोह के संयोजकों को एक बार फिर बधाई देता हूं और यह कामना करता हूं कि मौरिशस दिन-दिन प्रगति और विकास के पथ पर आगे बढ़ता रहे क्योंकि विकास का रथ कभी भी नहीं रुकता।

जय हिन्द—जय मौरिशस

अध्यक्षीय भाषण

श्रीप्रतापसिंह शूर जी वल्लभदास

बहिनो और भाइयो !

सर्वप्रथम मैं सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन के इस १२वें अधिवेशन की, जो आर्यसमाज के इतिहास में पहली बार भारत से बाहर हो रहा है, अध्यक्षता करने का सम्मान प्रदान करने एवं महान् उत्तर दायित्व मेरे निर्बल कन्धों पर डालने के लिये भूमण्डल की आर्य जनता के प्रति आर्यों की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा (महर्षि दयनन्द भवन, नई दिल्ली) के माध्यम से आभार प्रकट करता हूं।

मैं आर्य सभा मौरिशस और इस सुन्दर द्वीप के आर्य बन्धुओं का भी कृतज्ञ हूं जिन्होंने मुझे यह अलभ्य अवसर प्रदान किया है जो आर्य समाज के प्रति उनकी निष्ठा, उसकी प्रगतियों और उसके क्षेत्र के विस्तार के लिए उनके उत्साह का प्रतीक है।

सन् १९६८ में जब मैं मौरिशस सरकार के निमन्त्रण पर मौरिशस स्वातन्त्रय-समारोह में भाग लेने आया था तब मैंने अपने भाषण में कहा था कि मैं अपने साथ भारत-वासियों की जहाज भरी शुभेच्छाएं लाकर अर्पित कर रहा हूं। आज इतिहास के इस स्वर्णिम पृष्ठ की पुनरावृत्ति का योग आया है। आज मैं जहाज भरकर भारत के आर्य बन्धुओं को आपके सुन्दर देश में इस सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए लाया हूं जो प्रत्यक्ष रूप में शुभेच्छाएं व्यक्त कर रहे हैं।

जीवन का चरम लक्ष्य—मोक्ष

वैदिक आदर्श के अनुसार मानव-निर्माण की समस्त योजना आस्तिक भावना, धर्म और ईश्वरीय नियमों के अनुकूल सत्य एवं न्यायाचरण पर अवलम्बित है जिससे कि मानव मोक्ष (बन्धनों से मुक्ति) की प्राप्ति करने में समर्थ हो सके जो कि मानव-जीवन का चरम लक्ष्य है। इस तथ्य का स्पष्टीकरण करते हुए आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने कहा है कि :—

परमेश्वर की आज्ञा पालने, अधर्म, अविद्या, कुसंग, कुसंस्कार, बुरे व्यसनों से अलग रहने और सत्य भाषण करने, परोपकार, विद्या, पक्षपात-रहित न्याय, धर्म की वृद्धि करने, पूर्वोक्त प्रकार से परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना अर्थात् योगाभ्यास करने, विद्या पढ़ने-पढ़ाने और धर्म से पुरुषार्थ कर ज्ञान की उन्नति करने, सबसे उत्तम साधनों को करने और जो कुछ करे वह सब पक्षपात रहित न्याय धर्मानुसार ही करे—इत्यादि साधनों से मुक्ति और इसके विपरीत ईश्वराज्ञा भंग करने आदि से बन्ध है।"

(सत्यार्थप्रकाश नवम समु०)

मानव-समाज किस प्रकार सुख और शान्ति का उपभोग कर सकता है, महान् स्वामी स्वमन्तव्यामन्तव्य में इसका उपाय इस प्रकार बताते हैं :—

"मेरा कोई नवीन कल्पना वा मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है किन्तु जो सत्य है उसको मानना मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना और छुड़वाना मुझको अभीष्ट है। जो मतमतान्तर के परस्पर विरुद्ध झगड़े हैं उनको मैं पसन्द नहीं करता क्योंकि इन्हीं मतवालों ने अपने मतों का प्रचार करके मनुष्यों को फंसाकर परस्पर शत्रु बना दिया है। इस बात को काट कर, सर्व सत्य का प्रचार कर सबको ऐक्यमत में करा, द्वेष छुड़ा, परस्पर में दृढ़ प्रीति युक्त कराके सबको सुख-लाभ पहुंचाने के लिए मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है।"

सर्वशक्तिमान् परमात्मा की कृपा, सहाय और आप्त जनों की सहानुभूति से यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे जिससे सब लोग सहज से धर्मार्थ, काम मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें, यही मेरा मुख्य प्रयोजन है।"

यह बड़े दुःख की बात है कि जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य से विमुख होकर मानव ऐन्द्रिय सुख में लिप्त हो गया है और आत्मा के स्थान में शरीर से सम्बद्ध वस्तुओं में सुख और आनन्द की प्राप्ति का व्यर्थ प्रयास कर रहा है जिसके कारण उसका स्वरूप बड़ा भद्दा और भयानक बन गया है।

वह परमात्मा और आत्मा का उपासक बनने के स्थान में भौतिक विज्ञान एवं धन का प्रबल उपासक बनकर अन्धकार में भटक रहा है और विश्व में अनैक्य, अशान्ति और विनाश की विभीषिकाओं को जन्म दे रहा है।

विज्ञान अन्धकार में भटक रहा है

आज हम विज्ञान के युग में रह रहे हैं। आधुनिक मानव ने न केवल समुद्रों को, पर्वतों की चोटियों को, उपत्यकाओं को और बीहड़ वनों को ही पार किया, अपितु वह आकाशीय सीमाओं को भी लांघ गया है। विकासमान समाज विज्ञान की उपयोगिता और उसके प्रसादों की अवहेलना नहीं कर सकता। वह सदैव भौतिक विज्ञान के उपकरणों के प्रति उत्सुकता प्रकट करता रहेगा जिनके बिना उसका जीवित रहना शक्य न होगा।

परन्तु उन्नत विज्ञान अपने साथ भयकी एक भयावह विभीषिका ला रहा है। वह भय इसके विध्वंसकारी प्रयोग से सम्बद्ध है। साइन्स के उपकरणों से युक्त मानव सर्वोच्चता की होड़ में इनका प्रयोग और मानव जाति का विनाश समुपस्थित कर सकता है। इस विपत्ति के बचाव का उपाय यही है कि विज्ञान अपनी सीमाओं के भीतर रहे। यह हमें उपकरण देता है, परन्तु इनके प्रयोग की, सोच-विचार की शक्ति प्रदान नहीं करता। यह हमें भौतिक साधन तो देता है परन्तु आध्यात्मिक विशेषताएं नहीं देता। यह हमें हर प्रकार के आविष्कार प्रदान करता है परन्तु नैतिक मर्यादाएं प्रदान नहीं करता। ये मर्यादाएं तो एक मात्र धर्म से ही उपलब्ध होती और हो सकती हैं जो एक प्रकार का नियन्त्रण वा संयम है जिससे मानव में भौतिक और आध्यात्मिक गुणावगुण और ग्राह्यता का ज्ञान होता है एवं लौकिक और पारलौकिक मामलों में उनको क्रियान्वित किए जाने की योग्यता और क्षमता प्राप्त होती है। यही वैदिक धर्म है जो साइन्स और धर्म का, अध्यात्म एवं भौतिक का, लौकिक एवं पारलौकिक प्रवृत्तियों का समन्वयात्मक उपयोग एवं उपभोग करना सिखाता है।

धर्म की अन्तर्हित भावना

धर्म की अन्तर्हित भावना का साम्प्रदायिक भावनाओं से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। यह व्यक्तियों के और मानव में निहित दिव्यता के पूर्ण विकास का साधन है। इस प्रकार से विकसित व्यक्तियों का एकमात्र एक धर्म होता है जिसकी पुष्टि विलियम पैन जैसे अंग्रेजी लेखक ने इन शब्दों में की है :—

"विश्व के समस्त विनम्र, दयालु, न्यायशील, सत्यवादी, ईश्वर-भक्त और परोपकारी जनों का एक ही धर्म होता है और जब मृत्यु पर्दे का अनावरण कर देगी तब वे एक दूसरे को जानेंगे, यद्यपि विविध प्रकार की वर्दियों के धारण करने से वे परस्पर में अपरिचित से बने हुए होते हैं।"

विश्व को आर्य बनाना "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" महर्षि दयानन्द का मुख्यतम लक्ष्य था और यही लक्ष्य आर्य समाज का रहा है।

आर्यसमाज का प्रमुख स्वरूप

आर्यसमाज का सर्वोपरि लक्ष्य ऐसे धर्म का प्रसार और प्रचार करना है जो यद्यपि मान्यताओं, तत्वों और सिद्धान्तों में पुराना दीख पड़ता है तथापि वह युग की भावना के अनुरूप है। यह जटिलताओं से रहित और विशुद्ध एकेश्वरवादी है। अन्धविश्वासपूर्ण क्रियाकलापों एवं अनुष्ठानों से इसका कोई सरोकार नहीं है। रहस्यवाद और चमत्कारों (मौजिजों) में निष्ठा रक्खे जाने के यह विरुद्ध है। यह मानव जाति के समस्त प्राणियों की समानता और भ्रातृत्व की भावना का प्रचार करता है। यह व्यक्तियों के शारीरिक, बौद्धिक सामाजिक और नैतिक

उत्थान की अधिक से अधिक, जितनी सम्भव हो सकती है, अवस्थाएं उत्पन्न करता है। वर्तमान बौद्धिक युग के नास्तिक एवं भौतिकवादी तर्कों का यह वेदों के आस्तिकता से मंडित तर्कों के द्वारा खण्डन करता है। यह अपने अनुयायियों में धर्म और आस्तिकता पर अवलम्बित नैतिकता एवं धर्माचरण की मान्यताएं एवं भावनाएं भरता है और सबसे बढ़कर १९वीं और २०वीं शती के व्यस्त जीवन एवं प्राचीन काल के शान्तिपूर्ण भक्तिभावना-पूर्ण धार्मिक अनुष्ठानों के मध्य पुल का काम करता है अर्थात् उनमें संगति बिठाता है। आर्यसमाज प्रत्येक वस्तु को सदाचार और पवित्रता की कसौटी पर कसता है और चाहता है कि मानव के समस्त कर्म परमात्मा के नियमों के अनुकूल हों।

आर्यसमाज आध्यात्मिक मूल्यों, शान्तिवाद, शाकाहार और चक्रवर्ती राज्य पर आधारित समाज-निर्माण का प्रतिपादन करता है।

मानव समाज के प्रति की गई उसकी सेवाएं सुविख्यात हैं और इस भाषण में विस्तारपूर्वक उन पर प्रकाश डालने की आवश्यकता नहीं है। इसने मानव समाज को उसके ज्वलन्त एवं गौरवपूर्ण भूतकाल से परिचित कराके, वेदों के द्वार सभी स्त्री।पुरुषों के लिए खोलकर जो अनेक व्यक्तियों के लिए अरसे तक बन्द रहे थे, धार्मिक और सामाजिक सुधार करके, प्राचीन गुरुओं की पद्धति पर आधारित शिक्षा-प्रणाली का सूत्रपात करके, परिपक्व आयु के विवाहों अन्तर्जातीय एवं विधवा-विवाहों का प्रचार तथा वृद्ध, विवाह, अनमेल विवाह, बाल विवाह आदि का खण्डन करके, भले व्यक्तियों के रहने के योग्य बनाया है। इसने एक स्वस्थ विचारधारा प्रदान करके मानव के दृष्टिकोण को नया रूप दिया और मानसिक क्षितिज को चौड़ा किया है। इसने मानव को सुधार की परिभाषा में सोचने, बुद्धि-संगत धार्मिक जीवन व्यतीत करने, विश्व में नैतिक नियम की प्रक्रिया प्रतिपादित करने एवं धर्म और ईश्वर की महिमा प्रमाणित करने में मूल्यवान योग दिया है।

अस्पृश्यता और जन्मजात जांत-पांत का उन्मूलन एवं नारी जाति की दशा के सुधार के लिए आर्य समाज के प्रयत्नों का विश्वव्यापी आदर एवं स्वागत हुआ है।

आर्यसमाज का संगठन विशुद्ध प्रजातन्त्रीय है जिसके द्वार प्रत्येक व्यक्ति के लिए खुले हुए हैं। इसके प्रबन्ध में सांसारिक लोगों का बड़ा हाथ रहा है। आर्य समाज के संगठन की सर्वत्र प्रशंसा हुई और होती रहती है। लगभग ४००० आर्य समाजें भारत और भारत से बाहर कार्य कर रहे हैं जो प्रांतीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं के माध्यम से सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के साथ सम्बद्ध हैं। हजारों संस्थाएं तथा स्कूल, कालिज, गुरुकुल, पाठशालाएं, अनाथालय, विधवाश्रम, वनिताश्रम, चिकित्सालय, आदि-आदि जन-सेवा का कार्य कर रहे हैं जिनका वार्षिक बजट करोड़ों रुपयों का होता है। आर्य समाज के सदस्यों, भक्तों प्रशंसकों एवं पृष्ठपोषकों की संख्या लाखों में है।

आर्य के लिए धर्म का महत्व

आर्यसमाजस्थ व्यक्ति के लिए धर्म एक मात्र वैयक्तिक मामला नहीं होता। हम एक महान् समष्टि के अंग होते हैं। अपने धार्मिक कर्त्तव्यों के अनुष्ठान में समष्टि में हमारा स्थान क्या है—इसका निरूपण करना और अपने इस स्थान को सदैव दृष्टि में रखना होता है। आर्य समाज के नियमों में वर्णित धर्म ऐसा तथ्य है जो व्यष्टि और समष्टि के मध्य सामंजस्य बनाये रखता है। हम अलग-थगल पड़े हुए प्राणी नहीं हैं जिन्हें कोई बाह्य शक्ति मनमाने ढंग से एक साथ रख देती है। हम नैसर्गिक एवं अविच्छिन्न सम्बन्धों के सूत्रों से बंधे हुए होते हैं और दूसरों के हितों के बिना हमारे वैयक्तिक हित की न तो कल्पना की जा सकती है और न उसका सम्पादन ही सम्भव हो सकता है।

वैदिक धर्म समन्वयात्मक है

आधुनिक युग में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ही पहले और अकेले महानुभाव थे जिन्होंने लौकिक और अलौकिक, आदर्शवाद और यथार्थवाद, धर्म और विज्ञान, भौतिकवाद एवं अध्यात्मवाद, सापेक्षवाद और निरंकुशवाद, व्यष्टि और समष्टिवाद, ईमान और तर्क, राष्ट्रवाद और अन्तर्राष्ट्रीयवाद के मध्य समन्वयकारी राजमार्ग बनाने का प्रयत्न किया था। धर्म का अर्थ है सदाचरण। धर्म

विशिष्ट जीवन यापन का ढंग है। मानव समाज को आपस में जोड़ने वाली यही कड़ी होती है।

स्वामी दयानन्द नवयुग-निर्माता थे

आर्यसमाज के यशस्वी प्रवर्त्तक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती एक नये युग के निर्माता थे जिन्होंने लोगों में धार्मिक एकता लाने और लोगों को अज्ञान एवं धर्म के नाम पर प्रचलित अन्धविश्वास-पूर्ण क्रिया-कलापों एवं अनुष्ठानों से मुक्त कराने का प्रयास किया था।

उन्होंने धार्मिक विचारधारा में क्रान्ति उत्पन्न करके उसे बुद्धिगम्य स्रोतों की ओर प्रवाहित किया। इतना ही नहीं, उन्होंने विविध धार्मिक सम्प्रदायों के प्रतिनिधियों एवं अनुयायियों को अपने उन विश्वासों, सिद्धांतों ओर अनुष्ठानों में परिवर्तन करने के लिये विवश किया जो बुद्धिवाद की कसौटी पर न खरे उतरते थे और न उतर सकते हैं और वैज्ञानिक समीक्षा के समक्ष खड़े नहीं रह सकते।

स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं आर्य समाज की प्रशंसा में प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। इस पर विस्तार-पूर्वक प्रकाश डाले जाने की आवश्यकता नहीं है। फिर भी महान् तत्व-वेत्ताओं और इतिहासकारों की श्रद्धाञ्जलि के कतिपय संदर्भों को उद्धृत करने के लोभ का मैं संवरण नहीं कर सकता हूं।

सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्री यदुनाथ सरकार का कहना है :

"स्वामी दयानन्द सच्चे राजनेता थे जिन्होंने उस शक्ति को उन्मुक्त करके कार्यरत किया जो आने वाली पीढ़ी के विचारों और जीवन को प्रभावित करती हुई चली जायेगी। जब भारत के उत्थान के सच्चे इतिहास के लेखन का कार्य हाथ में लिया जायेगा तो उसमें सर्वोच्च स्थान स्वामी दयानन्द सरस्वती को दिया जायेगा। उन्होंने लोगों के हृदय को धार्मिक क्षय से बचाया। उन्होंने उन हृदयों को बाह्य जगत् में क्रियारत शाश्वत उन्नति की भावना के साथ जोड़ा। उन्होंने यह सिद्ध कर दिखाया कि आर्यावर्त के प्राचीन ऋषियों द्वारा छोड़ी हुई सम्पदा में जो कुछ सर्वोत्तम और सत्यतम है उस पर समूची मानव जाति का अधिकार है और वह किसी विशिष्ट वर्ग, वर्ण वा पवित्र भूमि तक सीमित नहीं है।

स्वामी दयानन्द आधुनिक भारत के सर्वप्रथम महान् निर्माता थे। उनकी दृष्टि स्वच्छ थी और राष्ट्र-निर्माताओं को साधारणतः प्राप्त होने वाली दृष्टि से अधिक उदार और विशाल थीं।

जहां-जहां आर्यसमाज वास्तविकता का रूप धारण किये हुए है वहां-वहां जनता और विशिष्ट वर्गों का आश्चर्यजनक उत्थान हुआ है। आर्यसमाज की गतिशीलता, शिक्षा, दुखियों एवं पीड़ितों की सहायता, समाजसुधार, शुद्धि एवं उच्च कोटि के आध्यात्मिक साथ ही प्रचारात्मक साहित्य के सृजन में अप्रतिहत रूप से प्रवाहित रही है। यद्यपि आर्यसमाज संख्या की दृष्टि से छोटा है, तथापि जनता के, मुख्यतः नवभारत के, लोगों के बौद्धिक एवं नैतिक जीवन के प्रति उसका योगदान आश्चर्यजनक रहा है।"

"स्वामी दयानन्द ने आध्यात्मिक को क्रियात्मक रूप प्रदान किया।" इन शब्दों में श्रीयुत अरविन्द जी ने महान् स्वामी के जीवन के मिशन को सार रूप में प्रस्तुत किया है।

रोमा रोलां के शब्दों में : "दयानन्द सरस्वती उच्चतम कोटि की हस्ती थे। सिंह समान निर्भीक प्रकृति वाला यह महापुरुष उन व्यक्तियों में से एक था जिन्हें भारत का मूल्यांकन करते समय यूरोप भुलाने की चेष्टा करता हुआ भी न भुला सकेगा क्योंकि ऐसा करना उस (यूरोप) के लिए मंहगा सिद्ध होगा। इस महान् पुरुष में विचार, कर्म और नेतृत्व की प्रतिभा का अनुपम संमिश्रण विद्यमान था।

दयानन्द ने भारत के निष्प्राण शरीर में अपना अदम्य उत्साह, अपना दृढ़ निश्चयात्मक संकल्प और सिंह जैसा रक्त भरकर उसे सजीव किया। उसके शब्द वीरोचित शक्ति के साथ गूंजे।

दयानन्द को अस्पृश्यों की विद्यमानता का घृणित अन्याय सर्वथा असह्य था। उनके अपसृत अधिकारों का जितनी उग्रता से दयानन्द ने समर्थन किया उतनी उग्रता से अन्य किसी ने नहीं किया। वे लोग पूर्ण समानता के आधार पर आर्यसमाज में प्रविष्ट किए जाते हैं क्योंकि आर्यजन कोई जाति नहीं है।

वस्तुतः भारतीय राष्ट्रीय चेतना के पुनर्जन्म और जागरण को, जो इस समय देश में अपने पूर्ण यौवन में दृष्टिगोचर हो रही है, सबसे प्रबल प्रेरणा दयानन्द से प्राप्त हुई थी। पुनर्निर्माण और राष्ट्रीय संगठन के प्रबलतम मसीहाओं में से वह एक था। मैं समझता हूं कि अकेले उसी ने ज्योति को प्रज्वलित रक्खा है।"

लन्दन के प्रो० सिडनी वैव एल० एल० डी० ने आर्य समाज की महत्ता पर इस प्रकार प्रकाश डाला है:—

"निस्सन्देह आर्य समाज एक धार्मिक उबाल है जो कट्टर हिन्दू धर्म की कुरीतियों एवं अनुष्ठानों में और उसकी आध्यात्मिकता में (वैदिक सिद्धान्तानुसार) सुधार करके उसे जीवन की पवित्रता, सादगी तथा बौद्धिक जीवन और विचारधारा के स्वतन्त्र विकास के साथ जोड़ देता है।"

वस्तुतः यह मानव समाज का सौभाग्य था कि उसे परमात्मा की कृपा से अन्धकार से प्रकाश की ओर, अधर्म से धर्म की ओर तथा दुःख से सुख की ओर ले जाने के लिए दयानन्द सरीखे जगद्गुरु और रक्षक मिले।

सभ्यता विनाश के कगार पर

सच्चे धर्म और दिव्यता के स्रोतों से कट जाने, पृथ्वी पर स्वर्णिम अवस्थायें उत्पन्न करने के लिए बुद्धिवाद और भौतिकवाद में लिप्त हो जाने से, मानव ने नारकीय अवस्थायें उत्पन्न कर ली हैं। नितान्त असफल और हताश हो जाने पर उसने स्वयं अपने को और अपने साथ मानव-समाज एवं संस्कृति की विशिष्टताओं को विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। मानव में निहित पाशविकता के ताण्डव-नृत्य से भयभीत हुए विज्ञजन चेतावनी दे रहे हैं कि मानव को अपनी ऐन्द्रिय भूख में कुछ कमी कर आध्यात्मिकता में कुछ वृद्धि कर देनी चाहिए।

"मानव बन" वेद का यही मुख्य संदेश है

संसार के समन्वयात्मक लौकिक एवं पारलौकिक उत्थान में बड़े से बड़ा योग देने और सुनियोजित एवं विशिष्ट समाज के विकास में सहायक बनाने का दायित्व आर्य समाज को सौंपा गया था। "मनुष्य बन" वेद के इस महानतम् सन्देश को लेकर यह अवतीर्ण हुआ था। इस सन्देश में कहा गया है कि "तुम सब मित्रों जैसा परस्पर व्यवहार करो, अपने को मानव परिवार का सदस्य समझो, तुम्हारे विचार, कर्म और पारस्परिक व्यवहार में समानता और सौष्ठव होना चाहिए।" विपरीत इसके, मनुष्य एक दूसरे के विरोधी और परस्पर में एक दूसरे से अपरिचित बन गए हैं। इतना ही नहीं, वे जांत-पांत, मत-मतान्तरों, नस्ल और रंग, संकुचित प्रदेश एवं राष्ट्रवाद के गहरे गर्त में गिर गए हैं। मानव को अज्ञान और अन्धकार के इस प्रकार के गढ़ों में से निकालकर प्रकाश के पथ पर अग्रसर करना है जिससे कि संसार में शांति और समृद्धि की अवस्थायें व्याप्त हो सकें। हमारी कामना है कि यह सन्देश, जिसका आज हम हिन्द महासागर के तट पर आख्यान कर रहे हैं, सागर की लहरों पर बहता हुआ अन्य सागरों तक प्रसारित हो जाए। हमारी यह भी कामना है कि वेद का यह प्रमुख सन्देश मानव को सच्चे अर्थ में सहायक होता हुआ विश्व में शान्ति, समृद्धि, ऐक्य और सौमनस्य का युग पुनः ले आये। ● ●

Presidential Address

Shri Pratap Singh Shoorji
Ballabha Dass

Sisters and Brothers,

Let me first of all express my sincere thanks to the Aryan public all over the world through the International Aryan League (Sarvadeshik Arya Pratinidhi Shbha, Dayanand Bhawan), Delhi for conferring upon me the honour and onerous responsibility of presiding over the deliberations of the 12th Sarvadeshik Arya Maha Sammelan, which is betng held outside India for the first time in the annals of the Arya Samaj. My thanks are due also to the Arya Sabha, Mauritius as well as to the Aryan brethren of this beautiful land for providing me with this rare opportunity which is symbolic of their devotion to the cause of the Arya Samaj and zeal for furtherance of its activities and widening its sphere.

A very happy recollection comes to my mind. When in 1968, I had the privilege of being invited by Mauritius Government to participate in your Independence Celebrations, I had, in course of my speech said that I had come with the shipload of good wishes of my countrymen. Today I have brought shipload of Arya Samajists to your beautiful land to participate in this conference who are giving vent to their good wishes in person.

Salvation, the summum bonum of life.

The whole scheme of the built up of man and the society, according to Vedic ideology, revolves round the orbit of theistic decency, Dharma and righteous conduct consistent with the law of God, truth and justice, thereby enabling man to attain salvation (emancipation from bondage) which is the summum bonum of life. Elucidating this fact says Swami Dayananda, the founder of Arya Samaj :—

"Obedience to the Will of God, dissociation from sin, ignorance, bad company, evil influences and bad habits, the practice of truth in word and deed, promotion of public good, evenhanded justice, righteousness and the advancement of Knowledge, worship of one God, practice of Yoga, study or instruction of others and the dissemination of Knowledge by righteous efforts, the employment of best means to achieve one's objects, regulation of one's conduct in strict conformity with the dictates of evenhanded justice which is the essence of righteousness etc."

(Satyarth Prakash, Light of Truth, Chap. 9)

Throwing light on how can mankind enjoy happiness and peace, the great Swami points out the way at the end of the statement of his beliefs and disbeliefs thus :—

"I do not entertain the least idea of founding a new religion or sect. I believe what is worthy of belief in the eyes of all such as veracity in speech, while I do not believe what is

considered wrong by all-such as untruthfulness. I do not approve of the mutual wranglings of the sectaries, since they have by progagating their creeds led the people astray and turned them each other's enemy. The sole aim of my life which I have also endeavoured to achieve is to help to put an end to this mutual wrangling, to preach universal truths to bring all men into the fold of one religion whereby they may cease to hate one another and instead may firmly love one another, live in peace, work for their common weal. May this doctrine, through the grace and help of God and with the support of all truthful, honest and learned men who are devoted to the cause of humanity reach every nook and corner of this earth, so that all may acquire righteousness, wealth, gratify their legitimate desires and attain salvation, and thereby elevate themselves and live in happiness."

It is an irony that man, has in utter disregard of his highest aim of life and the exhortations of the Seers, is given to sensuality and is trying in vain to seek after comforts and happiness in things pertaining to flesh instead of spirit, rendering his image ugly and ferocious.

He has become an ardent votary of physical science and mammon instead of God, and the soul still groping in the dark causing disharmony, unrest and havocs in the universe.

Science groping in the dark.

We are living in the age of science. The man of the modern world has not only crossd the Oceans, peaks of mountains, the valleys and vast jungles of this globe but has also surmounted the spherical bounderies also. A society heading towards advancement can never minimise or ignore the utility of science and the means created through it. It would always eagerly look for these scientific means and without them it would not survive.

But in advanced science a great fear lurks in. That is the fear of its destructive use and employment. In rivalry of supremacy man equipped with scientific means can employ them to logical decision bringing devastation to mankind. To avoid this havoc let the sciences give us means but not the discrimination of using them. It provides us with ample power but not the constructive genius. It gives us material accomplishments but not the spiritual intuition, it equips us with all sorts of knocks but not the moral norms. This can only come from **Dharma** (Religion) which is a discipline to discriminate material and spiritual values and work them out in all affairs of worldly and unworldly achievements, and this is the Vedic religion where spirituality and materialism, science and religion, secularism and unworldly tendencies of life meet together.

Conception of Dharma (Religion).

The conception of religion far from being sectarian is a prop for the full flowering of individuality and divinity in man. Such persons are reckoned to be belonging to one religion, as is endorsed even by William Penn, an English writer. He says :

"All humble, meek, merciful, just, truthful pious and devout souls are everywhere of one religion, and when death has taken off the mask, they will know one another, though the diverse liveries they wear make them strangers."

To make the whole mankind 'Arya (noble)', was the sole aim of Swami Dayanand Saraswati and is still the aim of his Arya Samaj.

Salient features of Arya Samaj.

The most important and prominent feature of the Arya Samaj is that it professes to teach a religion which though old in its concepts,

elements, and contents, is according to the spirit of the age. It is simple and purely monotheistic. It has nothing to do with what are popularly called superstitious practices. It is averse to all belief in mysticism and miracles. It preaches the equality and general brotherhood among all the persons of mankind. It gives the greatest possible scope for the physical, intellectual, social and moral progress of the people. It meets the atheistic and materialistic arguments of the present age of reason with the strong theistic reasons of the Vedas. It inculcates principles of sound morality based on 'Dharma' in its followers, and most of all it affects a compromise between the busy life of the 19th and 20th centuries and the peaceful religious and devotional observances of the past. The Arya Samaj subordinates every thing to piety and uprightness and requires acts to be done in strict conformity with the laws of God.

The Arya Samaj advocates a social structure based on spiritual values, vegetarianism and a World Government.

The services that the Arya Samaj has rendered to the Community are too well known and need no elaborate mention in this address. It has verily made the society worth living for civilized people by acquainting it with its glorious past and rich heritage, opening the portals of the Vedas to all males and females, which remained closed for a number of people, and by introducing social and religious reforms, initiation of indigenous system of education on the pattern of ancient Gurukulas, adult marriages, inter caste marriages, widow remarriages, prohibition of child, unsuitable and old marriages. It has given a new orientation to mental outlook, and broadened mental horizon. It has wrought a wonderfull revolution in man's thinking, forcing him to think of in terms of reformation, lead a rational and moral life thereby testifying to the Eternal Law of moral progression and glorifying existence of God and Dharma and faith in them.

The efforts of Arya Samaj for uprooting untouchability and caste system based on birth and amelioration of the condition of women folk have earned world wide appreciation.

The Constitution of the Arya Samaj is based purely on democratic lines keeping its door open to every body and giving a big hand to laity in the mangement of Arya Samaj affairs. Organization of the Arya Samaj enjoys world wide acclamation. About 4000 branches of Arya Samaj are working in India and abroad which are affiliated to the International Aryan League through Provincial Aryan Leagues. Thousands of institutions such as schools, colleges, Gurukulas, Pathshalas, Orphanages, Homes for widows and destitute women, Hospitals, Boarding Houses, etc. are being run under its auspices, annual budgets of which run in crores. Membership of the Arya Samaj, and its devotees, admirers and supporters run in many lacs.

What importance has Dharma for an Arya ?

Religion for an Arya Samajist is not an exclusively individual affair. We are a part of a greater whole and our place in this whole has to be determined and constantly kept in view in the performance of our religious duties. Religion as referred to in the principles of Arya Samaj is something that establishes an adjustment between the whole and the part, we are not isolated beings arbitrarily put together by some external agency. We are tied down by natural and inseparable relations and our individual well-being is not at all conceivable much less realizable except through the well-being of others.

Vedic Dharma offers synthesis.

Swami Dayanand was the first and only man after Saint Jaimini who sought to pave the way of synthesis between world liness and non worldliness, between idealism and realism, between science and religion, between materialism and spiritualism, between relativism and obsolutism, between individualism and collectivism, between faith and reason, and between nationalism and internationalism. Dharma means right conduct. Dharma is a way of life sublime. It is the chief bond of humanity.

Swami Dayanand Saraswati, harbinger of a new epoch.

Swami Dayanand Saraswati, the illustrious founder of the Arya Samaj, was the harbinger of a new epoch, who tried to bring religious harmony and to get people rid of the shackles of ignorance, superstitions and prevalent practices of Adharma in the name of Dharma.

He revolutionised the religious thought and diverted it into rational channels and forced the followers and representatives of various religious denominations to revise their beliefs, observances and tenets which did not and could not stand the test of rationalism and tide of scientific criticism.

There is a vast literature available which speaks highly of Swami Dayanand and the Arya Samaj. I need not dilate upon it. However I cannot resist the temptation of quoting a few passages from tributes paid by eminent historians and philosophers :—

"Swami Dayanand was a true statesman, says Jadunath Sircar, a well known historian, who set a force at work which would go on influencing the lives and thoughts of unborn generations, and when the true history of India's growth comes to be written that high rank will be adjudged to Dayanand Saraswati. He rescued the hearts of people from religious atrophy, he linked them with the spirit of eternal progression ruling the outer world, he proved that whatever is the best and truest in the legacy of the ancient sages of Arya Varta is a possession open to the entire human race and not confined to any chosen people, caste or sacred soil".

"He was the first great architect of modern India. His vision was clear and broader than is generally given to nation builders."

Wherever the Arya Samaj is a reality there has been a marvellous elevation of the masses, and classes. The energy of the Arya Samaj has overflown into the broad fields of education, relief of distress, reformation, reclamation no less than scriptural scholarship and propaganda writing. Its contribution to the intellectual and moral life of the people especially new India is almost incredible, though it is numerically small".

"Swami Dayanand gave practicality to spirituality", thus puts Shri Aurobindo, the life Mission of the great Swami in a nutshell.

In the words of Romain Rolland :—"Dayanand Saraswati was a personality of the highest order. This man with the nature of a lion is one of those whom Europe is too apt to forget when She judges India, but she will probably be forced to remember to her cost for he was the rare combination of a thinker of action with a genius of leadership.

"Dayanand transfused into the languid body of India his own formidable energy, his certainty, his lion's blood. His words rang with heroic power. Dayananda would not tolerate the abominable injustice of the existence of untouchables and nobody has been a more ardent champion of their outraged rights. They were admitted to the Arya Samaj on a basis of equality, for the Aryas are not a caste.

"Dayananda Saraswati was the most vigor-

ous force of the immediate and present action in India at the moment of the rebirth and re-awakening of the national consciousness. He was one of the most ardent prophets of reconstruction and of national organization. I feel that it was he who kept the vigil."

Prof. Sydney Web. LL.D. London brings out the importance of the Arya Samaj thus :—

"The Arya Samaj is undoubtedly a potent splritual ferment combining what may be called a protestant reformation of the secular abuses and tendency accretions of orthodox Hinduism a revision from ecclesiasticism to the Vedic scripture with a puritan simplification of life and a round head insistence on the development of an independent Indian intellectual life and thought."

It was indeed a good fortune of mankind that through the grace of God, we had World teachers and saviours like Dayananda among us to lead us from darkness to light, from Adharma to Dharma and from woes to weals.

Civilization at the brink of destruction :

Having been cut off from the moorings of true religion and divinity in him, having been given to sheer intellectualism and rank materialism in order to bring heaven on earth, man has brought down Hell. Owing to his failure and despondency consequent there-upon he has brought himself and alongwith him mankind and what is valuable in the civilization to the brink of destruction. Thoughtful persons alarmed at the mad play of animalism in man are sounding a note of warning. They are exhorting people to add a little of spiritualism and minimise a little of their appetite and animalism.

Be a man in true sense of the Word this is the Chief message of the Vedas :

The Arya Samaj was called upon to make the greatest possible contribution to the harmonious moral and secular progress of the world and help maintain and evolve a compact and refined society. It appeared on the scene with the most sublime Vedic message 'Be a man', behave just like friends, regard yourselves as members of the world family, there must be accord in your mental approach and execution and mutual dealings." Contrary to these injunctions men have become antagonists and strangers to one another falling in the deep ditches of castes and creeds, race and colour, parochialism and narrow nationalism etc. Man has to be extricated from such vaults of ignorance and darkness and to be brought to the path of light, so as to ensure peace and prosperity. Let this message which we are reiterating today on the Indian Ocean go on floating on its waves and pass on to other shores. May this cardinal message of the Vedas help men to become men in the true sense of the word and usher an era of Universal peace and prosperity, unity and concord.

Work outside India and its impact :

We Aryas, belonging to India in general and those of overseas in particular are called upon to spread this message of the holy Vedas as widest as possible. It is a matter of great satisfaction that the Arya Samaj in Mauritius, Trinadad, Guyana, East and South Africa, Fiji, Thailand, Malayasia, Burma, U.K. etc. with a net work of institutions--Educational., charitable etc. is working at a sound footing. There are a number of well organised units. All overseas Aryan brethren and their supporters deserve praise who, despite great handicaps and limitations have by dint of their zeal, devotion, co-operation and strenuous efforts made the Arya Samaj a veritable entity and the beacon light in their respective regions. Our preachers and scholars too stand high in our estimation who

have by their toils and sacrifices kindled the light and kept it intact. Let Arya Samaj make head-way among the original inhabitants of various foreign lands and let it not be confined mainly to Indians overseas. Let Satyarth Prakash (Light of Truth) along with the life of Swami Dayanand be translated especially into regional and native languages too and circulated widely. This is the paramount need of the hour. A few of those people seem to be prone to know more and more about the doctrines and the actvities of the Arya Samaj as is evident from the fact that a number of foreign nationals and scholars have taken up and are taking up research work about Swami Dayanand and the Arya Samaj, especially under the inspiration and guidance of the Research Departmedt of the International Aryan League. High Class literature must be circulated among them and preaching work carried on.

Arya Samaj foundation centenary celebration and its programme :

In 1975 we all will be celebrating Arya Samaj Foundation Centenary at Bombay where the Arya Samaj was first founded by Swami Dayanand Saraswati himself, to carry on the movement launched by him in an organised and systematic way. Preparations on grand scale are afoot. I extend invitation to all overseas Aryan brethren and to the admirers and supporters of the cause of Arya Samaj to participate in these celebrations and extend their active co-operation to make them a grand success—A comprehensive programme has been chalked out by the International Aryan League which comprises among other things the following most important items :—

(1). Publication of Hindi and English commentaries on the Vedas.

(2) Publication and reprinting of Satyarth Prakash (Light of Truth) the Magnum Opus of Maharshi Dayanand in various Indian and International Languages.

(3) Publication of an authentic biography of Swami Dayanand Saraswati in World languages.

(4) Publication of old and new classical literature on various topics.

(5) Founding of Dayanand Chairs in various Universities.

(6) Establishment of training centres to train high class preachers.

(7) Establishment of full-fiedged research centres with well equipped libraries.

(8) Starting a daily newspaper.

I need not say that the success of the whole programme depends especially upon the active co-operation of Aryas and Arya Samajes all over the world and I am sure this will be forth coming in abundant measures.

Conclusion

I must once again express feelings of profound gratitude to the Aryas and the Hindus of Mauritius ond to the Arya Sabha who have made the Arya Samaj a veritable entity here, the impact and charm of which is writ large on the horizon of this land and vibrating in its congenial atmosphere. May all of us go back with the happiest recollections of this historical event.

वेद मन्त्र

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वा वृधुः सौभगाय ।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः ॥
ऋग्वद ५, ६०, ५

Let all these men of the universe who are brothers to one another advance forward unitedly for the attainment of prosperity, there being none high and none low among them. The most excellent ordainer of the universe and just God is their father. Let the earth pouring forth abundant milk etc. bring auspicious days for them. ●

वेदसम्मेलन का अध्यक्षीय भाषण

—आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री—

देश-देशान्तर से आये हुये विद्वज्जन, देवियो और सज्जनो !

द्वादश अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन की सृष्टि करने वाली सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के अधिकारी-वर्ग तथा सम्मेलन का आयोजन करने वाले आर्य सभा मौरिशस एवं स्वागत-कारिणी समिति के कर्णधारों का मैं बहुत ही आभारी हूं कि उन्होंने वेद सम्मेलन की अध्यक्षता का भार मुझ पर डाला। आप सभी भाई-बहन बड़ी उत्कण्ठा के साथ सुनने को बैठे हैं और सुनना चाहते हैं मेरे विचारों को वेद के सम्बन्ध में। इस वेद सम्मेलन का बड़ा ही महत्व है क्योंकि इसमें देश देशान्तर से भाई बहिन भाग ले रहे हैं।

वेद परम करुणामय भगवान का दिया हुआ ज्ञान है। विश्व के मानव के कल्याणार्थ वेद की शिक्षाओं का प्रचार परमावश्यक है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेद के वास्तविक स्वरूप को विश्व के सामने उपस्थित किया और उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज का यही मुख्य कर्त्तव्य है कि वह वेद को विश्व के सामने रक्खे। विश्व की मानवता जहाँ अज्ञान, रोग और अभाव से त्रस्त है वहां उसका समाज संशय, उदासीनता, अविश्वास और भौतिकता से पीड़ित है। संसार में इनका इलाज करने में यदि कोई अमोघ औषध है तो वह है वेद का ज्ञान जो समस्त मानव के लिए बिना किसी भेद-भाव के समान रूप से प्राप्त करने योग्य है।

एक प्रश्न यह खड़ा होता है कि क्या वेद का ज्ञान वस्तुतः समस्त व्यक्तियों के लिए है और सभी उसके पढ़ने और ग्रहण करने के अधिकारी हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' में वेद के आधार पर ही सिद्ध किया है कि वेद के पढ़ने का अधिकार मानव मात्र को है। जब भगवान के बनाये विश्व में पृथ्वी, पानी, हवा, प्रकाश आदि सबके लिए हैं तो फिर उसका दिया ज्ञान भी सब के लिये ही है।

समस्या मानव के सामने यही है कि ज्ञान और भाषा का मूल क्या है और वह मानव को किस प्रकार प्राप्त हुआ। कुछ लोग कहते हैं कि भाषा और ज्ञान विकास के सिद्धान्तों के आधार पर मनुष्य ने स्वयं विकसित किये हैं। ये सर्वथा विकास के फल हैं। परन्तु परीक्षणों से यह बात सही नहीं उतरती। भाषा-विज्ञान के नाम पर इस समस्या के समाधान का लोग प्रयास करते हैं। परन्तु परीक्षण करने पर यह कल्पना का एक वाद ठहरता है। यह वस्तुतः कोई विज्ञान नहीं, और इसके सिद्धान्त विज्ञान की कसौटी पर सही उतरते भी नहीं हैं। विकास तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। सृष्टि विकास (Cosmic Evolution) चेतना विकास (Biological Evolution) और ज्ञान विकास (Intellectual Evolution)। ये तीनों प्रकार के विकास अब परीक्षणों से ही निःसार और व्यर्थ सिद्ध हो चुके हैं। यदि ज्ञान और भाषा विकास के फल होते तो जिन्हें अविकसित जंगली कहा जाता है, उनमें जो सूक्ष्म कलायें पायी जाती हैं, वे नहीं होनी चाहिए थीं। परन्तु तथ्य इसके विपरीत है। अतः ज्ञान और भाषा परमात्मा की प्रेरणा से आते हैं। परन्तु वह भाषा किसी देश विशेष या बोलचाल की भाषा नहीं होती। वह ज्ञान भी किसी देश-विशेष या समुदाय-विशेष के लिए नहीं होता है। वेद का ज्ञान और वेद की भाषा परमेश्वर प्रदत्त है

और किसी देश-विशेष आदि के लिए नहीं, अपितु सभी विश्व के मानवों के लिए है। वेद की भाषा संसार में कभी बोली की भाषा न रही और न बनाई जा सकती है।

ऋषि दयानन्द ने एक नियम ही आर्य समाज का ऐसा बनाया है कि जिसमें वेद को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक स्वीकार किया है। यह सूत्र आर्यसमाज को सर्वथा मान्य है और यही उसका प्रमाण है। पढ़े लिखे लोग यह कहते हैं कि जब सभी विज्ञान वेदों में है तो फिर अनुसंधान और आविष्कार (Investigation and Discovery) का कोई स्थान नहीं रहेगा। इसका उत्तर संक्षेप में मैं यही देना चाहूंगा कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, —सब सत्य विद्याओं के विस्तार और विवरण का नहीं। वेद में सब सत्य विद्याएं मूल वा बीज रूप में विद्यमान हैं। पल्लवन, विस्तार और विवरण खोज और अन्वेषण के विषय हैं। वेद सिद्धान्त की स्थापना करता है। इन सिद्धांतों का जगत् में प्रमाणीकरण करना विज्ञान का विषय है। वेद वह ज्ञान है जिसका सृष्टि के पदार्थों के साथ सम्बन्ध है। विश्व के पदार्थ यदि नक्शा वा माडल हैं तो वेद उनका भूगोल वर्णन करने वाला ज्ञान है। सृष्टि के पदार्थ जिन-जिन नियमों से संचालित हैं उनका नाम ऋत है और पदार्थों को सत् कहा जाता है। नियम को जानकर पदार्थों का ज्ञान किया जा सकता है अथवा पदार्थों को जानकर नियमों को समझा जा सकता है।

पानी कभी बर्फ बनता है और बर्फ पानी बनता है। यह परिवर्तन में आता है। परन्तु कितनी डिग्री पर पानी है और कितनी पर बर्फ है, यह नियम अपरिवर्तनीय है। नियम के ज्ञान से पानी और बर्फ का पता चलता है अथवा पानी और बरफ को बनाकर एवं समझकर नियमों पर पहुंचा जा सकता है। यही स्थिति वेद की है। वेद सृष्टि के नियम हैं और सृष्टि के पदार्थ उस नियम में नियन्त्रित हैं। ऋग्वेद १०।१९०।१ का मन्त्र इसी पर प्रकाश डालता है। ऋत वस्तुतः ज्ञान, सृष्टि के नियम वा वेद हैं, और सत् जगत् के पदार्थ हैं।

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोअर्णवः॥

From the Self-illuminating active force or from the all pervading heat caused by Divinity became manifest the law eternal together with the subtle matter. Thence the dissolution after creation was produced, and thence the atmosppheric ocean containing thecosmic principles come into existence.

इसी मन्त्र में एक और वैज्ञानिक तथ्य पर प्रकाश डाला गया है। वह तथ्य यह है कि संसार में प्रत्येक वस्तु की स्थिति गर्मी पर है। प्रत्येक वस्तु में एक खास दर्जे का तापमान विद्यमान है। जब तक वह तापमान है तब तक वस्तु स्थित है। ज्यों ही तापमान समाप्त होगा, वस्तु समाप्त हो जावेगी। सूर्य, जो ताप और प्रकाश आदि का महान् पिण्ड है, उसकी भी स्थिति प्रलय में यही होगी। यह तापमान जब समाप्त हो जावेगा तब संसार का प्रलय हो जावेगा।

प्रश्न यह उठता है कि फिर कौन शक्ति पुनः ताप देगी कि जगत् के पदार्थ इस रूप में आवें? वेद मन्त्र बतला रहा है कि यह ताप भगवान पुनः देगा ताकि जगत् बने। इसके लिए शब्द प्रयुक्त है—अभीद्धात्तपसः (from the all-pervading heat caused by Divinity)। वेद में संवत्सर नाम का वर्ष भी है और यह पद अन्य कई अर्थों का वाचक है। उनमें इसका एक अर्थ सूर्य भी है। शतपथ ब्राह्मण १०।२।४।३ में और १४।१।१।२७ में सम्वत्सर का रूपार्थ बतलाया गया है। ऐसा ही जैमिनीय ब्राह्मण में भी है। इनमें यह प्रकट किया गया है कि सम्वत् + सर मिलकर संवत्सर पद बनता है। इसका अर्थ करते हुए कहा गया है: जो प्रकाशमान भाग है, 'सम्वत्' है और जो काला वा अप्रकाशमय भाग है, वह 'सर' है। इससे सूर्य में काले धब्बों का वर्णन पाया जाता है।

ऋग्वेद और सामवेद के प्रथम मन्त्र में अग्नि का वर्णन है। यजुः में अग्नि के ही भेद अग्निपुंज सूर्य का प्रथम मंत्र में वर्णन है। यह भी एक प्रकार से अग्नि का ही वर्णन है। अथर्व के भी प्रथम मंत्र 'ये त्रिषप्ताः' में अग्नि का प्रकारान्तर से वर्णन पाया जाता है। यह क्यों? इसलिये कि अग्नि का जगत् में बड़ा महत्व है। 'अग्न आ याहि वीतये' इस मंत्र की एक वैज्ञानिक व्याख्या ब्राह्मण

ग्रंथों में मिलती है। वहां पर लिखा गया है कि 'वीतये' पद एक भी है और 'वि+इतये' ऐसे भी दो पद मिलकर एक पद बनता है। पहले पृथ्वी आदि सभी लोक एक दूसरे के अत्यन्त समीप थे। अग्नि ने इनको दूर दूर पर कर दिया। यह दूर करने को ही 'वीतये' पद से प्रकट किया गया है। अतः वेद मंत्र बतलाता है : यह अग्नि हमारे ज्ञान में हमें प्राप्त हो जो कि सृष्टि की प्राथमिक अवस्था में लोकों को पृथक् किया करता है।

एक जटिल समस्या सामने आकर यह खड़ी हो जाती है कि वर्तमान समय में धर्म के साथ विज्ञान का मेल नहीं खाता है। इसका समाधान कुछ विचारक यह करते हैं कि धर्म का वैज्ञानिकीकरण कर देना चाहिए। परन्तु यह पक्ष ठीक नहीं है। वस्तुतः विज्ञान का धार्मिकीकरण करना चाहिए। धर्म का पूर्ण रूप दर्शन से भी सम्बद्ध है। अतः वेद में विज्ञान का धार्मिकीकरण और दार्शनिकीकरण मिलता है। इसमें धर्म, विज्ञान और दर्शन तीनों समन्वित हैं।

वेद में किसी प्रकार का इतिहास नहीं है। उसके प्रत्येक पद में विज्ञान और दर्शन का उदात्त रूप पाया जाता है। जितना ही उस पर विचार किया जावे उतना ही ज्ञान-विज्ञान सामने आता जाता है। आर्यसमाज के प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द ने इसी दृष्टि से वेद को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक कहा है।

कभी २ लोग ऐसा कहते पाये जाते हैं कि वेद में विधि भी पाई जाती है। उस विधि को मानने के लिए बाध्यता नहीं है। जो भगवान् को ही नहीं मानता वह उसकी आज्ञा को ही क्यों मानेगा। इस का समाधान यह है कि भगवान् को न मानने वाले को भी वेद को तो मानना ही पड़ता है। एक मंत्र है:—

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
यजुः २५।१४

इस मंत्र में लिखा है कि हम 'अपने कानों से अच्छा ही सुनें और आँखों से अच्छा ही देखें'। यहां पर वेदमंत्र दो प्रकार के विधान बता रहा है। एक आदेशात्मक है और एक नियमात्मक है। हम अच्छे के बजाय बुरा भी सुन सकते हैं और बुरा भी देख सकते हैं, क्योंकि हमें कर्म करने की स्वतन्त्रता है। हम इस आदेशात्मक विधान के विपरीत कर सकते हैं। परन्तु नियमात्मक विधान हम नहीं तोड़ सकते। वह है कान से सुनना और आंख से देखना। कोई भी इसमें व्यतिक्रम नहीं कर सकता कि कान से देखे और आँख से सुने। यहां भगवान् को न मानने वाले को भी इस नियम को मानने में बाध्यता है।

यजुर्वेद के ८ वें अध्याय का ११वां मंत्र है जिसमें कहा गया है कि 'शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु'। यहाँ विचार यह खड़ा होता है कि 'कनिक्रदद् देव' कहने की विशेष आवश्यकता क्या थी? इसका समाधान कारखानों में खाद बनाने वाले करेंगे। बिना गरज के खाद में उपजाऊ शक्ति नहीं आती। साथ ही बादल की गरज से जब बिजली चिंघाड़ उठती है तब कृमिकीट, जो रोग के जन्तु हैं, उनका विनाश होता है। वर्षा में वे अधिक बढ़ते हैं और उनके विनाश का यह साधन है। इसी प्रकार, घोर गर्जना के बाद बिजली जब कड़कती है तब ओजोन अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। ओजोन बहुत ही जीवन और उल्लास का देने वाला है। यह प्राण वायु का घनीभूत रूप है।

वेद भौतिक उन्नति के साथ आत्मिक उन्नति की भी प्रेरण देता है। बिना इसके मानव पूर्णता को नहीं प्राप्त हो सकता। पुरुष नाम ही पूर्णता का द्योतक है। वह अध्यात्म और भौतिकता दोनों उन्नतियों का समन्वय चाहता है।

वेद विश्व में शांति का उपदेश देता है। हमारी 'द्यौः शांतिः' आदि की प्रार्थना का यही तात्पर्य है। हम सदा यह भावना इस मंत्र से व्यक्त करते हैं:—

May there be peace in heaven, may there be peace in atmospheric region, may peace reign on rhe earth, may the waters be soothing and may the medicinal be conducive to health, may the plants be the source of peace to all, may all the men of sceince bring peace to us, may the science constructively spread peace throughout, may all other objects give us peace and may peace even be peace to all and may that peace come to us,

Yajuh, XXXVI, 12,

इस प्रकार वेद मानवमात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है। हम मानवता के सामने इस निधि को प्रकाश में लाने में सफल हों। आपका अधिक समय न लेकर मैं संक्षेप में इतना ही कहना चाहता हूं : भगवान् आपके मार्ग को प्रशस्त करे।

युवकसम्मेलन का अध्यक्षीय भाषण

—श्री ओम्प्रकाश त्यागी, संसद् सदस्य—

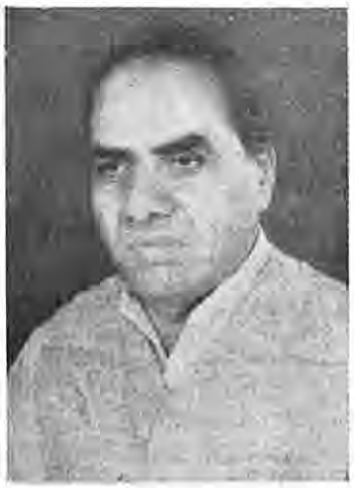

बहिनो व भाइयो !

मैं १२ वें सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन की मौरिशस स्थित स्वागत-समिति का हार्दिक आभारी हूं कि उसने इस महत्वपूर्ण सम्मेलन का आयोजन कर मुझे उसके अध्यक्ष पद के लिए चुना। 'लघु भारत' होने के नाते मौरिशस संघ मेरी कल्पना का विषय बना रहा। आज उसका साक्षात्कार कर मुझे जितना हर्ष हो रहा है उसका वर्णन करना मेरी वाणी की शक्ति से बाहर है। ऐसे सुन्दर रमणीक व सम्पन्न देश में रहने वाले वास्तव में सौभाग्यशाली हैं।

बन्धुओ ! नवयुवकों की समस्या केवल एक देश की समस्या न होकर समूचे संसार की जटिल समस्या बनी है, और प्रत्येक देश समस्या का समाधान ढूँढने के निमित्त प्रयत्नशील है। सत्य सनातन वैदिक धर्म इस समस्या का क्या समाधान उपस्थित करता है, यही इस सम्मेलन का मुख्य लक्ष्य है।

यह वैज्ञानिक युग है। इसमें पले नवयुवक-नवयुवतियाँ प्रत्येक बात को विज्ञान अथवा बुद्धिवाद की कसौटी पर कस कर ग्रहण करने के आदी हो गये है। इसीलिए अंधविश्वास पर आधारित धार्मिक व सामाजिक विश्वासों व परम्पराओं के प्रति उन्होंने विद्रोह कर दिया है। उनका विद्रोह अमरीका आदि देशों में अच्छी-बुरी सभी सामाजिक सीमाओं को लांघ गया और उसने एक नवीन हिप्पी संस्कृति को जन्म दे दिया है, जिसके कारण आज लाखों नवयुवक-नव युवतियाँ लक्ष्यहीन आवारों के रूप में संसार भर की खाक छानते फिर रहे हैं। इसमें दोष उनका नहीं, अपितु राष्ट्रों व समाज के उन कर्णधारों का है जो देश-काल की बदली हुई परिस्थिति के अनुसार उन्हें सही दिशा न दे सके। वे ऐसा करने में इसलिए असमर्थ रहे क्योंकि वे अन्धविश्वास पर आधारित धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं से अपने को मुक्त न कर सके।

वैदिक धर्म की यह विशेषता है कि इसने देश-काल-परिस्थिति के अनुसार वैदिक धर्म के मूल सिद्धांतों पर आधारित समाज को समय-समय पर विभिन्न स्मृतियों के रूप म व्यवस्थाएं दीं जिन्होंने समाज के प्रत्येक अंग को सदैव नवीन स्फूर्ति व प्रेरणा प्रदान की। यही कारण है कि हजारों वर्ष के ऐसे दासता-काल में जब विदेशी शासकों ने इसे समूल निगल जाने का भरसक प्रयत्न किया, वैदिक धर्म की इसी विशेषता ने आर्य जाति को उस असह्य संकट काल में भी विजयी बनाकर निकाल दिया। भारत ही नहीं, अपितु मौरिशस, फिजी, गायना आदि देशों में रहने वाले वैदिकधर्मी बन्धु भी इस बात के साक्षी हैं।

अतः जो राष्ट्र अपनी नवयुवक-शक्ति का उत्थान चाहते हैं उन्हें अन्धविश्वास पर आधारित धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं को तिलाञ्जलि देकर देश-काल-परिस्थिति का ध्यान करते हुए बुद्धिवादी धार्मिक व सामाजिक व्यवस्थाओं को उपस्थित करना होगा या अपनी मान्यताओं को बुद्धिवाद के बल पर सत्य व उपयोगी सिद्ध करना होगा।

उदाहरणार्थ, यदि आर्य समाजी, पौराणिक, मुस्लिम, ईसाई आदि बन्धु यह चाहते हैं कि उनके बच्चे उनकी

परम्परानुसार सन्ध्या-हवन, मूर्तिपूजन, नमाज, गिरजा में पापोद्धार के निमित्त जाना—आदि करें तो ऐसा वे अब डण्डे के बल पर नहीं करा सकेंगे। अपितु जब तक वे युक्तियों के द्वारा इनकी आवश्यकता व उपयोगिता सिद्ध नहीं कर देंगे तब तक वे उनसे ऐसा नहीं करा सकते।

ऐसा प्रतीत होता है कि संसार में अधिकांश देशों व समाजों ने युवक-शक्ति से निराश होकर उनकी उपेक्षा करना प्रारम्भ कर दिया है और उसे अपने भाग्य पर छोड़ दिया है। उनकी यह नीति घातक है। इस प्रकार वे अपना और अपने देश का भविष्य अन्धकारमय बना रहे हैं।

किसी भी परिवार, समाज व राष्ट्र का भविष्य उसके नवयुवक नवयुवतियों पर आधारित होता है। इसलिए राष्ट्र-निर्माण का प्रमुख अंग नवयुवक नवयुवतियों का निर्माण है। परन्तु दुर्भाग्यवश आज भौतिक साधनों व भोगसामग्रियों अथवा भौतिक उत्थान को ही राष्ट्र-निर्माण माना जा रहा है और नवयुवक शक्ति की संसार के प्रत्येक भाग में उपेक्षा हो रही है। यही कारण है कि आज युवक-शक्ति अधार्मिकता, नास्तिकता उच्छृंखलता, और चरित्र-हीनता के गर्त में गिरती चली जा रही है।

एक परिवार या राष्ट्र में नवयुवकों का क्या स्थान है, इसका रूपक पुराणों में इस प्रकार प्रदर्शित किया गया है कि जिस परिवार अथवा जिस माता-पिता के सन्तान नहीं होती उनका नरक से उद्धार होकर उन्हें स्वर्ग की प्राप्ति नहीं होती है। काल्पनिक स्वर्ग-नरक की दृष्टि से यह मान्यता कहाँ तक सत्य है, यह तो मैं नहीं जानता, परन्तु वैदिक धर्म की दृष्टि से इस मान्यता में बड़ा बल है। वैदिकधर्म वर्तमान में सुखी जीवन को स्वर्ग व दुःखी जीवन को नरक मानता है। प्रत्येक मनुष्य के जीवन में स्वर्ग का आगमन हो या न हो, परन्तु नरक का आगमन वृद्धावस्था के रूप में अवश्य होता है, जब कि उसकी इन्द्रियाँ शक्तिविहीन कबूतर की भांति हो जाती हैं। उस नारकीय अवस्था से सरलतापूर्वक पार कराने की क्षमता व भावना केवल अपनी सन्तान में ही होती है, धन-सम्पत्ति व नौकर-चाकरों में नहीं। नवयुवक का जो महत्व एक परिवार में है, वही महत्व उसका राष्ट्र में होता है। जिस समाज अथवा राष्ट्र में नवयुवक-शक्ति का ह्रास हो जाता है, उसका भविष्य भी अन्धकारमय हो जाता है।

इसका प्रत्यक्ष प्रमाण द्वितीय विश्वयुद्ध में मिला। जब हिटलर की फौजों के द्वारा एक सप्ताह के अन्दर ही फ्रांस का पतन हो गया, तब एक प्रेस प्रतिनिधि ने फ्रांस के नेता मार्शल पेतां से पूछा कि जब जर्मनी के समान फ्रांस के पास भी अस्त्र-शस्त्र व सेना थी और जर्मन सीमा पर अजेय मैजिनो रक्षा-व्यवस्था थी तो उनके देश का पतन इतना शीघ्र क्यों हुआ? इसका उत्तर देते हुए मार्शल पेतां ने कहा कि हिटलर की फौज में व्यायाम-शालाओं में नित्य व्यायाम करने वाले स्वस्थ नवयुवक थे जब कि हमारी सेना में युवतियों के पीछे चक्कर काटने वाले मजनूं थे।

आर्यसमाज की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने युवक-शक्ति के महत्व को अनुभव करते हुए ही युवकों के शारीरिक, मानसिक, व सामाजिक उत्थान-कार्य को सीधा अपने हाथ में लिया और इसके लिये आर्य वीर दल की स्थापना की और बच्चों में कार्य करने के निमित्त कुमार सभाओं को प्रोत्साहन दिया। परन्तु दुर्भाग्यवश आर्य समाजों से जितना सहयोग इस महान् कार्य को मिलना चाहिए था उतना नहीं मिला। परिणाम-स्वरूप बहुत से आर्य समाजों में नवयुवकों का अभाव खटक रहा है। नवयुवकों के प्रति उनकी यह उपेक्षा घातक है। वास्तव में आर्य वीर दल प्रत्येक आर्य समाज का अनिवार्य अंग होना चाहिए।

समाज की सही प्रगति के लिये होश और जोश दोनों की आवश्यकता है। होश उन वृद्धजनों के पास होता है जिन्होंने अपने खून-पसीने से आर्य समाज को खड़ा किया है, परन्तु वृद्धावस्था में इन्द्रियां शिथिल हो जाने से उनके पास कार्य करने के लिए जोश का अभाव होता है। इसके विपरीत नवयुवकों के पास जोश होता है और अनुभवहीनता के कारण होश का अभाव होता है। इसलिए वृद्ध और नवयुवक दोनों की ही समाज को आवश्यकता है। वृद्धों का कर्त्तव्य है कि वह कुर्सी का प्रलोभन छोड़कर नवयुवकों को आगे लाने का प्रयत्न करें और नवयुवकों का कर्त्तव्य है कि वह वृद्धजनों का यथोचित मान करते हुए उनकी सम्मति व अनुभव का लाभ उठावें। इस प्रकार होश और जोश का समन्वय ही समाज का सही स्वरूप है और समाज के उज्जवल भविष्य का प्रतीक है।

विचारों को विराम देते हुए अन्त में मैं पुनः आर्य सभा मौरिशस तथा स्वागत समिति, सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन के अधिकारियों व उपस्थित जनता के अनुग्रह व सहयोग के लिये आभार प्रदर्शित करता हूं। ●

युवक सम्मेलन में

मोरिशस के युवा-क्रीड़ा-मन्त्री का भाषण

रचनात्मक कार्यों पर बल दें

—माननीय श्री दयानन्दलाल वसन्तराय—

अध्यक्ष महोदय ! भारत आदि देशों से लम्बी यात्रा का कष्ट सहन करके पधारे हुए प्रतिनिधि गण ! मौरिशस के आर्य सभासद् वृंद, उपस्थित देवियो ! सज्जनो ! तथा युवजन बहिनो और भाइयो !

यह आयोजन अपने ढंग का प्रथम और ऐतिहासिक है। जब हमारे पूर्वज इस धरती पर श्रमिक के रूप में गिरमिट के नियमों में बंधकर आये थे तब भारत और मौरिशस दोनों देशों की धरती पराधीन थी। उस युग में यदि वे इससे दशांश संख्या में भी धर्म-प्रचारक या प्रतिनिधि बुलाने की बात करते तो एक क्रांतिकारी षड्यन्त्र माना जाता, जैसा कि कामागाटा मारू जहाज से अमेरिका से पधारे हुए भारतीय श्रमिकों के साथ हुआ अपमान क्रांतिकारी इतिहास की सामग्री बन गया। यही अन्तर पराधीनता और स्वाधीनता की सीमा के मध्य लम्बी रेखा का महत्व बताता है।

इस आयोजन के लिए द्वीप के कोने कोने में घर घर पहुंच कर सामग्री संग्रह करने की कठिनाई उठाने वाले आर्य सभा तथा आर्य रविवेद प्रचारिणी सभा के नेताओं का धन्यवाद करता हूं। इस सम्मेलन में युवा-वर्ग का सम्मेलन भी आयोजित कर के युवा-क्रीड़ा-मंत्रालय के उद्देश्यों की पूर्ति में हाथ बंटाने के लिये युवा-क्रीड़ा-मंत्री होने के नाते अपनी ओर से तथा अपने मंत्रालय की ओर से आभार प्रकट करता हूं। इस महान् समारोह में मुझे आमंत्रित करके जो गौरव प्रदान किया गया है, उसके लिए मैं आयोजकों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूं। जब कोई संस्था युवक सम्मेलन का आयोजन करने लगती है तो ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे मंत्रालय की सहायता के लिए कार्य में जुट गयी है। इस बात से आप अनुमान कर सकते हैं कि इस अन्तर्राष्ट्रीय युवक सम्मेलन से मुझे कितना अधिक हर्ष हो सकता है।

इस हर्षमय वातावरण में अपनी प्रसन्नता को व्यक्त करते समय यह बता देना भी उचित समझता हूं कि अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का यश अन्तर्राष्ट्रीय होता है, परन्तु छोटी सी भूल से होने वाला अपयश भी अन्तर्राष्ट्रीय बन सकता है।

युवजन-विभाग की स्थापना एक स्वागत योग्य शुभारम्भ है। इस विभाग के द्वारा मौरिशस आर्य समाज के युवक उन युवजन सदस्यों के समान संगठित और सुप्रशिक्षित होंगे जो अन्य संस्थाओं के साथ सम्बन्धित हैं। देश के सभी युवा-संगठन जो उत्तम कार्य कर रहे हैं, उनकी पूर्ति इस संगठन के द्वारा होगी।

इस संगठन को मेरे मंत्रालय से पूर्ण समर्थन मिलेगा, जिससे सभी वर्गों के सहयोग से सुदृढ़ राष्ट्र का विकास हो सके।

एक विनम्र निवेदन यह है कि मैं अपने को देश का एक साधारण सेवक समझता हूं जिसके लिए हमारे धर्म-ग्रंथ रामायण में लिखा है:

सिर भर जाऊं उचित अस मोरा।
सब से सेवक धर्म कठोरा॥

एक सेवक के नाते मैं भगवान से प्रार्थना करता हूं कि सम्मेलन हमारे संगठन के कार्यक्रम और विकास में आलोचना की अपेक्षा रचना की पद्धति का प्रेरक बने। इस बृहत् सम्मेलन में भाग लेने वाले सभी युवजन बहिन-भाई अपने समाज का उत्थान करने के लिए, दूसरों का सम्मान करने के लिए, तथा विश्व में शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के अनुकूल वातावरण का निर्माण करने के लिए कार्यक्रम तैयार करके अपने अपने देशों को सकुशल वापस लौटें।

एक बार फिर इस सम्मेलन के आयोजकों को धन्यवाद।

●●

कवि-सम्मेलन का अध्यक्षीय भाषण

मौरिशस में हिन्दी

—श्री क्षेमचन्द 'सुमन'—

सम्मेलन के सभापति सेठ प्रताप भाई शूरजी वल्लभदास, मौरिशस-निवासी तथा प्रवासी आर्य देवियो और सज्जनो !

सबसे पहले मैं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के अधिकारियों के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करता हूं, जिन्होंने यहाँ की आर्यसभा द्वारा आयोजित १२ वें सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन के अन्तर्गत होने वाले 'हिन्दी-कवि- सम्मेलन' की अध्यक्षता करने का गौरव प्रदान करके मुझे इस पुण्यभूमि 'लघु भारत' के दर्शनों का सौभाग्य सुलभ कराया है। यहां के अनेक हिन्दी-प्रेमियों और सुकवियों के होते हुए मेरे-जैसे अकिंचन व्यक्ति को भारत से लगभग ढाई हजार मील से अधिक दूर लाकर इस गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित करना उनकी सदाशयता और गुणग्राहकता ही है। हिन्द महासागर की पावन गोद में बसे प्राकृतिक सुषमा से परिपूर्ण इस द्वीप की झाँकी लेने और देवभूमि भारत को अपनी पितृ-भूमि मानने वाले प्रवासी बन्धुओं से भेंट करने का सुयोग मिलने का लोभ मैं संवरण न कर सका। इनके उस अज्ञात तथा आकर्षक प्रेम की पावन डोर में बंधा आज मैं अपने को सर्वात्मना कृतकृत्य अनुभव कर रहा हूं :

> **दूरेऽपि श्रुत्वा भवदीय कीर्तिम्,**
> **कर्णौ च तृप्तौ न च चक्षुषी मे।**
> **तयोर्विवादं परिहर्त्तुं कामः**
> **समागतोऽहं तव दर्शनाय ।**

दूर से आपकी कीर्ति को सुनकर मेरे कान तो तृप्त होगए थे, लेकिन मेरी आँखें अत्यन्त उद्विग्नता अनुभव कर रही थीं। इन दोनों के विवाद को शान्त करने के उद्देश्य से ही मैं आप लोगों के दर्शनार्थ यहाँ आया हूं ।

जब मैं उत्तर भारत की सुप्रसिद्ध आर्य शिक्षण-संस्था गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (हरिद्वार) में पढ़ता था तब अपने छात्र-जीवन में उपन्यास-सम्राट् मुन्शी प्रेमचन्द की 'परदेशी' नामक कहानी को पढ़कर मेरे मन में उसके प्रमुख नायक मंगरू और नायिका गौरा के प्रति जो सहज सहानुभूति जगी थी, वह अनुभूति ही मेरे मौरिशस-प्रेम की अनन्य प्रेरणा है। उस कहानी में प्रेमचन्द ने गोरों के दलालों की नारकीय चेष्टाओं का जो रोमांचकारी चित्रण किया है, वह वास्तव में किसी भी स्वाभिमानी व्यक्ति के मन को झकझोर देने वाला है। वे भारत की भोली-भाली जनता को बहका-फुसलाकर किस प्रकार मौरिशस ले आते थे और यहां पर उनके साथ कैसे-कैसे अमानुषिक अत्याचार करते थे इसकी झाँकी 'परदेशी' में पाकर उन दिनों मेरा बाल-मानस अत्यन्त उद्विग्न हो उठा था। सन् १८१० में अंग्रेजों द्वारा इस द्वीप पर अधिकार कर लिये जाने पर शर्तबन्दी प्रथा के अन्तर्गत कुली के रूप में सन् १८३४ में केवल ७४ भारतीय मौरिशस पहुंचे थे। वे आज इस देश की कुल जन-संख्या का ७० प्रतिशत होकर यहाँ के शासन की बागडोर संभाले हुए हैं, यह हमारे लिए गर्व और गौरव की बात है। लगभग आठ लाख की आबादी और ७२० वर्ग मील क्षेत्रफल वाला यह छोटा-सा देश १२ मार्च १९६८ को पूर्णतः स्वाधीन होकर देश के चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा अपने प्रधान मन्त्री डॉ० सर शिवसागर रामगुलाम के कर्मठ नेतृत्व में यहाँ का

शासन चला रहा है, यह हम सभी के लिए सुखकर विषय है। प्रवासी भारतीयों के इस अनवरत संघर्ष और त्याग-मय जीवन के पीछे आर्य समाज का जो योगदान है, वास्तव में वही इसका मूल प्रेरणा-स्रोत है। भारत में मौरिशस के उच्चायुक्त श्री रवीन्द्र घरभरण के ये शब्द हमारे इस कथन की सम्पुष्टि करते हैं :

"सबसे पहले तो आर्यसमाजी ही थे, जो त्रिशूल की धारा लेकर राजनीतिक क्षेत्र में निकले और सर्व-प्रथम उन्होंने ही यहाँ स्वतन्त्रता का शंखनाद बजाया। देश-भर में फैली हुई आर्यसमाज की शाखाओं के केन्द्र स्वाधीनता-आन्दोलन के मुख्य स्थल बन गए। बाद में ईसाई और मुस्लिम भाइयों ने भी हमारा साथ दिया···। इसी का सुफल हमें यह मिला है कि हमारे देश में सबमें भाईचारा, प्यार तथा एकता है; किसी प्रकार का झगड़ा, वैर या धार्मिक विद्वेष नहीं। सब मिलकर देश की उन्नति एवं समृद्धि के लिए कन्धे से कन्धा तथा कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ते हैं। यही कारण है कि हमारे देश का सामान्य से सामान्य मजदूर भी इतना समृद्ध है कि वह अपने बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाने के लिए दिल्ली तथा लन्दन-स्थित विश्वविद्यालयों में भेजता है।"

यह झांकी है उस देश की, जिसे हम 'लघु भारत' कहते हैं। इसके जन-जागरण की पृष्ठभूमि को जानने और समझने के लिए हमें जरा पिछले इतिहास के पन्ने पलटने होंगे। बुद्ध और महावीर की अहिंसा, ईसा की विनम्रता और मुहम्मद के धर्म-युद्ध के पावन संस्कारों को अपने जीवन में पूर्णतः ढालने वाले महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों के अधिकारों की लड़ाई लड़कर डर-बन से बम्बई लौटते हुए जब १९०१ में पूरे तीन सप्ताह तक आकस्मिक रूप से मौरिशस में ठहरे थे, तब से ही इस संघर्ष को नई प्रेरणा मिली। विलायत में पढ़े हुए बैरिस्टर गांधी को 'गीता' का पारायण करते देखकर मौरिशस के प्रवासी धर्म-प्राण भारतीयों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा और सारे द्वीप के लोग उनके दर्शनों के लिए टूट पड़े। गांधी जी के उस आगमन ने यहां की जनता में धर्म-शास्त्रों के अध्ययन और समाज-सेवा के कार्यों में प्राणपण से जुट जाने का अभूतपूर्व उत्साह उत्पन्न कर दिया। भारत से आते समय जो मजदूर अपनी धर्मपरायणता के कारण अपने साथ 'रामायण' लाये थे उससे जो धर्म-प्रेम उनमें कूट-कूटकर भरा था, गीता के पारायण से वह 'कर्मठता' की ओर उन्मुख हो गया। भगवान् राम की 'निष्ठा' और कर्मवीर कृष्ण के 'कर्मयोग' ने मिलकर यहाँ के निवासियों में अपनी संस्कृति के प्रति जो प्रेम जगाया था बाद में वह 'आर्यसमाज' के सुधारवादी आंदोलन के प्रभाव से और भी सुपुष्ट हो गया।

जहाँ गांधी जी ने प्रवासी भारतीयों के अधिकारों के लिए लड़ने का काम किया वहाँ आर्यसमाज ने उन लोगों में पुण्यभूमि भारत के प्रति अनुराग उत्पन्न करके उन्हें आर्य संस्कृति की रक्षा के लिए अग्रसर किया। आर्यसमाज के कार्यों और उसकी उपयोगिता का वर्णन भारत-भक्त दीनबन्धु एण्ड्रूज ने महात्मा गांधी को लिखे एक पत्र में इस प्रकार किया था :

"भारत में आर्यसमाज ही एक ऐसी संस्था है, जो प्रवासी भारतीयों की धार्मिक आकांक्षाओं की तृप्ति, सामाजिक त्रुटियों का निवारण और राष्ट्रीय भावनाओं का उद्दीपन कर सकती है। उपनिवेशों में प्रवासी भारतीयों के लिए आर्यसमाज जो कुछ कर रहा है, उसका मेरे हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा है। आर्यसमाज ही एक ऐसी संस्था है जो पुण्यभूमि भारत के प्रति प्रवासियों के हृदय में अनुराग पैदा करती है और पुरातन आर्य संस्कृति (जिस पर प्रत्येक भारतीय का जन्म-सिद्ध अधिकार है) के हित की रक्षा पर विशेष ध्यान देती है। उपनिवेशों में आर्यसमाज के द्वारा वैदिक धर्म और आर्य संस्कृति का प्रचार तथा रक्षण हुआ है। आर्यसमाज में जीवन, शक्ति और उत्साह है। इसका भविष्य उज्ज्वल है। भारत की जो संस्थाएं प्रवासी भारतीयों की सेवा कर सकती हैं, उनमें आर्य-समाज से बढ़कर क्रियाशील और शक्तिशाली दूसरी कोई संस्था नहीं है।"

गांधी जी की उस यात्रा से मौरिशस की जनता में अपने अधिकारों के लिए लड़ने की जो चेतना जगी थी वह उस समय और भी अधिक फलीभूत हुई जब उनकी प्रेरणा पर १९०७ में मणिलाल डाक्टर मौरिशस में आए। वे गांधी जी के अनन्य मित्र और अनुयायी थे और उन्हीं

के द्वारा निर्दिष्ट प्रणाली तथा आदर्शों पर चलते थे। उनके राजनैतिक भाषणों में यहां की सरकार की खुली आलोचना होती थी और वे प्रायः अपने सभी भाषण हिन्दी में देते थे। मणिलाल जी ने केवल यहां की सरकार की आलोचना नहीं की, प्रत्युत यहाँ के सार्वजनिक स्कूलों में भारत की प्रमुख भाषाओं के पढ़ाये जाने की भी मांग की। यही नहीं, उन्होंने मौरिशस की जनता को संगठित करने और उस तक अपने विचारों को पहुंचाने के उद्देश्य से 'हिन्दुस्तानी' नामक एक द्विभाषी साप्ताहिक पत्र भी निकाला। पहले यह गुजराती और अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित हुआ, किन्तु बाद में उन्होंने अधिक लोगों तक अपने विचार पहुंचाने के उद्देश्य से गुजराती के स्थान पर हिन्दी कर दी और इसके माध्यम से अपने संघर्ष को आगे बढ़ाया। उनके विचारों का परिचय 'हिन्दुस्तानी' के पहले ही अंक के सम्पादकीय लेख की इन पंक्तियों से भली भांति मिल जाता है :

"केवल अपने निजी लाभ के लिए कोई मनुष्य या कोई जाति किसी दूसरे मनुष्य या दूसरी जाति को नैतिक दृष्टि से न तो दास बना सकती है, न अधिकार में रख सकती है और न शोषण ही कर सकती है।"

उनके इस लेख का सुपरिणाम यह हुआ कि वहां की जनता में संघर्ष के लिए वातावरण तैयार हो गया और उन्होंने पंजाब से आये हुए कुछ भारतीय जेल वार्डरों के सहयोग से सन् १९१० में पोर्ट लुई में आर्यसमाज की स्थापना की। जिस प्रकार भारत से चलते समय लगभग दो शताब्दी पूर्व भारतीय मजदूर इस द्वीप में आते समय अपने साथ 'रामायण' और 'गीता' की पोथियां लेते आए थे और उनके कारण उनमें भारतीय संस्कृति के प्रति असीम अनुराग था, जो बाद में धीरे-धीरे बढ़कर राष्ट्र-प्रेम में परिवर्तित हो गया; उसी प्रकार वे वार्डर भारत से आते समय अपने साथ महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के दो अमर ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' और 'संस्कार विधि' १९०२ में अपने साथ लेते आए थे। उक्त दोनों ग्रंथ श्री खेमलाल जी और श्री गुरुप्रसाद दलजीतलाल के हाथ पड़ गए, जिसका सुपरिणाम यह हुआ कि यह दोनों सज्जन सर्वात्मना आर्यसमाज के कार्य में लग गए और बाद में मणिलाल डाक्टर को भी इनका सहयोग मिल गया। 'रामायण' और 'महाभारत' का जो पारायण यहां की जनता अपने 'बैठका' में किया करती थी और उससे जो संस्कार उसमें प्रस्फुटित हुए थे, 'आर्यसमाज' के सत्संगों ने उन्हें और भी नया रूप दिया। उनके माध्यम से यहाँ की जनता में हिन्दी के प्रति अभूतपूर्व प्रेम जागृत हुआ और आर्यसमाज ने हिन्दी के अध्ययन तथा अध्यापन के लिए १९३५ में 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की। इस सभा की स्थापना में मणिलाल डाक्टर के अतिरिक्त उन दिनों के अनेक आर्य बन्धुओं का भी सहयोग रहा था। सन् १९३५ का वर्ष इस देश के इतिहास में इसलिए भी विशेष महत्व रखता है कि इस वर्ष यहाँ के प्रवासी भारतीयों ने इस भूमि पर अपने आगमन की शताब्दी का उत्सव धूमधाम से मनाया था और इसी वर्ष इंग्लैंड में काफी समय तक अध्ययन करने के पश्चात् इस देश के पहले प्रधानमन्त्री डा० सर शिवसागर रामगुलाम भी मौरिशस लौटे थे।

मौरिशस की राजधानी पोर्ट लुई में 'आर्य सभा' का जो विशाल भवन है उसके अन्तर्गत इस समय सारे देश में लगभग ३०० आर्य समाजें जन-जागरण का कार्य कर रही हैं। मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि प्रायः सभी आर्य समाजों का अपना भवन है और उसमें लड़कों तथा लड़कियों के विद्यालय चलते हैं। अनेक आर्य हाई स्कूलों के अतिरिक्त यहां के डी० ए० वी० कॉलेज ने हिन्दी के प्रचार तथा वैदिक धर्म के प्रसार का जो कार्य किया है, वह वास्तव में गौरव की बात है। यह आर्य समाज के कार्यकर्ताओं और नेताओं का ही प्रताप है कि यहाँ के रेडियो-स्टेशन से प्रत्येक सप्ताह 'वेदोपदेश' प्रसारित किया जाता है।

मौरिशस में आर्य समाज के प्रचार-प्रसार और प्रवासी भारतीयों को एक मंच पर संगठित करने के प्रसंग में मणिलाल डाक्टर के उपरान्त डॉ० चिरंजीव भारद्वाज का नाम विशेष उल्लेखनीय है। वे मणिलाल जी के निमन्त्रण पर १५ दिसम्बर, १९११ को बर्मा से यहाँ आए थे। उन्होंने ही यहां के सर्व श्री भोला मास्टर, माधोलाल, गयासिंह और शिवशरण आदि सज्जनों के सहयोग से सर्वप्रथम सन्

१९१२ में 'आर्य परोपकारिणी सभा' की स्थापना की और इस सभा के माध्यम से अपने प्रचार-कार्य को आगे बढ़ाया। इसी सभा का नाम बाद में 'आर्य सभा' हो गया, जिसके निमन्त्रण पर यहाँ यह 'आर्य महा सम्मेलन' हो रहा है।

डॉ० चिरंजीव भारद्वाज के आर्यसमाज के सिद्धान्तों का प्रचार करने के उद्देश्य से जो महानुभाव मौरिशस आए उनमें स्वा० स्वतंत्रतानन्द का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। स्वामी जी के प्रभाव से यहाँ न केवल वैदिक धर्म के प्रचार का कार्य आगे बढ़ा, बल्कि हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की दिशा में भी प्रशंसनीय प्रगति हुई। स्वामी स्वतन्त्रतानन्द के भारत लौटने के पश्चात् जो आर्य विद्वान् समय-समय पर मौरिशस में आकर भारतीय संस्कृति के प्रचार और सामाजिक जागरण के क्षेत्र में कार्य करते रहे उनमें सर्वश्री मंगलानन्द पुरी, मेहता जैमिनी, स्वामी विज्ञानानन्द श्रीकृष्ण शर्मा, कन्हैयालाल मिश्र भजनोपदेशक, स्वामी ध्रुवानन्द, स्वामी अखिलानन्द, स्वामी आनन्द भिक्षु, स्वामी विद्यानन्द 'विदेह', रामरतन विद्यार्थी, नारायणदत्त सिद्धान्त भूषण, पं० उषर्बुध, पं० जगन्नाथ, महात्मा आनन्द स्वामी, स्वामी अभेदानन्द तथा स्वामी सत्यप्रकाश आदि के नाम विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। **महिला-जागरण के क्षेत्र में डॉ० चिरंजीव भारद्वाज की धर्मपत्नी श्रीमती सुमंगली देवी ने** जो कार्य किया था, उसीका सुपरिणाम यह है कि आज इस द्वीप की महिलाएँ प्रत्येक क्षेत्र में बढ़-चढ़कर भाग ले रही हैं। इन आर्य महनुभावों के अतिरिक्त जिन मनीषियों ने यहाँ भारतीय संस्कृति के प्रचार और प्रसार के कार्य को आगे बढ़ाया, उनमें स्वामी कृष्णानन्द का नाम भी अविस्मरणीय है। उनके पुण्य-प्रताप से ही आज मौरिशस के सभी हिन्दू-परिवारों में 'रामचरित मानस' की प्रतियाँ पहुंची हैं।

आर्यसमाज के माध्यम से इस द्वीप में सांस्कृतिक जागरण और हिन्दी प्रचार का जो कार्य हुआ उसका सुपरिणाम यह भी है कि आज मौरिशस एक स्वतन्त्र देश के रूप में उभरकर सामने आया है। एक समय ऐसा था कि 'हिन्दी' और 'आर्यसमाज' ही यहाँ के राष्ट्रीय जागरण के मेरुदण्ड थे। यहाँ के प्रवासी भारतीयों ने हिन्दी-प्रचार को माध्यम बनाकर राष्ट्रीय और सामाजिक जागरण के लिए जो अथक कार्य किया उसके फलस्वरूप ही आज इस द्वीप में अनेक हिन्दी विद्यालयों और संस्थाओं की संस्थापना होकर अभिनन्दनीय कार्य हो रहा है। ऐसे महानुभावों में सर्वश्री तरसी मुलुराम सामी, गिरधारी भगत, पंडित काशीनाथ, पंडित रामग्रवध शर्मा, पंडित देवदत्त शर्मा, राजकुमार गंगाधर, पंडित गयासिंह, श्रीनिवास जगदत्त, उमाशंकर गिरजानन, भगतबन्धु (लेखमन, रामलाल और सुरजूप्रसाद), अनिरुद्ध द्वारिका, वासुदेव विष्णुदयाल, जयनारायण राय, नेमनारायण गुप्त, पंडित आत्माराम, प्रो० रामप्रकाश, श्री तिलक कालीचरण तथा मोहनलाल मोहित आदि सज्जनों के नाम विशेष परिगणनीय हैं। इनमें से श्री वासुदेव विष्णुदयाल को उनकी हिन्दी भाषा और साहित्य-सम्बन्धी सेवाओं के उपलक्ष में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की ओर से 'साहित्य-वाचस्पति' की मानद उपाधि से विभूषित किया गया है और मोहनलाल मोहित तो यहाँ की आर्यसमाज के प्राण ही हैं, उनको दूर हटाकर मारीशस में 'आर्यसमाज' के स्वरूप की कल्पना करना 'आकाशकुसुम' की तरह असम्भव है। श्री जयनारायण राय ने **'हिन्दी प्रचारिणी सभा' के कार्य में अपने को इतना रमा-पचा दिया कि वे उसीके एक अंग हो गए हैं। उक्त सब महानुभावों की अटूट** निष्ठा और अभूतपूर्व त्याग का ही दूसरा नाम 'हिन्दीमय मौरिशस' है। इनके उल्लेख के बिना मौरिशस की हिन्दी-सम्बन्धी प्रगति का इतिहास अधूरा ही रह जायगा।

आर्यसमाज के द्वारा संचालित विद्यालयों के अतिरिक्त 'हिन्दी प्रचारिणी सभा' भी यहाँ हिन्दी के जो विद्यालय चला रही है उन सबमें हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, आर्य विद्या परिषद् अजमेर और अखिल भारतीय आर्य (हिन्दू) सेवा संघ दिल्ली की परीक्षाओं के लिए भी छात्र तैयार किये जाते हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि आठ लाख की जनसंख्या वाले इस देश में लगभग ५३ प्रतिशत हिन्दू है और इनमें से सभी प्रदेशों की भाषाओं—तमिल, तेलुगु, मराठी और गुजराती का व्यवहार करने वाले परिवारों में भी हिन्दी का प्रचलन प्रचुरता से होरहा है। हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी, फ्रेंच और क्रियोल भाषा का प्रयोग भी यहाँ प्रायः होता है। राजभाषा अंग्रेजी का प्रच-

लन जन-साधारण में उतना नहीं होता, जितना कि 'भोजपुरी' बोली की यहाँ की जनता में गहरी पैठ है। यहाँ तक कि चीनी मूल के प्रवासी भी बोल-चाल में भोजपुरी का ही प्रयोग करते है। इस देश की राष्ट्रीय चेतना के साथ हिन्दी के प्रचार-प्रसार और उसके विकास का कार्य इस प्रकार जुड़ गया है कि इसे मौरिशस-निवासी अपने जीवन का सर्वोच्च और पावन कर्त्तव्य समझते हैं। यहाँ तक कि शासन का सूत्र जिन लोगों में हाथों में है उनमें भी अनेक हिन्दी-प्रेमी हैं। ऐसे महानुभावों में श्री सत्यकाम बुलेल का नाम अन्यतम है।

हिन्दी की इस व्यापकता का प्रभाव यहाँ तक हुआ है कि अब ऐसी पत्र-पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होने लगी हैं, जिनके माध्यम से यहाँ की नई पीढ़ी हिन्दी-लेखन की ओर उन्मुख होने लगी है। यहाँ के 'जनता' तथा 'आर्योदय' नामक साप्ताहिक तथा अर्ध-साप्ताहिक पत्रों के द्वारा हिन्दी के क्षेत्र में मौरिशस की सृजनात्मक शक्ति को जो दिशा मिली, उससे लेखन का क्षेत्र और भी प्रशस्त हुआ है। हिन्दी-पत्रकारिता को आगे बढ़ाने का कार्य सर्व प्रथम 'मौरिशस आर्य पत्रिका' ने किया था, जो मणिलाल डाक्टर के प्रेस से सन् १९११ में प्रकाशित हुई थी। उसके बाद 'जागृति' और 'आर्यवीर' नामक पत्रों ने वहाँ की जनता की रुचि को परिष्कृत करके हिन्दी-लेखन का मार्ग और भी प्रशस्त किया। किसी समय 'मौरिशस मित्र' और 'सनातन धर्मार्क' भी इस दिशा में अग्रणी का कार्य करते थे। यहाँ के लेखकों की सृजनात्मक प्रवृत्ति को प्रश्रय और प्रोत्साहन देने की दृष्टि से सन् १९६८ में मौरिशस की राजधानी पोर्ट लुई में 'हिन्दी परिषद्' की संस्थापना की गई। आज यह परिषद् राष्ट्रीय स्तर पर कार्य कर रही है और इसकी १८ शाखाएँ सारे द्वीप में साहित्य-सृजन को प्रोत्साहन दे रही हैं। परिषद् की ओर से इसी उद्देश्य से 'अनुराग' नामक एक त्रैमासिक पत्र भी लगभग चार वर्ष पूर्व प्रकाशित होना आरम्भ हुआ था जो अब भी सफलतापूर्वक अपने अभीष्ट पथ पर निर्विघ्न रूप से बढ़ रहा है। इसके माध्यम से मौरिशस की अनेक प्रतिभाओं के लिए हिन्दी-लेखन की ओर अग्रसर होने के जो द्वार खुले हैं, उससे उनको नया दिशाबोध मिला है। इसी प्रकार 'दर्पण' तथा 'आभा' नामक पत्र भी इस क्षेत्र में अभिन्दनीय प्रयास कर रहे हैं।

मौरिशस में हिन्दी भाषा और उसके साहित्य को लोकप्रिय बनाने में जो भूमिका आर्यसमाज और उसके नेताओं ने समय-समय पर प्रस्तुत की है, उसका ज्वलन्त इतिहास ही यहाँ की साहित्यिक चेतना का मूल आधार है। उसके नेताओं ने अपनी भावनाओं के प्रकटीकरण का माध्यम हिन्दी को बनाकर साहित्य-लेखन की जो नींव डाली थी, वास्तव में उसी पर यहां की साहित्यिक तथा सर्जनात्मक चेतना का भव्य प्रासाद खड़ा है। पंडित आत्माराम विश्वनाथ की 'मारीशस का इतिहास' और 'हिन्दू मारीशस' नामक पुस्तकें उस समय प्रकाशित हुईं थीं, जब मौरिशस की जनता राजनीतिक स्वाधीनता की लड़ाई लड़ते हुए साहित्यिक क्षेत्र की ओर बढ़ने के लिए अँगड़ाई लेरही थी। इनके बाद मौरिशस के सबसे अधिक उल्लेखनीय हिन्दी-लेखक प्रो० वासुदेव विष्णुदयाल की 'मेरी कोठरियां' और 'मेरी बंगाली कोठरियाँ' नामक दो आत्मकथात्मक पुस्तकें ऐसी हैं, जिनमें उनकी लेखन-शैली सर्वथा नये रूप में प्रतिच्छायित हुई है। उनकी अन्य पुस्तकों में 'कुछ महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ', 'विष्णुदयाल रचनावली' तथा 'गीता का अद्भुत सन्देश' आदि उल्लेखनीय हैं। उपन्यास-लेखन की दिशा में भी उन्होंने अपनी प्रतिभा का प्रचुर प्रयोग किया है। उनका 'पहला कदम' नामक उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई ऐसी रचना है जिसमें उनके औपन्यासिक रचनाकार की प्रतिभा झाँकती दृष्टिगत होती है। उपन्यास लेखन के क्षेत्र में श्री अभिमन्यु अनत 'शबनम' का नाम ऐसा है जिनसे भारतीय पाठक भी पूर्णतया परिचित हैं। उनकी रचनाएँ भारत की पत्र-पत्रिकाओं में ससम्मान प्रकाशित होती हैं। उनका 'चौथा प्राणी' नामक उपन्यास 'आजकल' में धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ हैं। इस उपन्यास के अतिरिक्त उनके 'और नदी बहती रही', 'आन्दोलन', 'एक बीघा प्यार', 'जम गया सूरज' तथा 'लहलहाती पुकार' आदि विशेष उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

इनमें से अधिकांश भारत के प्रकाशकों ने ही प्रकाशित किये हैं।

कविता के क्षेत्र में श्री ब्रजेन्द्रकुमार भगत 'मधुकर' का नाम सबसे पुराना है। वे भोजपुरी में भी रचनाएँ करते हैं। पटना की साहित्य-परिषद् ने उनकी 'मधु कलश' नामक काव्य-कृति पर ५०० रुपये के साथ स्वर्ण-पदक भी प्रदान किया है। उनकी 'मधुपर्क', 'वीरगाथा', 'रागिनी', 'मधु-करी', रस-रंग', 'अमर सन्देश', गुँजन' तथा 'हमारा देश' आदि रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। श्री सोमदत्त बखौरी का नाम भी भारतीयों के लिए नया नहीं है। उनकी 'मुझे कुछ कहना है' तथा 'बीच में बहती धारा' नामक कृतियों का हिन्दी-प्रेमियों में पर्याप्त स्वागत हुआ है। उक्त दोनों ही कवि भारत की यात्रा कर चुके हैं और मुझे इनकी रचनाओं को सुनने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है। श्री बखौरी की भारत-यात्रा-सम्बन्धी पुस्तक 'गंगा की पुकार' का प्रकाशन भारत के शिक्षा-मंत्रालय के सहयोग से आभा प्रकाशन दिल्ली ने किया है। यह अत्यन्त हर्ष तथा गौरव की बात है कि श्री भगत और बखौरी को उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए मौरिशस की सरकार ने सम्मानित किया है। मौरिशस के अन्य उल्लेखनीय कवियों में सर्वश्री रविशंकर कीलेशर, ठाकुर-दत्त पाण्डेय, अभिमन्यु अनत 'शबनम', जनार्दन कालिचरण सचित, हरिनारायण सीता, मुनीश्वरलाल चिन्तामणि, इन्द्रदेव भोला, मोहनलाल हरदयाल तथा मोहनलाल ब्रज-मोहन आदि के नाम प्रमुख हैं। मौरिशस-प्रवासी हिन्दी-कवियों की काव्य-प्रतिभा का सहज अनुमान करने के लिए यहाँ की 'हिन्दी परिषद्' की ओर से प्रकाशित 'प्रवासी के स्वर' नामक काव्य-संकलन तथा कलकत्ता की 'अक्षर' नामक पत्रिका का 'मारीशस की हिन्दी कविताएँ' नामक विशेषांक एक उज्ज्वल तथा निर्मल दर्पण का काम करते हैं। पूजाचन्द नेमा के सम्पादन में मौरिशस के उदीयमान कवियों की कविताओं का जो बाल-संकलन प्रकाशित हुआ है, वह भी उल्लेखनीय है। इस सन्दर्भ में कुछ ऐसे प्राचीन कवियों के नाम भी उल्लेखनीय हैं जिनकी रचनाओं ने यहाँ की काव्य-रचना के पथ को प्रशस्त किया है। ऐसी विभूतियोंमें सर्वश्री लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी 'रसपुंज', हरिप्रसाद रिसाल मिश्र तथा रामरत्न रिसाल मिश्र आदि की सेवाएँ स्मरणीय हैं।

कहानी-लेखन के क्षेत्र में जो प्रतिभाएं इधर उभर कर सामने आई हैं उनमें सर्वश्री हरिनारायण महावीर, श्रीमती भानुमति नागदान, रामदेव धुरन्धर, ईश्वर जागासिंह, दामोदर सामोरी, जनार्दन कालिचरण, दीपचन्द बिहारी, सूर्यदेव सिबरत, रघुनाथ दयाल, वेणीमाधव, रामखेलावन, सोनालाल नेमधारी, मुनीश्वर चिन्तामणि, मोती तोरल, केशवदत्त, चिन्तामणि और धर्मवीर घूरा आदि की साधना प्रशंसनीय है। 'मारीशस-हिन्दी-लेखक संघ' की ओर से 'नये अंकुर' नाम से जो कहानी-संकलन १९६७ में प्रकाशित हुआ था, उसे देखकर इस द्वीप के कथाकारों की प्रतिभा का सहज अनुमान हो जाता है। श्री अभिमन्यु अनत 'शबनम' पहले कहानीकार हैं और बाद में वे उपन्यास-कार के रूप में प्रतिष्ठित हुए। नाटक-लेखन की ओर भी यहाँ के लेखकों का ध्यान गया है और इस क्षेत्र में उन्हें अभूतपूर्व सफलता मिली है। इस क्षेत्र में सर्वश्री जय-नारायण राय की 'जीवन संगिनी', ब्रजेन्द्रकुमार भगत 'मधुकर' की 'आदर्श बेटी' तथा 'नवजीवन' आदि कृतियाँ उल्लेख-योग्य हैं। नवोदित नाटककारों में श्री ठाकुरदत्त पाण्डेय की रचना-प्रतिभा भी प्रशंसनीय है। निबन्धलेखन और आलोचना की ओर भी यहाँ के लेखक उन्मुख हुए हैं। इस दिशा में सर्वश्री प्रसाद गणपत की 'जीवन दीप' और शिवलाल की 'मोती निबन्ध माला' नामक कृतियाँ पठ-नीय हैं। श्री जयनारायण राय की 'मारीशस में हिन्दी भाषा का संक्षिप्त इतिहास' तथा श्री मुनीश्वरलाल चिन्तामणि की 'मौरिशस का हिन्दी साहित्य तथा अन्य निबन्ध' नामक आलोचनात्मक पुस्तकों से दोनों लेखकों की समीक्षा-शैली का परिचय मिलता है।

यह अत्यन्त हर्ष और सौभाग्य का विषय है कि मौरि-शस-स्थित 'भारतीय उच्चायोग' भी मौरिशस में हिन्दी के उत्थान और विकास के लिए पूर्ण प्रयत्न कर रहा है। भारत सरकार की ओर से समय-समय पर वहाँ की जनता में भारतीय संस्कृति और साहित्य के प्रति सद्-भावना उत्पन्न करने के उद्देश्य से जो कवि तथा साहित्यकार मौरिशस आए उनमें डॉ० रामधारीसिंह 'दिनकर', डॉ०

शिवमंगलसिंह 'सुमन', श्री बालकवि बैरागी, श्री लल्लन-प्रसाद व्यास, श्री यशपाल जैन तथा महावीर अधिकारी आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भारतीय उच्चायोग के प्रमुख श्री कृष्णदयाल शर्मा भी यहां की हिन्दी-सम्बन्धी प्रगति में पर्याप्त रुचि लेते हैं। आयोग के भूतपूर्व सांस्कृतिक सहचारी श्री वीरेन्द्र शर्मा ने अपने कार्य-काल में यहाँ की साहित्यिक चेतना को प्रस्फुटित करने की दिशा में उल्लेखनीय सहयोग दिया था। मौरिशस की महिमा में लिखी गई उनकी एक कविता की ये पंक्तियाँ उनके मौरिशस-प्रेम की परिचायिका हैं :

देव लोक-सा जो वैभव में,
भू-मण्डल का प्राण है।
हिन्द-महासागर का तारा,
सुन्दरता की खान है॥
इसीलिए इस लघु भारत पर,
भारत देता जान है।
मारीशस-भारत की मैत्री,
सच्ची और महान् है॥

श्री शर्मा की भावना का प्रतिफलन यहाँ के प्रधान मंत्री डॉ० शिवसागर रामगुलाम ने अपनी सन् १९७२ की भारत की सद्भावना-यात्रा के समय दिये गए अपने भाषण में किया था। उनकी ये पंक्तियाँ इस बात का ज्वलन्त प्रमाण हैं :

"जब हम लोग भारत आते हैं तो ऐसा लगता है कि हम एक तीर्थयात्रा पर निकले हैं, क्योंकि हमारे यहाँ के निवासियों में से अधिकांश की यही जन्मभूमि है। मौरिशस में भारत के निवासियों के प्रति विशेष आदर-भाव है।"

वास्तव में मौरिशस-निवासियों के इसी आदर-भाव ने अपने यहाँ यह सम्मेलन बुलाकर अपने भारत-प्रेम का परिचय दिया है। मैं अपने देश के सभी बुद्धिजीवियों तथा साहित्यकारों की ओर से 'लघु भारत' मौरिशस के सभी निवासियों का हार्दिक अभिनन्दन करता हुआ यह कामना करता हूं :

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्॥

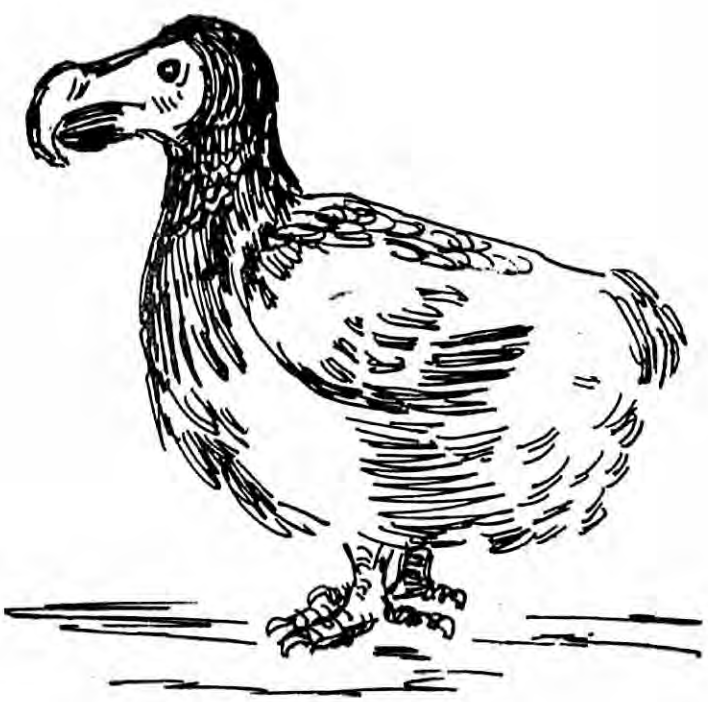

आर्यमहिलासम्मेलन का अध्यक्षीय भाषण

—श्रीमती शकुन्तला देवी, मेरठ—

माननीया बहिनो व सम्मानित भाइयो !

आज मौरिशस के भाई-बहिनों का दर्शन पाकर मेरा हृदय आनन्द-विभोर हो रहा है। आपकी आर्य सभा ने भारत के आर्य भाई बहिनों को निमन्त्रित किया, इसके लिये आपके निमन्त्रण पर शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपना १२ वां सार्वदेशिक आर्य महा-सम्मेलन मौरिशस के रमणीक स्थल में आयोजित किया और मुझे महिला सम्मेलन की अध्यक्षता करने का आदेश दिया, इसके लिये मैं बहुत कृतज्ञ हूं।

विश्व-बन्धुत्व बढ़ाने के लिए यह एक ऐतिहासिक घटना और प्रथम प्रयास है। हम सभी भारतीय प्रतिनिधि आपका स्नेह व दर्शन पाकर कृतकृत्य हुए हैं और यहाँ "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना जागृत करने आये हैं। सारा विश्व हमारा परिवार है। वेद मानव मात्र की मूल्यवान् सम्पत्ति है। उसका प्रचार व प्रसार करना प्रत्येक आर्य का परम धर्म है।

महर्षि दयानन्द ने हमें वैदिक आलोक प्रदान किया। कर्म कांड की संकुचित भावना से निकाल कर ज्ञान, कर्म, उपासना, तीनों के समन्वय से सब देशवासियो को ही नहीं, वरन् समस्त विश्व को ओत-प्रोत किया और यह घोषणा की कि "ज्ञान के बिना कर्म और कर्म के बिना ज्ञान अधूरा है," अतः यह प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह ज्ञान-पूर्वक कर्म करता हुआ प्रभु की उपासना में आनन्द अनुभव करे। वेद ने समस्त स्त्री पुरुषों को समान अधिकार दिया है, इसमें किसी प्रकार का भेदभाव करना उचित नहीं।

विद्वद्गण !

यद्यपि यह बात सभी जानते हैं कि स्त्री व पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं, फिर भी पुरुष की प्रवृत्ति सदैव शासन करने की रहती है जिससे स्त्री को यह अनुभव होता है कि उसकी कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं है, उसे दासत्व का जीवन बिताना ही पड़ेगा। कुछ स्वार्थी पण्डितों ने तो यहाँ तक अन्याय किया कि महिलाओं को वेद पढ़ने, सुनने, यज्ञ करने व विद्या पढ़ने तक से वंचित कर दिया। उनके "स्त्री-शूद्रौ नाधीयाताम्" के नारे ने स्त्रियों को अविद्या-अन्धकार के गहरे गर्त में ढकेल दिया। बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह जैसे दूषण समाज में व्याप्त हो गए। अनेक नन्हीं बच्चियाँ, जिन्हें यह भी ध्यान नहीं था कि मांग में सिन्दूर कब लगा, करुण क्रन्दन करती हुई सामाजिक विभीषिकाओं की शिकार हो गईं। ६० वर्ष के वृद्ध के साथ विवाह करके तो आजन्म वैधव्य जीवन बिताना अनिवार्य ही था, क्योंकि समाज ने पुनर्विवाह करने का अधिकार ही नहीं दिया था। सदियों तक अज्ञान-अविद्या व रूढ़िवाद में फंसकर नारी जाति कराहती रही। पतिव्रता-धर्म का ढोंग बना कर सती-प्रथा का प्रचलन भी कम लोमहर्षक नहीं था। ऐसी दशा में महर्षि दयानन्द के कोमल हृदय को अत्यन्त ठेस लगी और उन्होंने डंके की चोट करके कहा कि कोई भी राष्ट्र तब तक उन्नति नहीं कर सकता जब तक वहाँ का नारी-समाज स्वतन्त्र, निर्भय, व शिक्षित न हो। राष्ट्र-निर्माण में नारी का महत्वपूर्ण स्थान है उसकी, कर्म-शृंखलाओं के पीछे ही राष्ट्र का उत्थान व पतन छिपा रहता है। उन्होंने नारी-शिक्षा के द्वार खोलकर अनेक

विद्यालयों व गुरुकुलों की स्थापना की और वेद पढ़ने व यज्ञ करने का अधिकार देकर नारी को सम्मानित किया। हम सब उनके ऋणी हैं। सत्यार्थप्रकाश में लिखा हुआ उनका यह वाक्य—

"मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद" हमारी अमर थाती है।

'माता निर्माता भवति' यह एक ऐसा सूत्र है जिससे कोई भी विरोध प्रकट नहीं कर सकता। नारी ने ही विश्व को महर्षि दयानन्द, महात्मा गांधी, राष्ट्र कवि टैगोर, ईसा, मोहम्मद जैसी अनेक विभूतियां देकर उसका गौरव बढ़ाया। मनुस्मृति के रचयिता महाराज मनु ने भी लिखा था—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः

अर्थात् जहाँ नारियों का सत्कार होता है वहाँ देवता निवास करते हैं। स्त्री शक्ति की केन्द्र है, उस निहित शक्ति का प्रकाश में आना अनिवार्य है, क्योंकि राष्ट्र रूपी भवन के दो खम्भे स्त्री और पुरुष ही माने जाते हैं। यदि एक खम्भा पथभ्रष्ट होने लगे तो स्त्री अपने तप, त्याग, सेवा, सहन-शक्ति और प्रेम से उसे सत्य मार्ग पर ले आती है। यदि स्त्री सुदृढ़ और बुद्धिमती न हो तो यह भवन कैसे स्थिर रह सकता है। मातृशक्ति के रूप में जब नारी अपना महत्व समझ लेती है तो वह कह उठती है—

'अहं केतुरहं मूर्धा अहं विश्वस्य वाचिनी ।। वेद ।।

—हे राष्ट्र के लोगो, मैं एक उन्नत पताका के समान हूं, मैं ही राष्ट्र का मस्तिष्क हूं और मैं ही विश्व का निर्माण करने वाली हूं, मेरी ओर बुरी दृष्टि से देखने वाला मनुष्य कभी सुरक्षित नहीं रह सकता।

आज जिस प्रकार जीवन के नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है उससे सभी परिचित हैं। आर्य समाज चरित्र निर्माण करने वाली संस्था है। उसे ही इन नैतिक मूल्यों को उन्नत करना है। गांधी जी कहा करते थे, "आर्य समाज ने नारियों को कर्म क्षेत्र में आगे बढ़ाया है, इसलिये आर्य समाज की कर्मठ महिलाओं को पुरुषों के साथ इस दिशा में कन्धे से कन्धा भिड़ाकर काम करना है, क्योंकि शारीरिक शक्ति पुरुष में भले ही अधिक हो, लेकिन नैतिकता में नारियाँ ही अग्रणी हैं।" इस सम्मेलन में मैं सभी बहनों को आवाहन करके यह निवेदन करना चाहती हूं कि वह संगठित शक्ति को लेकर आगे बढ़ें और आर्यसमाज की अधिक से अधिक सदस्या बनकर विश्व के अन्दर से बुराइयों को दूर करने का दृढ़ संकल्प ले। किसी कवि ने कहा है:—

जो भरा नहीं है भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है, पत्थर है, जिसमें मानव का प्यार नहीं ।।

वेद कहता है "केवलाघो भवति केवलादी" अकेला खाने वाला पापी है। सभी को विश्वप्रेम से प्रेरित होकर कार्य करना चाहिए।

आज विश्व में नये-नये आविष्कार हो रहे हैं। एटम-बम और हाइड्रोजन बम का निर्माण हो रहा है। अल्प से अल्प समय में अधिक मनुष्यों का ध्वंस करना ही इनका लक्ष्य है। क्या इनसे शांति स्थापित होगी ? क्या ये युद्ध की विभीषिकाओं का अन्त होने देंगे ? यह एक ज्वलन्त प्रश्न है। मनुष्य सर्वनाश के कगार पर खड़ा होकर विज्ञान-युग के विस्फोट के रूप में एक समस्या प्रस्तुत करने में समर्थ है, किन्तु क्या हमने कभी सोचा है कि अध्यात्मवाद और शान्ति के बिना इन विनाशकारी समस्याओं का समाधान होना सम्भव नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी सभी शांति की आवश्यकता को अनुभव करते हैं। भारत ने तो सदैव ही राष्ट्रीय एकता और शांति को महत्व दिया है परन्तु जातिवाद, प्रान्तीयता और भाषा-भेद के जो परिणाम हो रहे हैं वे किसी से छिपे नहीं हैं। ऐसे समय में एक कुशल नेतृत्व की आवश्यकता है। प्रेम, अहिंसा और संगठन के द्वारा दिलों को जोड़ने का काम हमें करना है। वेद की आज्ञा है : स्वयं जियो और दूसरों को जीने दो। मैं विज्ञान के विरोध में नहीं हूं, किन्तु इस बात की प्रबल समर्थक हूं कि उसका उपयोग निर्माण के लिए होना चाहिये, संहार के लिए नहीं। साथ ही आध्यात्मिक क्षेत्र में भी उन्नति करना अत्यन्त आवश्यक है।

बढ़ती हुई महंगाई को भी आज दृष्टि से दूर नहीं किया जा सकता। बेकारी की समस्या भी अत्यन्त गहन है। इन सभी का निराकरण अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि बेकारी और महंगाई मानसिक संतुलन को नष्ट करके युवक समाज को हतोत्साह कर रही हैं। कभी इसके परिणाम

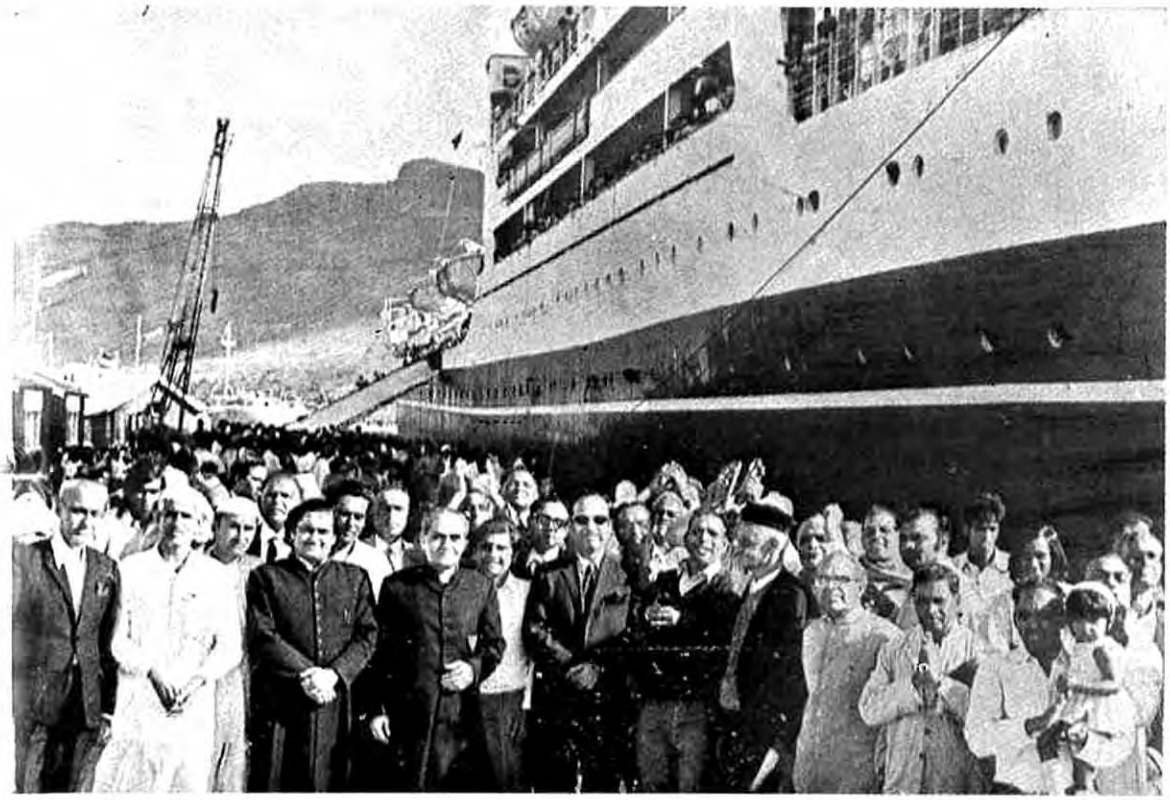

पोर्टलुई के बन्दरगाह पर भारतीय यात्रियों को विदाई देते हुए मौरिशस के आर्य नेता।
बीच में खड़े हैं भारतीय उच्चायुक्त श्री कृष्णदयाल शर्मा

भारतीय यात्रियों को विदाई देने के लिए उमड़ा जनसमूह।

पोर्टलुई के बन्दरगाह पर विदाई का वह दृश्य भी कितना करुणाजनक था !

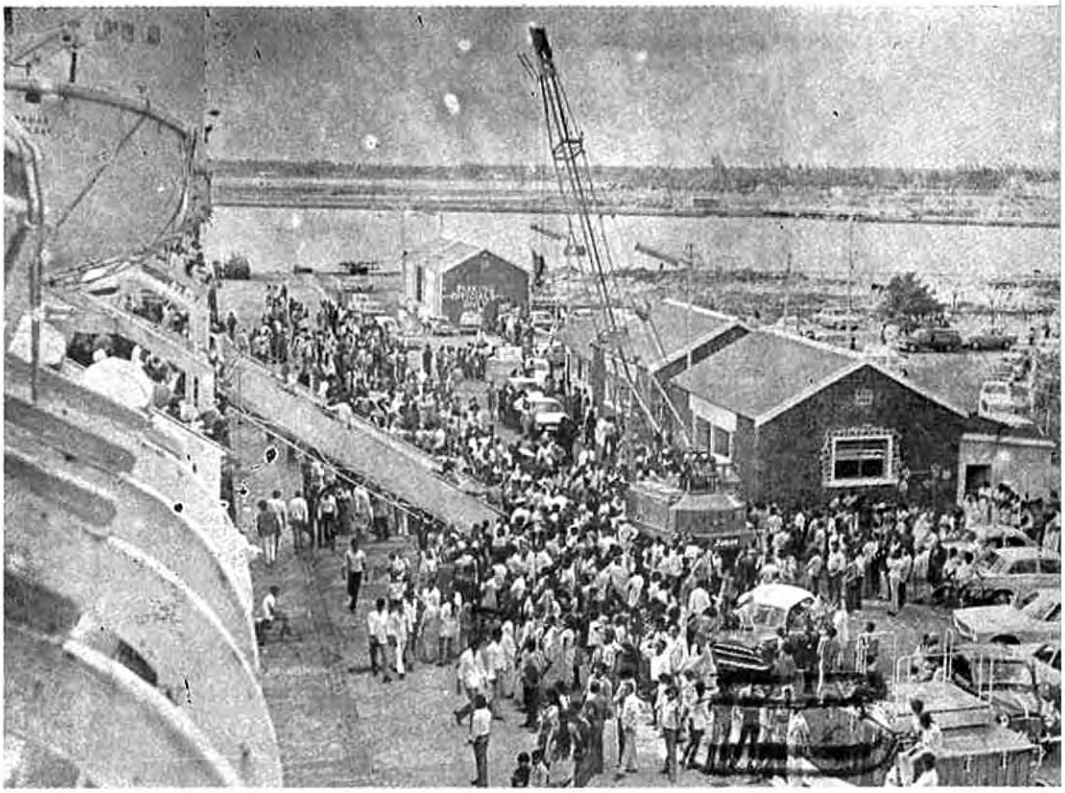

पोर्टलुई के मुख्य बाजार में से गुजरते जुलूस की एक झांकी

'अकबर' जलपोत के कप्तान श्री दुबे के साथ वार्ता-मग्न श्री रामलाल मलिक

दिल्ली के महापौर श्री केदारनाथ साहनी आर्य यात्री स्पेशल ट्रेन के वापिस पहुंचने पर नई दिल्ली स्टेशन पर श्री ओम्प्रकाश त्यागी का स्वागत करते हुए

जनता द्वारा सार्वदेशिक सभा के महामंत्री श्री त्यागी का नई दिल्ली स्टेशन पर स्वागत

'अकबर' जलपोत के अधिकारी कुछ विशिष्ट यात्रियों के साथ

बहुत भयंकर और लज्जाजनक हो जाते हैं। हमें इस दिशा में भी अनवरत प्रयत्न करना है, क्योंकि गीता में कहा है—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन

—ऐ मनुष्य ! तू कर्म करने में पूर्ण स्वतन्त्र है, अतः पुरुषार्थ करने में कमी न कर, फल जो सामने आये उसी में सन्तोष कर, भूलकर भी उद्विग्न न हो।

वेदों में आदेश है—

उद्यानं ते पुरुष नावयानम्।

अयं मे हस्तो भगवान् अयं वे भगवत्तरः।

कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः।

अतः मुझे विश्वास है कि हमारा यह क्रान्तिकारी संगठन वर्तमान चुनौतियों का उत्तर देने में समर्थ होगा।

अन्त में मेरा आपसे निवेदन है कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में एकता को दृढ़ रखते हुए सारे विश्व में स्नेह का प्रसार करने और बुराइयों को दूर करने में अपनी शक्ति लगायें।

आपने अपने पूर्ण पुरुषार्थ से तूफानों से संघर्ष करते हुए भी जो समृद्धि प्राप्त की है उसके लिए मैं आपको बधाई देती हूं। आपने जो स्वागत किया उसके लिए आभार मानती हूं। अपनी आर्य बहिनों व भाइयों तथा आर्य सभा व सार्वदेशिक सभा का विशेष रूप से धन्यवाद करती हूं जिनके परम स्नेह और सौजन्य के बल पर हमें यहाँ प्राकृतिक दृश्य देखने व आप सबके दर्शन का सौभाग्य मिला।

इस महिला सम्मेलन को सफल बनाने में आप सबने जो सहयोग दिया उसके लिए मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूं।

प्रभु हमें शक्ति दे कि हम निष्काम सेवा का संकल्प लेकर अभ्युदय और निःश्रेयस को प्राप्त करें।

हम जाग उठीं और संभल गईं
कुछ करके अब दिखला देंगी।
बस विश्व गगन में नारी को
हम एक बार चमका देंगी॥

भारतीयों के प्रति घृणासूचक शब्दों की अंग्रेजी शब्दकोष में कमी नहीं है। ऐसे युवकों की निराशा की बात को हम कैसे समझ सकते हैं जिन्हें शुरू से यही पढ़ाया गया है कि भारतीय उजड्ड और गंवार होते हैं, वे न तो सत्यप्रेमी होते हैं और न सत्साहसी ही। उनके साथ किसी प्रकार की सहानुभूति नहीं दिखाई जानी चाहिए। मित्रता स्थापित करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। भारतीयों के प्रति ऐसी दूषित भावना और ये सब दोषारोपण सर्वथा निर्मूल हैं। जब भी इस प्रकार के दोष किसी पूरे समाज या राष्ट्र पर आरोपित किए जाते हैं, तो उनके पीछे अवश्य ही कोई दूषित या स्वार्थमय भावना होती है।

—मैक्समूलर

आभार-प्रदर्शन

—श्री ओम्प्रकाश त्यागी,
संसद सदस्य व सभा मन्त्री—

मौरिशस सम्मेलन से पूर्व के समस्त सम्मेलन भारतवर्ष में हुये थे। भारत से बाहर एक भी सम्मेलन न हुआ था। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप का दिग्दर्शन कराने और उसे भारत से बाहर वैदिक धर्म के प्रचार के एक प्रभावशाली साधन के रूप में प्रयुक्त करने की दृष्टि से सार्वदेशिक सभा की अरसे से इच्छा थी कि भारत से बाहर एक सम्मेलन आर्य समाज स्थापना शताब्दी के उपलक्ष्य में बुलाया जाय। इन पंक्तियों के लेखक को, जबकि वह पूर्वी अफ्रीका आदि में प्रचार कार्य के मिशन पर गया था, यह अभाव खटकने वाला दीख पड़ा था। फलतः सभा कार्यालय ने आर्य प्रतिनिधि सभा पूर्वी अफ्रीका और आर्य सभा मौरिशस को प्रेरणा की कि वे अपने यहां सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन का १२ वां अधिवेशन बुलाएं। दोनों सभाओं ने इस विचार का स्वागत किया और निमन्त्रण-पत्र भेजे। परन्तु आर्यसभा मौरिशस का निमन्त्रण पहले प्राप्त होने पर अन्तरंग सभा ने अपनी २८-११-७१ की बैठक में मौरिशस में सम्मेलन करने का निश्चय कर दिया। यह भी निर्णय किया गया कि इसके बाद पूर्वी अफ्रीका में वां परिस्थिति अनुकूल होने पर दक्षिणी अफ्रीका और फिजी आदि में सम्मेलन किया जाय। इस निर्णय का एक लक्ष्य यह भी था कि भारत से बाहर अपने उद्देश्यानुसार कार्य को प्रगति देने के लिए वातावरण तैयार किया जाए तथा भारतीय एवं प्रवासी आर्य बन्धुओं का साक्षात्कार करके उनसे प्रेम-सम्बन्धों को दृढ़ किया जाए।

अन्तरंग के निश्चयानुसार २४ से २६ अगस्त १९७३ तक मौरिशस की राजधानी पोर्टलुई में यह सम्मेलन श्री प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास (बम्बई) की अध्यक्षता में अभूतपूर्व समारोह एवं सफलता के साथ सम्पन्न हुआ।

अधिकांश भारतीय नर-नारी 'अकबर' नामक जलपोत से तथा कुछ भाई वायुयान से पोर्टलुई गए। दक्षिण एवं पूर्वी अफ्रीका के २५० से अधिक आर्य बन्धुओं ने इसमें भाग लिया और इसकी सफलता में मूल्यवान् सहयोग दिया। मौरिशस के आर्य बन्धुओं ने ही नहीं वरन् रविवेद-प्रचारिणी सभा तथा उनके स्वयंसेवक एवं उसके प्रधान श्रीयुत रामसुन्दर मोदन एम. एल. ए. ने, सनातन धर्मियों तथा यहां की इतर जनता ने भी समारोह को हर प्रकार से शानदार एवं सफल बनाने में कोई प्रयत्न उठा न रखा था। मौरिशस प्रशासन ने तो इसे एक प्रकार से अपना ही सम्मेलन मानकर इसकी सफलता में चार चांद लगाने का यश प्राप्त किया। उनके प्रायः सभी मन्त्रियों एवं बड़े बड़े नेताओं एवं राज्याधिकारियों ने सम्मेलन की कार्य-वाही में हाथ बंटाया और उसे गौरवान्वित किया।

मौरिशस के गवर्नर जनरल माननीय अब्दुल रजाक मुहम्मद, लार्ड मेयर, एवं भारतीय हाई कमिश्नर श्रीकृष्ण दयाल जी शर्मा जैसे महानुभावों ने स्वयं उपस्थित होकर सम्मेलन के प्रति अपनी सद्भावना एवं रुचि का भव्य परिचय दिया और हमें प्रोत्साहित किया।

आर्य समाज मौरिशस ने, जिसके प्रधान श्री डा० हरि-दत्त जी घूरा और मंत्री श्री टी० कालीचरण हैं, एवं स्वागत कारिणी ने, सम्मेलन की सुव्यवस्था कर अपने दायित्व का सुन्दरता से निर्वाह किया। स्वागत कारिणी के प्रधान श्री मोहन लाल जी मोहित एवं मन्त्री श्री राम लाल

गुमानी थे जो सम्मेलन के सभी कार्यों की निगरानी रखते थे।

वायुयान तथा 'अकबर' पोत से लगभग ७०० भारतीय यात्री गए थे जिनमें बड़े बड़े आर्य नेता, विद्वान्, उपदेशक, संन्यासी महानुभाव, कार्यकर्त्ता, पत्रकार और साहित्यकार भी थे। जलयान की यात्रा-व्यवस्था का दायित्व सार्वदेशिक सभा की ओर से श्री रामलाल जी मलिक (दिल्ली) को सौंपा गया था। उन्होंने इसे सुलभ एवं सुगम बनाने में हमें जो योग दिया है, वह भुलाया न जा सकेगा। इस प्रसंग में भारत सरकार, उसके परराष्ट्र विभाग, सूचना-प्रसारण विभाग, मौरिशस के हाई कमिश्नर तथा जहाज कम्पनी के डायरेक्टरों, अन्य अधिकारियों एवं कार्यकर्त्ताओं से प्राप्त सहयोग मूल्यवान् सिद्ध हुआ है। जल-पोत तथा वायुयान से गए आर्य बन्धुओं को जहां मौरिशस एवं अफ्रीका के आर्य बन्धुओं के साक्षात्कार आदि का लाभ हुआ, वहां भारत के आर्य बन्धुओं को पारस्परिक परिचय का लाभ भी हुआ, जो कम महत्व का नहीं है। 'मुगल लाइन्स' के डायरेक्टर श्री एस. जी. जग्गी, उनके सहायक श्री आदरकर, 'अकबर' जहाज के कप्तान श्री जी० एल० दुबे तथा उनके स्टाफ ने यात्रियों की सुख-सुविधा का विशेष ध्यान रखकर यात्रा को सुखद बनाया।

इस सम्मेलन के प्रबन्ध में हाथ बंटाने के लिए, सम्मेलन के समुचित वातावरण की व्याप्ति के लिए, सभा की ओर से पूर्व से ही श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री और श्री पं० नरेन्द्रजी (हैदराबाद) तथा श्री आचार्य कृष्ण जी पोर्टलुइ में बैठ गए थे। श्री पं० नरेन्द्र जी की प्रबन्ध-पटुता, श्री आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री की अप्रतिम विद्वत्ता और श्री आचार्य कृष्ण जी की यज्ञानुष्ठानों की दक्षता तथा प्रवचनों आदि ने वस्तुतः बड़ी प्रशस्त भूमिका निभायी। श्री आचार्य वैद्यनाथ जी के स्थान २ पर विद्वत्तापूर्ण भाषण हुए जो टेलिविजन पर भी प्रसारित हुए। प्रबन्धादि में भी उनके सत्परामर्शों से बड़ा लाभ हुआ। सभा के उपमन्त्री श्री भगवान देव शर्मा एवं श्री पं० सच्चिदानन्द शास्त्री ने जहाज पर तथा सम्मेलनों की प्रबन्ध-व्यवस्था में हमारा हाथ बंटाया। सभा उप-प्रधान श्री भाई छोटूसिंह जी (अलवर) ने जहाज की आन्तरिक व्यवस्था का गुरुतर दायित्व अपने ज़िम्मे लिया हुआ था। उन्होंने इस दायित्व को बड़ी भव्यता के साथ पूर्ण किया। सभा-प्रधान मान्य डा० डी० राम जी वायुयान से सीधे पोर्टलुइ पहुँचे थे। उन्होंने सम्मेलनों की कार्यवाही में अपना मूल्यवान् सहयोग दिया एवं मार्ग दर्शन किया।

हमारे निमन्त्रण व प्रेरणा पर श्रीयुत महात्मा आनन्द स्वामी जी, श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी, श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी दण्डी, आचार्य रामानन्द जी शास्त्री, क्षेमचन्द जी सुमन, श्रीमती शकुन्तला जी गोयल (मेरठ), बहिन सुशीला जी विद्यालंकृता (हैदराबाद), श्री बालेश्वर जी अग्रवाल, (संचालक हिन्दुस्थान समाचार समिति), श्री पं० क्षितीश कुमार जी वेदालंकार (सहसम्पादक हिन्दुस्तान), श्री फतेहचन्द जी शर्मा आराधक (नवभारत टाइम्स), कु० प्रतिभा पंडित—आदि ने भी सम्मेलन में भाग लेकर और विविध सम्मेलनों में प्रधानत्व आदि करके अपने उपदेशों की अमृत-वर्षा और पब्लिसिटी की व्यवस्था द्वारा सम्मेलन की सफलता में योग दिया।

मथुरा, भरतपुर, बड़ौदा, कोटा, रतलाम, आदि के आर्य बन्धुओं और बहिनों ने स्पेशल ट्रेन पर प्रतिनिधियों एवं यात्रियों का अभिनन्दन किया और जलपानादि से सत्कार किया। इन अभिनन्दनों के आयोजकों में श्री आनन्द प्रिय जी (बड़ौदा), श्री सन्तोषीलाल जी (भरतपुर), श्री कंवरलाल जी शर्मा (कोटा) का सहयोग उल्लेखनीय है।

बम्बई के आर्य समाजों, आर्य समाज स्थापना शताब्दी समिति के आर्य बन्धुओं, श्री सेठ प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास, श्री परशुराम जी दुवात, श्री जयदेव जी आर्य, श्री गुलजारीलाल जी आर्य, श्री भगवतीप्रसाद गुप्त और श्री ओंकारनाथ जी आदि ने यात्रियों के आवास एवं भोजनादि की सुव्यवस्था में योग देकर हम सबको उपकृत किया है।

मैं इस विज्ञप्ति के द्वारा अपनी तथा सभा की ओर से उन सभी के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने

प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूप में इस सम्मेलन को सफल बनाने में सहयोग दिया है। यदि किन्हीं यात्रियों को यात्रा में कोई कष्ट हुआ हो तो उसके लिए भी मैं क्षमाप्रार्थी हूँ।

इस सम्मेलन की फलश्रुति यदि संक्षेप में वर्णित की जाय तो मैं यह कहने का साहस करूंगा कि इससे प्रवासी एवं भारतीय आर्यबन्धु एक दूसरे के अधिक निकट आए हैं। वैदिकधर्म एवं आर्यसंस्कृति के लिये नई भूमि तैयार होने और अन्य क्षेत्रों में उनके विस्तृत होने की सम्भावनाएं बढ़ी हैं और सबसे बढ़कर आर्य समाज एवं सार्वदेशिक सभा के इतिहास में एक नया कीर्तिमान स्थापित हुआ है।

★★

★ चित्रावलि ★

मौरिशस में हुए द्वादश सार्वदेशिक आर्य महासम्मेलन में सम्मिलित
प्रतिनिधियों के चित्र

●

(प्रेस में भेजने तक जिन व्यक्तियों के चित्र उपलब्ध हो सके उनके चित्र दिए गए हैं)

श्रीमती चन्द्रावती
नई दिल्ली

श्रीमती सुशीला देवी
हैदराबाद

श्रीमती शान्ति देवी मलिक
नई दिल्ली

श्रीमती आर्य प्रिया
चण्डीगढ़

श्रीमती कान्ता गुप्ता
नई दिल्ली

श्रीमती सावित्री देवी
कांगड़ा

श्रीमती इन्द्रा गुप्ता
नई दिल्ली

श्रीमती रामप्यारी देवी
कोटा

श्रीमती एम. सौभाग्यवती
हैदराबाद

श्रीमती चमेली देवी त्यागी
नई दिल्ली-१

श्रीमती सुशीला देवी भाटिया
जयपुर

श्रीमती रामदुलारी देवी
जौनपुर

श्रीमती सत्यवती सूद
दिल्ली-६

श्रीमती वीणा गुप्ता
कलकत्ता

श्रीमती कैलाशवती
हापुड़

श्रीमती शन्नोदेवी
भुवनेश्वर

कुमारी प्रतिभा पंडित
बड़ौदा

श्रीमती केसरदेवी तोमर
नागपुर

श्रीमती गोन्नी देवी
सिलीगुड़ी

श्रीमती गायत्री देवी रस्तोगी
मेरठ

श्रीमती ज्ञानवती देवी
दिल्ली

श्रीमती देवकी देवी
बरेली

श्रीमती सुरेन्द्रवती आर्य
मेरठ

श्रीमती प्रेमकुमारी
आगरा

श्रीमती रत्ना बाई टोपे
उद्गीर

कुमारी विमला छावड़ा,
खन्ना (पंजाब)

श्रीमती सावित्री देवी कपूर
नई दिल्ली

श्रीमती द्रौपदी देवी
नई दिल्ली

श्रीमती इन्द्रावती
दरियागंज, दिल्ली

श्रीमती रेणुकाबाई
गुलबर्गा

श्रीमती मामकौर
दिल्ली

श्रीमती कौशल्या खण्डूजा
अलवर

श्रीमती कैलाशवती
लखनऊ

श्रीमती कृष्णा कुमारी
आगरा

श्रीमती रुक्मिणी देवी विजयवर्गीय
हैदराबाद

श्रीमती कृष्णा खन्ना
अमृतसर

श्रीमती पार्वती देवी गुलाटी
बुलन्दशहर

श्री० बृजमोहन परवा धर्मपत्नी किरण देवी के साथ
हैदराबाद

श्रीमती सरला पाल
नई दिल्ली

श्रीमती दयावती
दिल्ली - ६

श्रीमती किशोरी देवी गोजे
हैदराबाद

श्रीमती कलावती पाठक
निजामाबाद

श्रीमती सरोज खन्ना
अमृतसर

श्रीमती कमला आर्य
लुधियाना

श्रीमती तारा वैद
दिल्ली - ६

श्री० सीताराम तथा श्रीमती सीता देवी
हैदराबाद

१. श्री० यमुना प्रसाद २. श्री० रामवृक्षलाल ३. श्रीमती चम्पा देवी
४. श्री० वेद प्रकाश ५. दशरथ राउत, बेतिया (बिहार)

श्री इन्द्र देव आर्य
इन्दौर

डा० मुरलीधर श्रीवास्तव
छपरा

पं० आशुराम जी
चण्डीगढ़

श्री० गुरु प्रसाद सोहसराय
नालन्दा

श्री हरिकिसन सोलंकी
जोधपुर

श्री बाबूलाल सोलंकी
जोधपुर

श्री रामदित्तामल खन्ना
जयपुर

श्री रूपनारायण वर्मा
जयपुर

श्री रासमल पाण्डु
हैदराबाद

ाव मुण्डरगी
हैदराबाद

श्री बलदेवराज यदुवंशी
गुरुदासपुर

श्री राधाकिसन गहलौत
जोधपुर

श्री दीनदयाल आर्य
दिल्ली - ६

श्री० वीरेन्द्रसिंह वीर
शामली (उ०प्र०)

श्री० हरिचरण लाल वर्मा
इन्दौर

श्री० काशीनाथ शास्त्री
जौनपुर

श्री० मलिक वीरसैन
सोलन (हि० प्र०)

श्री० विनोद कुमार जैन
हापुड़

श्री० द्वारका प्रसाद जोशी
अमरावती

डा० सुरेशचन्द्र शास्त्री
झाँसी

श्री० इन्द्रमोहन मेहता
आगरा

डा० गोविन्द राव गोजे
बोधन (निजामाबाद)

श्री राधाकृष्ण पारहार
जोधपुर

जादूगर श्री लक्ष्मनसिंह गहलौत
जोधपुर

श्री मानचन्द रिवारिया
नई दिल्ली

श्री हेतराम आर्य
अलवर

श्री कुन्दनसिंह आर्य
भिवानी

श्री कानाराम
जोधपुर

श्री छगनलाल विजयवर्गीय
हैदराबाद

श्री दामोदर होतचन्द्र
जेतपुर

श्री भगवान भाई मोलकी
नीमाड़

श्री रामभूल शर्मा, शाहदरा दिल्ली
एकाउण्टैण्ट, सार्वदेशिक सभा

श्री रघुनाथप्रसाद पाठक, शाहदरा दिल्ली
भू०पू० कार्यालयाध्यक्ष, सार्वदेशिक सभा

श्री दानसिंह मेहरा, जालली अलमोड़ा
लेखक - सार्वदेशिक सभा

श्री अमरनाथ हाण्डा
जालंधर सिटी

श्री मोहनलाल कछवाह
जोधपुर

श्री मदन मोहन महाजन
पठानकोट

श्री गुलाबचन्द बसल
भिलाई

श्री मूलसिंह कछवाह
जोधपुर

श्री भीरमसिंह गहलौत
जोधपुर

श्री सबलसिंह गहलौत
जोधपुर

श्री विजयकुमार आर्य
हापुड़

श्री बाबूराम गुप्त
आगरा

डा० लक्ष्मीप्रसाद गुप्त
कोरबा

श्री जनकलाल गुप्त
कलकत्ता

श्री प्रियव्रत दास
भुवनेश्वर (उड़ीसा)

श्री कृपाराम
मेरठ

श्री मंगलराम गहलोत
जोधपुर

श्री केवलकृष्ण वासन
कोरबा

श्री बलराम पूरक्या
मंदसौर

श्री जगन्नाथ जी
नई दिल्ली

श्री शोभाराव
खरगौन

श्री रूपचन्द वैद्य
मण्डी

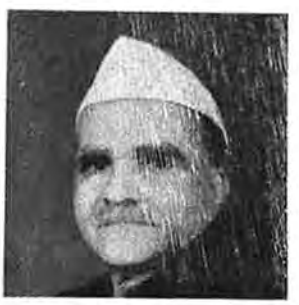

श्री भागचन्द्र शास्त्री
इन्दौर

श्री ब्रह्मचारी वेदव्रत
गु. कु. सिंहपुरा, रोहतक

श्री नरेन्द्र कुमार

श्री बाबूराम प्रधान
जौनपुर

श्री नारायणदास गुलाटी
बुलन्दशहर

श्री बी बी राम रेड्डी
हैदराबाद

श्री फूलचन्द्र गुप्त
देवरिया

श्री ओमप्रकाश पाराशर
लातूर

श्री किसनलाल
दिल्ली

श्री श्रीशचन्द्र गुप्त
भागलपुर

श्री मूलसिंह
जोधपुर

श्री चन्दीमल कारगवल
नई दिल्ली

श्री जितेन्द्रकुमार
जौनपुर

श्री नारायणदास कपूर
पंजाबी बाग, नई दिल्ली

श्री गंगाधर रुखमाजी
गुजरात

वैद्य रविदत्त
ब्यावर

श्री गोविन्दराम मिनोचा
नई दिल्ली

श्री तुलसीदास छांगोमल
जालना

श्री ज्ञानचन्द चावला
जालन्धर

डा० मोतीलाल
पटना

श्री चितानन्द
हैदराबाद

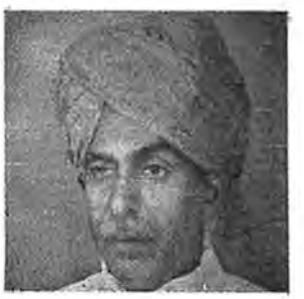

श्री वस्तीराम
जोधपुर

श्री शिवदत्त तिवाड़ी
बिन्दकी

श्री शंकरराव टोपं
उद्गीर

श्री सुन्दरलाल भाटिया
जयपुर

श्री रणछोड़सिंह परमार
अमेड़

श्री धर्मपाल गुप्त
दिल्ली-७

श्री हुकमचन्द सिंघल
लखनऊ

श्री मुन्दरशाह
पटना

श्री मांगीलाल पटेल
निमाड़

श्री बहादुरमल
बीकानेर

श्री कनीराम
जोधपुर

सेठ चिरंजीलाल कोटा, (राजस्थान)

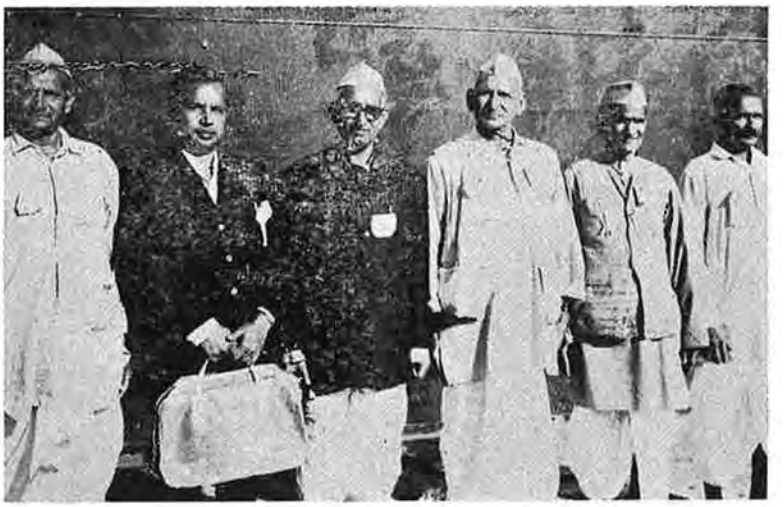

१. श्री हेतराम आर्य (अलवर)
२. श्री सुगनचन्द आर्य
३. श्री रघुवीर सिंह गुप्त
४. श्री शिवदयाल गुप्त
५. श्री भजनलाल आर्य
६. श्री चन्द्रमणि

श्री बाबूलाल पाठक
निजामाबाद

श्री हरिकिशन जायसवाल
दिल्ली-६

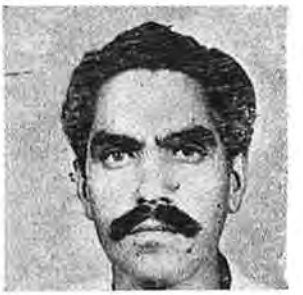

श्री रामचन्द्र सोलंकी
जोधपुर

डा० श्रवणकुमार गोड़
नागपुर

श्री होतचन्द चेलाराम
औरंगाबाद

श्री रामस्वरूप
अजमेर

श्री लौंगमल जोधपुर

श्री अमीचन्द्र वानप्रस्थी, कांगड़ा

पं० रामदत्त शर्मा, गुरुकुल एटा (उ.प्र.)

श्री भजनलाल, गुड़गांव

श्री शिवदयाल जी, गुड़गांव

श्री सुगनचन्द, गुड़गांव

श्री सीताराम आनन्द, अमृतसर

श्री जीवनराम, बहालगढ़

श्री गिरधारीसिंह मिस्त्री, जोधपुर

श्री बाबू राव नारायण तेरकर
लातूर

श्री नारायणदास एम. कटारिया
जेतपुर

श्री अजयकुमार 'प्रधान'
जौनपुर

श्री रामकृष्ण 'भारती'
नई दिल्ली

श्री रामफल त्यागी
मेरठ

श्री गंगाप्रसाद आर्य
हापुड़

श्री जगदीश्वर प्रसाद
आगरा

श्री रामलखन गुप्त
कलकत्ता

श्री दयानन्द आर्य
आगरा

श्री रामचन्द्र शर्मा
नीमच कैण्ट

श्री मेहत्ता रामचन्द्र
काँगड़ा

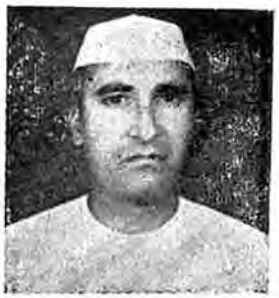

श्री ब्रह्मसिंह शास्त्री
मेरठ

श्री रामकिशन फकीरचन्द राठी
अकोला

श्री हीरालाल साहू
रायगढ़ (म०प्र०)

श्री रत्तीराम शर्मा
सिलीगुड़ी

श्री आनन्द प्रकाश मित्तल
मेरठ

श्री रामदयाल सोनी
जोधपुर

श्री रूपचन्द
खरगोन (म०प्र०)

डा० सोमदेव गोजे
निजामाबाद

श्री होरीलाल गुप्ता
इटावा

श्री रामशंकर उर्फ बल्ला आर्य
गोण्डा

श्री रामस्वरूप गुप्त
नई दिल्ली

श्री नरेन्द्र प्रकाश रस्तोगी
मेरठ

चौधरी साधूशरण आर्य
चम्पारण

पं० शिरोमणिदत्त शर्मा
नीमच कैंट

श्री हरिश्चन्द्र खन्ना
अमृतसर

श्री रामलखन आर्य
पटना

श्री दानवीरसिंह विश्नोई
गढ़वाल

श्री शंकरलाल परिहार
जोधपुर

श्री भगवानलाल
मन्दसौर

श्री सलेकचन्द
मुजफ्फरनगर

श्री सुरेन्द्रकुमार चित्रकार
मेरठ

श्री प्रहलाद दास
इन्दौर

श्री खेमराज टाक
जोधपुर

श्री श्यामबाबू वर्मा
विलासपुर

श्री बालकराम महाजन
पठानकोट

श्री शंकरलाल शर्मा
आगरा

श्री रमेशचन्द्र शर्मा
इन्दौर

श्री सुगनचन्द्र भूतड़ा
ब्यावर

श्री मदनलाल सतीजा
मुरादनगर (उ०प्र०)

श्री ज्ञानी गुरुदयालसिंह
लुधियाना

श्री विक्रमादित्य गुप्त
बिलासपुर

डा० नोतनदास
नीमच कैण्ट

श्री रामनारायण शास्त्री
बिन्दकी (उ०प्र०)

श्री ओमदत्त गहलौत
जोधपुर

श्री मदनलाल वर्मा
नीमच कैंट

श्री बलैतीराम मेहता
लुधियाना

श्री विष्णुदेव प्रसाद
नालन्दा

श्री जे. बस. रेड्डी
नारायण पेठ (आ.प्र.)

श्री रामेश्वर जी
खरगौन

श्री भगवान भाई
खरगौन

श्री जगदेवसिंह
दिल्ली सूबा

श्री शंकरराव
गुलबर्गा

श्री इल्मसिंह
मुजफ्फरनगर

श्री मनुदेव अभय
वि० वा० इन्दौर

श्री देवकी नन्दन
दिल्ली - ६

श्री अमर चन्द्र शास्त्री
बुलन्दशहर

श्री भगवती प्रसाद कालानी
नीमच कैंट

पं० वागीश कुमार शास्त्री
आ०गु०कु० एटा

श्री मोहनदास जेसाराम
जालना (महाराष्ट्र)

श्री अर्जुनदास घनाणी
इन्दौर

श्री रघुवीर सिंह
बुलन्दशहर

श्री ए. बालरेड्डी
हैदराबाद

श्री सुखदेव जी गोयल
जोधपुर

श्री हीरालाल बुधवानी
रायपुर

श्री लालचन्द्र भाटिया
शाहदरा-दिल्ली

दत्तात्रेय कल्याणी, (महाराष्ट्र)

चक्खनलाल वेदार्थी, ज्वालापुर

चक्खनलाल गंगाराम, गुजरात

बनारसीदास, अम्बाला

वेदभूषण, बम्बई

श्री बालकृष्ण महाजन
बड़वानी (म० प्र०)

श्री शीतल प्रकाश शास्त्री
मेरठ

श्री रामकिशोर गुप्त
मेरठ

श्री खेमसिंह भाटी
जोधपुर

श्री गिरधारीलाल साव
कलकत्ता

श्री किस्तूर गहलौत
जोधपुर

श्री जेठाराम सोलंकी
जोधपुर

श्री रामलाल सोलंकी
जोधपुर

श्री हरिदास ज्वाल
गया

श्री बाबूलाल गुप्त
बिन्दकी (उ० प्र०)

मौरिशस आर्य महासम्मेलन में अकबर जलपोत से गए भारतीय यात्रियों की सूची

१ श्री ओम्प्रकाश दीवान, नयी दिल्ली-५
२ श्रीमती सरला पाल, नयी दिल्ली-३
३ ,, स्वर्ण दत्ता, दिल्ली-६
४ ,, विशेश्वर देवी गुजराल, नयी दिल्ली-१
५ ,, तारा वैद्य, दिल्ली-६
६ ,, सुख देवी, दिल्ली-६
७ श्री बरकत राम बजाज, दिल्ली-६
८ ,, क्षेमचन्द सुमन, दिल्ली-३२
९ श्रीमती पुष्पा देवी, नयी दिल्ली-५
१० श्री गोविन्द राम भूटानी, नयी दिल्ली-५
११ श्रीमती पुष्पा अरोड़ा, दिल्ली-६
१२ श्री प्राणचन्द अरोड़ा, दिल्ली-६
१३ ,, मनोहर लाल सहदेव, दिल्ली-६
१४ ,, भारत भूषण भार्गव, भरतपुर
१५ ,, राम सरन पुरोहित, भरतपुर
१६ ,, गोप लाल शर्मा, भरतपुर
१७ ,, सन्तोषी लाल गोयल, भरतपुर
१८ श्रीमती रामेश्वरी देवी, भरतपुर
१९ श्री चरणदास शर्मा, भरतपुर
२० श्रीमती विद्यावती, नयी दिल्ली-५
२१ ,, विजय चोपड़ा, नयी दिल्ली-३
२२ ,, सत्या रानी चोपड़ा, कलकत्ता
२३ श्री राधारमण अग्रवाल, भरतपुर
२४ ,, सीताराम आनन्द, अमृतसर
२५ श्रीमती विद्यावती दत्त, कलकत्ता
२६ ,, कमलादेवी मोतानी, पश्चिमी चम्पारण
२७ श्री मुन्ना लाल मोतानी, पश्चिमी चम्पारण
२८ ,, मोहन लाल मलहोत्रा, अमृतसर
२९ ,, देवकी नन्दन, दिल्ली-६
३० श्रीमती दयावती, दिल्ली-६
३१ श्री काहन चन्द मलहोत्रा, दिल्ली-२६
३२ श्रीमती कैलाशवती, अमृतसर
३३ श्री इन्द्र मोहन मेहता, आगरा कैन्ट
३४ ,, राम लुभाया अरोड़ा, कानपुर
३५ श्रीमती रूक्मणी देवी, दिल्ली-६
३६ ,, राज जेतली, नयी दिल्ली-५
३७ ,, कौशल्या देवी, नयी दिल्ली-१३
३८ ,, सुशीला चौधरी, नयी दिल्ली-१३
३९ ,, विद्यावती मलहोत्रा, दिल्ली-२६
४० ,, मधुबाला, दिल्ली-२६
४१ श्री गुरू प्रसाद, नालन्दा
४२ ,, चांदीमल खडेलवाल, नयी दिल्ली-५
४३ श्रीमती सन्तोषवती सूद, नयी दिल्ली-३
४४ श्री प्रहलाददास गुप्ता, नजीबाबाद (उ० प्र०)
४५ श्रीमती सीता प्रहलाद गुप्त, नजीबाबाद (उ० प्र०)
४६ श्री प्रेम चन्द गोयल, दिल्ली-६
४७ सुश्री प्रतिभा पंडित, बड़ौदा
४८ श्री मदन मोहन, गुरदासपुर
४९ ,, हरिचन्द, कपूरथला
५० ,, ज्ञानचन्द चावला, जालन्धर
५१ श्रीमती प्रेमलता, कपूरथला
५२ श्री हरिश्चन्द्र खन्ना, अमृतसर

५३ श्रीमती विमलाछाबड़ा, पटियाला
५४ ,, कमला आर्या, लुधियाना
५५ ,, कृष्णा खन्ना, अमृतसर
५६ श्री कृष्ण कुमार गुप्त, पंजाब भटिंडा
५७ श्रीमती सरोज भल्ला, अमृतसर
५८ श्री अमृत लाल मित्तल, डबवाली (हरियाणा)।
५९ श्रीमती शकुन्तला महाजन, होशियारपुर
६० श्री विष्णुदास महाजन, होशियारपुर
६१ ,, चिमन लाल भाटिया, नयी दिल्ली-२४
६२ ,, राज कुवंर गुप्त दिल्ली-५९
६३ ,, राज कुमार मोहन, नयी दिल्ली-५५
६४ श्रीमती मामकोर, दिल्ली-६
६५ श्री रतन चन्द, नयी दिल्ली-२४
६६ श्रीमती शारदा जैली, नयी दिल्ली-२२
६७ श्री हेमराज चुग, नयी दिल्ली-२७
६८ श्रीमती जिन्दों रानी, नयी दिल्ली-४८
६९ श्री रमेश कुमार, नयी दिल्ली-२४
७० श्री राम कृष्ण भारतीय, नयी दिल्ली
७१ श्रीमती नेमवती, कमलानगर दिल्ली
७२ श्री श्याम सुन्दर लाल गुप्त, दिल्ली
७३ ,, मोहन लाल, लाजपत नगर नयी दिल्ली
७४ श्रीमती कलावती, पहाड़ीधीरज दिल्ली
७५ श्री बुद्धनाथ चौधरी, दिल्ली
७६ ,, राज सिंह आर्य, सब्जीमण्डी दिल्ली
७७ ,, वेद कुमार जैसवाल, दिल्ली
७८ श्रीमती दयावती बन्ती, माडल टाउन दिल्ली
७९ ,, सावित्री सहगल, दिल्ली
८० श्री हरिकृष्ण जैसवाल, दिल्ली-६
८१ श्रीमती ज्ञानवती देवी, दिल्ली
८२ ,, लाजवन्ती नायर, नयी दिल्ली
८३ ,, प्रकाश पासी, नयी दिल्ली
८४ ,, शांति देवी मोहना, माडल टाउन दिल्ली
८५ श्री मोहन प्रकाश शर्मा, सब्जी मण्डी दिल्ली
८६ ,, स्वामी सत्यपति दर्शनाचार्य, रोहतक
८७ ,, राम स्वरूप गुप्ता, करनाल
८८ ,, निहाल चन्द कुमार, नई दिल्ली-२६
८९ श्रीमती सावित्री मल्होत्रा, नयी दिल्ली-११
९० श्री नवल किशोर अरोड़ा, नयी दिल्ली-५
९१ श्रीमती शकुन्तला रानी, दिल्ली-३४
९२ श्री किशोरी लाल, दिल्ली-६
९३ ,, शामदास सचदेव, नयी दिल्ली-५५
९४ ,, सुभाष चन्द्र वर्मा, दिल्ली-७
९५ श्रीमती कविता अरोड़ा, दिल्ली-६
९६ श्री रामपत, दिल्ली-७
९७ श्रीमती सुधा टंडन, दिल्ली-६
९८ ,, प्रभा देवी अरोड़ा, दिल्ली-९
९९ श्री नरेन्द्र कुमार राजपूत, बिजनौर
१०० श्रीमती चन्द्रावती, दिल्ली-७
१०१ ,, गुणवती सूद, दिल्ली-४८
१०२ श्री रामेश्वर दयाल अग्रवाल, दिल्ली-९
१०३ सुश्री इन्दु चौधरी, दिल्ली-३४
१०४ श्रीमती शकुन्तला आर्य, नयी दिल्ली-२४
१०५ ,, शान्ति देवी, नयी दिल्ली-२४
१०६ श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक, दिल्ली-३२
१०७ ,, भगवान देव शर्मा, दिल्ली-७
१०८ ,, प्रेम चन्द शर्मा, अलीगढ़
१०९ ,, ब्रह्मचारी वेदान्त मीमांसक-रोहतक
११० श्रीमती पद्मा तलवार, दिल्ली-६
१११ श्री सुन्दर लाल भाटिया, जयपुर
११२ ,, प्रद्युम्न लाल तलवार, दिल्ली-६
११३ ,, लाजपतराय, दिल्ली-२१
११४ ,, बिहारी लाल सहगल, दिल्ली-६
११५ श्रीमती गिनी देवी शर्मा, दार्जिलिंग
११६ श्री रतिराम शर्मा, दार्जिलिंग
११७ श्रीमती प्रिया आर्य, चण्डीगढ़
११८ श्री ज्वाल हरिदास, गया
११९ ,, मोती लाल, पटना
१२० ,, सत्यपाल आर्य, नयी दिल्ली-५
१२१ ,, कुन्दन सिंह, भिवानी
१२२ ,, दरबारी लाल मस्ताना, रोहतक
१२३ ,, बालकृष्ण जयकिशन जी महाजन, बरौनी
१२४ ,, नरेन्द्र कुमार भवसार, निमाड़ (म० प्र०)

१२५ " भगवान भाई सोलंकी निमाड़, (म० प्र०)
१२६ " स्वर्ण कुमार कुन्नुलाल, नागपुर
१२७ " रणछोड़ सिंह परमार निरूर, (म० प्र०)
१२८ " गणेशी लाल शाह, खंडवा
१२९ " द्वारका दास खिमजी जोशी, अमरावती
१३० " शोभाराम भाई पट्टीदार, वेस्ट नीमाड
१३१ श्रीमती बिन्दू देवीदेसौर, खंडवा
१३२ " शांतीवाई खंडेलवाल, खंडवा
१३३ " कौशल्या देवी सिन्धवानी, रायपुर
१३४ श्री राम चन्द्र विन्दवानी, ईस्ट नीमाड़
१३५ ,, धर्मेन्द्रप्रसाद, होशंगाबाद
१३६ ,, कमल चन्द राठौर, खंडवा
१३७ ,, नारायण शाही खंडेलवाल, खंडवा
१३८ ,, जवाहर चन्द देसौर, खंडवा
१३९ ,, बलराम फरक्या, मन्दसौर
१४० ,, इन्द्र देव आर्य, इन्दौर
१४१ ,, जमुना प्रसाद सिंघल, बुलन्दशहर
१४२ ,, नारायण दास, बुलन्दशहर
१४३ श्रीमती सुरेन्द्रावती, आगरा
१४४ श्री गंगा प्रसाद आर्य, हापुड़
१४५ ,, शंकर लाल शर्मा, आगरा
१४६ ,, बेग राज, नयी दिल्ली-५
१४७ ,, तारा चन्द सोनी, खंडवा
१४८ श्रीमती बसन्ती बाई, खंडवा
१४९ श्री हीरालाल अग्रवाल, ईस्ट निमाड़
१५० ,, धर्मपाल आलूवालिया, रायपुर
१५१ सुश्री विद्यावती खन्ना, भोपाल
१५२ श्री कमल चन्द अग्रवाल, खंडवा
१५३ ,, लीलाधर कल्लुराम जी राठौर, खंडवा
१५४ ,, रमेशचन्द्र दयाराम सिन्धी, खंडवा
१५५ ,, कन्हैयालाल खंडेलवाल, खंडवा।
१५६ ,, प्रेमचन्द बलवानी, खंडवा
१५७ ,, सुरेन्द्र कुमार चोपड़ा, मेरठ
१५८ श्रीमती शकुन्तला गोयल, मेरठ
१५९ ,, पार्वती देवी, बुलन्दशहर
१६० श्री बाबूराम गुप्त, आगरा
१६१ श्री यशपाल सिंह, मुजफ्फरनगर
१६२ श्रीमती सुशीला देवी महाजन, आगरा
१६३ श्री ओम्प्रकाश गुप्त, देहरादून
१६४ श्रीमती विमला गुप्त, देहरादून
१६५ श्री मदन लाल सतीजा, गुड़गांव
१६६ श्रीमती सावित्री देवी, नयी दिल्ली-२६
१६७ श्री दयानन्द आर्य, आगरा
१६८ ,, नरेश चन्द्र अग्रवाल, बुलन्दशहर
१६९ ,, विजय कुमार आर्य, मेरठ
१७० ,, लौंगमल भारवानी, जोधपुर
१७१ ,, लक्ष्मण दास पंवार, जोधपुर
१७२ ,, रामसुख शर्मा, अलवर
१७३ ,, लक्ष्मण सिंह गहलोत, जोधपुर
१७४ ,, मंगला राम, जोधपुर
१७५ श्रीमती कमला देवी, जोधपुर
१७६ श्री रामचन्द्र सोलंकी, जोधपुर
१७७ ,, मोहन लाल कछवाह, जोधपुर
१७८ ,, ब्रह्मसिंह, जोधपुर
१७९ ,, शंकर लाल परिहार, जोधपुर
१८० ,, केशव सिंह सांखला, जोधपुर
१८१ ,, राम शंकर गुप्त, गोण्डा
१८२ ,, नारायण दास कपूर, नयी दिल्ली-२६
१८३ ,, विनोद कुमार जैन, मेरठ
१८४ श्रीमती कैलाशवती, मेरठ
१८५ श्री कृष्ण गोपाल, आगरा
१८६ ,, पुरुषोत्तम लाल, आगरा
१८७ ,, सुखदेव गोयल, जोधपुर
१८८ ,, गुलाब सिंह गहलोत, जोधपुर
१८९ ,, मंगी लाल जी, जोधपुर
१९० श्रीमती कौशल्यारानी, जोधपुर
१९१ श्री हरिकृष्ण, जोधपुर
१९२ श्रीमती सुशीला देवी भाटिया, जयपुर
१९३ श्री रामलाल सुमन, जोधपुर
१९४ ,, खेमसिंह भाटिया, जोधपुर
१९५ ,, राधाकृष्ण, जोधपुर
१९६ ,, धीरज सिंह साँखला, जोधपुर

१९७ ,, ओम दत्ता, जोधपुर
१९८ श्री किस्तूर, जोधपुर
१९९ " राधा कृष्ण, जोधपुर
२०० " खेमराज टेक, जोधपुर
२०१ " कनीराम टेक, जोधपुर
२०२ " वेद प्रकाश, जालन्धर
२०३ " रूपचन्द वैद्य, मंडी
२०४ श्रीमती चमेली देवी, नयी दिल्ली-१
२०५ श्री चक्खन लाल गर्ग, सहारनपुर
२०६ श्रीमती दुलारी देवी, जौनपुर
२०: श्री जितेन्द्र कुमार प्रधान, जौनपुर
२०८ श्रीमती राम प्यारी देवी, कोटा
२०९ " कैलाशवती, लखनऊ
२१० श्री सुरेश चन्द्र गुप्त, भोजपुर
२११ " सलेक चन्द, बिजनौर
२१२ " ब्रजनाथ सक्सेना, मथुरा
२१३ " सुबाल सिंह, जोधपुर
२१४ " कानाराम, जोधपुर
२१५ ,, जथराम सोलंकी, जोधपुर
२१६ सुश्री उर्मिला सक्सेना, फर्रुखाबाद
२१७ श्री सत्य भिक्षु बलवन्त राय, अम्बाला कैन्ट
२१८ श्रीमती प्रेम, आगरा
२१९ श्री बनारसी दास गुप्त, अम्बाला
२२० मास्टर अजय कुमार प्रधान, जौनपुर
२२१ श्री बाबूराम प्रधान, जौनपुर
२२२ श्रीमती प्रकाश छिबा, लुधियाना
२२३ " माया देवी आहलुवालिया, रायपुर
२२४ श्री राजेश सिंघल, बुलन्दशहर
२२५ " ठाकुर दानबीर सिंह जी बिश्नोई, बिजनौर
२२६ " हुक्म चन्द सिंघल सहारनपुर
२२७ श्रीमती सत्य देवी पंडित चण्डीगढ़
२२८ श्री नारायण दास मेलहूराम कटारिया आर्य, जैतपुर
२२९ श्रीमती सुशीला कपूर, अबौहर
२३० श्री गिरधारी शाह, कलकत्ता-२७
२३१ " जनक लाल गुप्त, कलकत्ता-२३
२३२ " रामदत्त शर्मा, एटा
२३३ " अमर चन्द शास्त्री, बुलन्दशहर
२३४ " अरविन्द पटेल, खंडवा
२३५ " मुक्तानन्द सरस्वती, इन्दौर
२३६ श्रीमती प्रेमवती, मेरठ
२३७ श्री नरेन्द्र प्रकाश, मेरठ
२३८ " साहिब दयाल, गुडगांव
२३९ " भजन लाल, गुड़गांव
२४० श्रीमती गायत्री देवी, मेरठ
२४१ श्री भारुमल मोतवानी, खंडवा
२४२ चौधरी रघुबीर सिंह, बुलन्दशहर
२४३ श्री रामलाल, मलिक नयी दिल्ली
२४४ " कौशल सिंह, महेन्द्रगढ़
२४५ " सुगन चन्द, गुड़गाव
२४६ " विद्या सागर आर्य, कलकत्ता-२०
२४७ श्रीमती बीना गुप्त, कलकत्ता-२३
२४८ श्री जयराम दास, अमृतसर
२४९ श्रीमती राजवती, अमृतसर
२५० श्री फतेह चन्द शर्मा, आराधक शाहदरा, दिल्ली-३२
२५१ " मंगीलाल पटेल, खरगौन
२५२ श्रीमती शान्ति देवी मलिक, नई दिल्ली-५
२५३ श्री सन्त प्रसाद सेठ, जौनपुर
२५४ " रामचन्द्र रजनी, खंडवा
२५५ " भगवान दास, दिल्ली-६
२५६ " चन्द्र भान, गुडगांव
२५७ " हंसराज, हिसार
२५८ " बाबू लाल सौलंकी, जोधपुर
२५९ स्वामी ब्रह्मानन्द दंडी, एटा
२६० " जगदीश्वर प्रसाद, आगरा
२६१ " ज्योति प्रसाद नयी, दिल्ली-२७
२६२ " राम प्रकाश भारद्वाज, जालन्धर
२६३ " बस्तीराम टेक, जोधपुर
२६४ " लालचन्द भाटिया, दिल्ली-३२
२६५ " मूल सिंह कछवाह, जोधपुर
२६६ " रूप नारायण वर्मा, जयपुर
२६७ " जीवन राम, वाराणसी

२६८ " प्रहलाद दास, इन्दौर
२६९ " हरिदेव अग्निहोत्री, दिल्ली-७
२७० " बलदेवराज यदुवंशी, गुरदासपुर
२७१ " बालक राम, गुरदासपुर
२७२ " वजीर चन्द, भटिंडा
२७३ " बहादुर मल, बीकानेर
२७४ " रामकिशोर गुप्त, मेरठ
२७५ " गैंदा मल साहनी, नयी दिल्ली-५
२७६ " सुरेश चन्द्र खंडेलवाल, राजेन्द्रगांव (म. प्र.)
२७७ " ब्रह्मानन्द श्रीवास्तव, दिल्ली-७
२७८ " सुगन चन्द्र बत्रा, व्यावर राजस्थान
२७९ " रामेश्वर गोकुल जी हजारी, नीमाड
२८० " गुरूदयाल सिंह आर्य, लुधियाना
२८१ " राम दयाल सोनी, जोधपुर
२८२ " भीखाराम, जोधपुर
२८३ " देवराज, जालन्धर
२८४ श्रीमती द्रोपदी देवी साहनी, नयी दिल्ली-४९
२८५ सुश्री रामदेवी तनेजा, नयी दिल्ली-२७
२८६ श्री प्रेम सागर, दिल्ली-७
२८७ " मामचन्द रिवाड़िया, नयी दिल्ली-२७
२८८ " दयानन्द प्रकाश अग्रवाल, बुलन्दशहर
२८९ " विक्रमादित्य गुप्त, बीकानेर
२९० " काशी नाथ शास्त्री, जौनपुर
२९१ " ऋषि राम, कुरूक्षेत्र
२९२ " भारत भूषण, जालन्धर शहर
२९३ " डी ० आर० चन्द्रा, अलीगढ़
२९४ " मलखान सिंह, मुजफ्फर नगर
२९५ " मनुदेव अभय, इन्दौर
२९६ श्री गंगासागर तिवारी, इन्दौर
२९७ ,, जयप्रकाश आर्य, मुजफ्फरनगर
२९८ " रमेशचन्द्र श्रीवास्तव, फर्रुखाबाद
२९९ " हरचरणलाल वर्मा, इन्दौर
३०० " भागचन्द आर्य, इन्दौर
३०१ सुश्री अनिता, शिहौर (म. प्र.)
३०२ श्री अमरसिंह, मंडी (एच.पी.)
३०३ ,, गंगाप्रसाद, नई दिल्ली
३०४ श्रीमती टिकन देवी, नई दिल्ली-२७
३०५ श्री केवलकृष्ण, विलासपुर
३०६ ,, रामदत्तामल खन्ना, जयपुर
३०७ श्रीमती अन्नपूर्णा देवी, जौनपुर
३०८ श्री घनश्याम दास खंडेलवाल, राजेन्द्रगढ़ (एम.पी)
३०९ ,, रामभूल शर्मा, सा. आ. प्रति. सभा नयी दिल्ली
३१० ,, भगवान लाल, नीमच कैन्ट (एम.पी.)
३११ ,, रामफल त्यागी, मेरठ
३१२ श्रीमती गीता मलिक, नई दिल्ली-५
३१३ " विमला देवी, रूड़की
३१४ श्री भगवान दास साहू, झाँसी
३१५ " रमेशचन्द्र शर्मा, इन्दौर
३१६ " रतनलाल, इन्दौर
३१७ श्रीमती चन्द्र कांता, शिहौर (म०प्र०)
३१८ श्री त्रिभुवन नाथ, साहबगंज
३१९ " साधुराम, कुरूक्षेत्र
३२० " परमानन्द, चड्ढा, दिल्ली
३२१ " वीरेन्द्रसिंह जी वीर, मुजफ्फरनगर
३२२ " अर्जुनदास धनानी, इन्दौर
३२३ " जगन्नाथ गुप्त, दिल्ली
३२४ " पन्नालाल आर्य, जौनपुर
३२५ श्रीमती शन्नो देवी भुवनेश्वर, उड़ीसा
३२६ श्री जगन्नाथ सिंह वर्मा, अलवर
३२७ " रामकुमार, पटना (बिहार)
३२८ श्रीमती चन्द्रवती देवी, नई दिल्ली
३२९ श्री लक्ष्मण सिंह वर्मा, अलवर
३३० श्री बाबूलाल, फतेहपुर
३३१ ,, बालेश्वर प्रसाद अग्रवाल, नयी दिल्ली-१
३३२ श्रीमती चित्रा, जोधपुर
३३३ श्री साधुशरण चौधरी, चम्पारण (बिहार)
३३४ ,, ओम्प्रकाश, मुजफ्फरनगर
३ ५ ,, लक्ष्मी नारायण, फतेहपुर
३३६ ,, जयसिंह गायकवाड़, जबलपुर
३३७ ,, नारायण प्रसाद साहू, विलासपुर
३३८ ,, नरेन्द्र कुमार शर्मा, अलीगढ़
३३९ ,, जमुना प्रसाद, बिहार

३४० श्रीमती भगवती देवी, मुजफ्फरनगर
३४१ ,, महेन्द्रा विद्यावती, चण्डीगढ़
३४२ ,, निर्मलादेवी, मण्डी
३४३ श्री रामकरण अग्रवाल, राजेन्द्रगढ़ (एम० पी०)
३४४ ,, जयगोपाल, पटियाला
३४५ श्रीमती सुमित्रा चड्ढा, नयी दिल्ली
३४६ श्री गिरधारीसिंह, जोधपुर
३४७ श्रीमती कौशल्या, बम्बई-५२
३४८ श्री रविदत्त वैद्य, ब्यावर, राजस्थान
३४९ श्रीमती स्नेहलता, जोधपुर
३५० ,, प्रेमचन्द्र, इन्दौर
३५१ ,, बलदेब, मुजफ्फर नगर
३५२ ,, प्रभुदयाल, लश्कर
३५३ ,, शत्रुघ्न प्रसाद, साहू, बिलासपुर
३५४ ,, रामस्वरूप सिंह, फतेहपुर
३५५ ,, रामलखन गुप्त, कलकत्ता
३५६ ,, वेदप्रकाश आर्य, लुधियाना
३५७ श्रीमती चम्पादेवी, बिहार
३५८ श्री रामलाल, बिहार
३५९ ,, कर्मवीर वानप्रस्थी, सौराष्ट्र
३६० ,, ताराचन्द, मण्डी
३६१ ,, धर्मदास, सहारनपुर
३६२ ,, चन्द्रप्रकाश, जोधपुर
३६३ श्रीमती सूर्यकुमारी, मुजफ्फरनगर
३६४ श्री लक्ष्मीप्रसाद गुप्त, बिलासपुर
३६५ श्रीमती पुष्पा, जोधपुर
३६६ ,, अरुणा, जोधपुर
३६७ श्री विष्णुप्रसाद, नवादा
३६८ ,, इलमसिंह, मुजफ्फर नगर
३६९ ,, भगवान भाई, अंजड़ (गुजरात)
३७० ,, श्यामबाबू वर्मा, धौलपुर
३७१ ,, आनन्द प्रकाश, मेरठ
३७२ ,, तिलकराम आर्य, मुजफ्फर नगर
३७३ श्रीमती शीलवती रस्तोगी, मेरठ
३७४ श्री रामनाथ परचूनिया, दिल्ली-५१
३७५ ,, सोमराज भार्गव, गुरदासपुर
३७६ ,, रामचन्द्र मेहता, नूरपुर (कांगड़ा)
३७७ श्रीमती सावित्रीदेवी, पटियाला
३७८ श्री दामोदर होतचन्द, राजकोट
३७९ ,, धनीदेवी भसीन, नयी दिल्ली-८
३८० ,, सुग्रीवदत्त आर्य, पीवा (एम० पी०)
३८१ ,, अमरनाथ हांड़ा, जालन्धर शहर
३८२ ,, नारायण प्रसाद अग्रवाल, बुलन्दशहर
३८३ ,, ब्रजभूषण लाल, सहारनपुर
३८४ ,, धीरजसिंह, महिपालपुर, दिल्ली
३८५ ,, प्रियव्रतदास, इंजीनियर भुवनेश्वर, उड़ीसा
३८६ ,, ईश्वरदास मदान, मेरठ
३८७ श्रीमती सावित्री देवी, कांगड़ा
३८८ ,, कौशल्या खंडूजा, अलवर
३८९ श्री ऊधौदास गैंदा, अलवर
३९० ,, कृष्णलाल आनन्द, दिल्ली-६
३९१ श्रीमती वीना दरगन, अलवर
३९२ श्री आनन्द प्रकाश चौकर, अलवर
३९३ ,, छोटूसिंह एडवोकेट, अलवर
३९४ ,, हेतराम आर्य, अलवर
३९५ ,, सत्यमूर्ति, मुजफ्फर नगर
३९६ श्रीमती धर्मवती देवी, बुलन्दशहर
३९७ श्री नरेन्द्र कुमार मित्तल, सहारनपुर
३९८ ,, ओम्प्रकाश सर्राफ, दिल्ली-६
३९९ ,, अचरजलाल बजाज, मेरठ
४०० ,, अमींचन्द, कांगड़ा
४०१ ,, दशरथ, बिहार
४०२ श्रीमती कमलेश चोकरा, अलवर
४०३ ,, ईश्वरदेवी गैंदा, अलवर
४०४ श्री रघुवीरसिंह गुप्त, जयपुर
४०५ ,, राजेन्द्र प्रकाश, एटा
४०६ ,, दालचन्द आर्य, अलवर
४०७ श्रीमती शारदा देवी, अलवर
४०८ , कमला शर्मा, अलवर
४०९ श्री जगत नारायण जैसवाल, रांची
४१० श्री पुरषोतम दास, बुलन्दशहर
४११ ,, घनश्याम दास, लश्कर

४१२ ,, राम नारायण शास्त्री, फतेहपुर
४१३ मास्टर सुनील कुमार, मेरठ
४१४ श्रीमती सत्यवती, दिल्ली-६
४१५ श्री फूलचन्द गुप्त, देवरिया
४६६ ,, किशनलाल, दिल्ली
४१७ ,, रूपचन्द, बरवानी (एम० पी०)
४१८ ,, देवीदयाल खन्ना, नयी दिल्ली-६०
४१९ श्रीमती इन्द्रवती, दिल्ली
४२० श्री जगदीश प्रसाद, नीमच कैन्ट (एम० पी०)
४२१ ,, एस० डी० तिवारी, फतेहपुर
४२२ ,, रामचन्द्र शर्मा, नीमच कैन्ट (एम० पी०)
४२३ ,, ठाकुरदास दरगन, अलवर
४२४ ,, शंकरदास कटारिया, फिरोजपुर
४२५ ,, रामसिंह, अलवर
४२६ श्रीमती आशादेवी, रांची
४२७ श्री मुनदरशाह, पटना
४२८ ,, मदनलाल वर्मा, मन्दसौर
४२९ श्रीमती निर्मल कुमारी, नयी दिल्ली-२४
४३० ,, यशोदादेवी, मेरठ
४३१ श्री प्रेमकुमार, इन्दौर
४३२ ,, रघुलाल, मुजफ्फर नगर
४३३ ,, वीरसेन मलिक, मुजफ्फर नगर
४३४ ,, श्रीचन्द जैन, सहारनपुर
४३५ ,, छत्रपाल आर्य, नयी दिल्ली-४३
४३६ ,, दीनदयाल आर्य, दिल्ली
४३७ ,, दानसिंह मेहरा, जि. अल्मोड़ा (यू. पी.)
४३८ ,, रोशनलाल, अलवर
४३९ श्रीमती राजदेवी, फिरोजपुर
४४० ,, मोहनदेवी, अलवर
४४१ श्री धर्मजस चौकर, अलवर
४४२ ,, अमरसिंह, अलवर
४४३ श्री पूरनचन्द गोयल, अलवर
४४४ ,, स्वामी व्रतानन्द, चितौड़गढ़
४४५ ,, विलायतीराम, लुधियाना
४४६ ,, कृपाराम, मेरठ
४४७ ,, मित्रसेन, मेरठ
४४८ ,, सीताराम, मेहसाना गुजरात
४४९ ,, जवाहर लाल, नांदेड़ महाराष्ट्र
४५० ,, श्रीचन्दसदौरमल, अहमदाबाद
४५१ श्रीमती सावित्री देवी बजाज, बम्बई-७४
४५२ श्री जसवन्त चतुरभाई पटेल, अहमदाबाद
४५३ ,, रामकृष्ण फकीरचन्द राठी, अकोला
४५४ ,, एच० एस० भोजराज, नांदेड़ महाराष्ट्र
४५५ ,, पी० वी० रामकृष्ण, नांदेड़ महाराष्ट्र
४५६ ,, गंगाधर माधवराव गूजर, नांदेड़ महाराष्ट्र
४५७ ,, गंगाधर रूखमजी, नांदेड़ महाराष्ट्र
४५८ ,, ओम्प्रकाश मुरारीलाल अग्रवाल, जालना
४५९ सुश्री मंजुला देवी ओम्प्रकाश अग्रवाल, जालना
४६० श्री फूलचन्द मूलचन्द अग्रवाल, जालना महाराष्ट्र
४६१ ,, परशुराम दुधात, बम्बई
४६२ ,, शिवमुनी, नांदेड़ महाराष्ट्र
४६३ ,, अशोककुमार भगुलाल, औरंगाबाद
४६४ ,, गोविन्दलाल बालकृष्ण व्यास, उस्मानाबाद
४६५ ,, बाबूराव नारायण राव, उस्मानाबाद
४६६ ,, कल्याण सिंह, अलवर
४६७ ,, नारायण दास, शिहौर
४६८ श्रीमती धनी वैद्य, मंडी
४६९ श्री रूलियाराम कुरुक्षेत्र
४७० ,, बाबूराम चौहान, कुरुक्षेत्र
४७१ ,, अम्बालाल गंगाराम पटेल, मेहसाना
४७२ ,, छगनलाल गंगाराम, मेहसाना
४७३ ,, बलदेव राज बजाज, चैम्बूर, बम्बई
४७४ ,, प्रवीणचन्द जयन्तीलाल पटेल, अहमदाबाद
४७५ ,, उग्रसेन राठौर, नांदेड़
४७६ ,, मूलचन्द बन्दूलाल पांडे, नांदेड़ महाराष्ट्र
४७७ ,, एकनाथराव कृष्णराव कुलकर्णी, नांदेड़ महाराष्ट्र
४७८ ,, लक्ष्मीनारायण नन्दराम भाटी, नांदेड़ महाराष्ट्र
४७९ ,, रणमलश्यामराव, नांदेड़ महाराष्ट्र
४८० ,, गंगाधर राजनाशंकेवर, नांदेड़ महाराष्ट्र
४८१ ,, विनायक वैंकटेश, औरंगाबाद
४८२ ,, ट्रिम्बकराव रघुनाथराव देशपांडे, जालना महाराष्ट्र
४८३ ,, नागराव टुकराम हेक, नांदेड़ महाराष्ट्र

४८४ " कांन्तिलाल भीखमचन्द वर्मा, अकोला, महाराष्ट्र
४८५ " उग्रसेन नांदेड़, महाराष्ट्र
४८६ " जे० एस० राव मुंजा जी, नांदेड़, महाराष्ट्र
४८७ श्री छंगामल तुलसी दास, औरंगाबाद
४८८ " एस० जे० तनेजा, औरंगाबाद
४८९ श्रीमती सुशीला देवी साहनी, बम्बई-६२
४९० श्री रासमल पांडु, सिकन्दराबाद
४९१ " कल्याणी दत्तात्रेय, मेहबूबनगर (ए० पी०)
४९२ " प्रकाश कांचीपुरम, हैदराबाद
४९३ " सत्यनारायण गिरी, हैदराबाद
४९४ श्रीमती रेनुकाबाई ट्रिमल, मैसूर
४९५ श्री शंकरराव रामचन्द्र, उस्मानाबाद
४९६ श्रीमती रतनाबाई शंकरराव, उस्मानाबाद
४९७ श्री नरसिहा मुलकराज गिरी, हैदराबाद
४९८ " जे० एन० दादाराव, उस्मानाबाद
४९९ " बसी रेड्डी मेहबूबनगर (ए० पी०)
५०० " शिवराजबाबू लखामल स्वामी, हैदराबाद
५०१ " रामदास द्वारकादास मेहता, सिकन्दरावाद
५०२ श्रीमती किशोरी देवी, निजामाबाद
५०३ श्री गुन्ती कृष्ण, हैदराबाद
५०४ " चेतानन्द पोलेकर, सिकन्दराबाद
५०५ " रामकृष्ण दास, हैदराबाद
५०६ " जगदीश, हैदराबाद
५०७ " ए० डी० बी० गुडप्पा, सिकन्दराबाद
५०८ " बी० बाई० रेड्डी, हैदराबाद
५०९ " चिटापू ईश्वर रेड्डी, सिकन्दराबाद
५१० " होतराम चेलाराम कंचन्दानी, औरंगाबाद
५११ " बोराराम रेड्डी, हैदराबाद
५१२ " गंगाराम, हैदराबाद
५१३ " बी नरसिमलू, हैदराबाद
५१४ नयन देवेश, हैदराबाद
५१५ श्रीमती अनसुईया देवी बौरा, हैदराबाद
५१६ श्री एम० जी० राव, हैदराबाद
५१७ श्रीमती एम० सौभाग्यवती, हैदराबाद
५१८ श्री सतीश नारायण, हैदराबाद
५१९ " जगन्नाथ सचदेव, हैदराबाद
५२० " एम० डी० राव, अदीलाबाद (ए० पी०)
५२१ " भीमना सागरी महबूबनगर (ए० पी०)
५२२ " मोहनप्पा चालक, सिकन्दराबाद
५२३ श्रीमती सीताबाई, (आन्ध्र प्रदेश)
५२४ श्री गोविन्द राव गोज़े, निजामाबाद
५२५ " सिद्धाम सेठीवीरेश गुप्ता, निजामाबाद
५२६ " सोमदेव, निजामाबाद
५२७ " जे० वी० पाठी, वारंगल (ए० पी०)
५२८ " बाबू लाल पाठक, निजामाबाद
५२९ " सत्यनारायण पिटला, हैदराबाद
५३० " बोरा सत्यनारायण रेड्डी, हैदराबाद
५३१ श्री मंगतलाल, हैदराबाद
५३२ " रामिहा वैद्य, निजामाबाद
५३३ " मदराम जयव्रत, हैदराबाद
५३४ " ब्रजमोहन पुरवा, हैदराबाद
५३५ " लक्ष्मीनारायण बद्रीनारायण व्यास, उस्मानाबाद
५३६ " पिटल महेश्वरी, हैदराबाद
५३७ श्रीमती राम एस. नारायण रेड्डी, हैदराबाद
५३८ श्री मोहनलाल उपाध्याय, हैदराबाद
५३९ " छगनलाल विजयवर्गीय, हैदराबाद
५४० " शंकर रेड्डी, हैदराबाद
५४१ " गोवर्धन कतुरवार, अदीलाबाद
५४२ श्रीमती सरस्वती बाई चव्हाण, हैदराबाद
५४३ श्री मदनलाल व्यास हैदराबाद
५४४ " बिनय कुमार, हैदराबाद
५४५ " मुरलीधर श्रीवास्तव, पटना
५४६ " वंशीलाल आर्य इटावा
५४७ " पी. एन. बी. चेरी, हैदराबाद
५४८ " जगदीशराय गर्ग, बरनाला
५४९ श्रीमती लीलाबेन जयदेवभाई, बम्बई
५५० श्री रामचन्द्र वर्मा, गुलवर्गा, मैसूर
५५१ " अम्बाजी बालाप्पा फुलसी, शोरापुर, मैसूर
५५२ " चेरुकुपल्ली नारायण रेड्डी, निजामाबाद
५५३ श्रीमती कलावती देवी पाठक, निजामाबाद
५५४ श्री राजशेखरम गुडू, वारंगल (ए०पी०)
५५५ श्रीमती किरण देवी पुरवा, हैदराबाद

५५६ श्रीमती सुशीलादेवी विद्यालंकृता, सिकन्दराबाद (ए० पी०)
५५७ श्री अम्बारावजी पीरमल शंकररावजी, सेडम मैसूर
५५८ " बाल अलवा रेड्डी, हैदराबाद
५५९ श्रीमती मौरबदाबाई उपाध्याय, हैदराबाद
५६० " रुक्मणी देवी, हैदराबाद
५६१ श्री पी. आर. गुरुस्वामी, महबूबनगर (ए०पी०)
५६२ " बाबूराव चव्हाण, हैदराबाद
५६३ श्रीमती देवी बाई व्यास, हैदराबाद
५६४ श्री प्रदीप कुमार, हैदराबाद
५६५ " ओमप्रकाश भैरूलाल, उस्मानाबाद
५६६ " भुवनेश भूषण शर्मा, इटावा
५६७ " नारायण प्रसाद, भागलपुर
५६८ " होरीलाल गुप्त, इटावा
५६९ श्रीमती मणिबेन भगवान जी परमार, बम्बई
५७० श्री आर० एम० बुद्धिवन्त सेठी, गुलवर्गा मैसूर
५७१ " गुराप्पा पौलामपल्ली, गुलवर्गा मैसूर
५७२ " श्री स्वामी दिव्यानन्द सरस्वतीजी, भिलाई
५७३ " नौतनदास रमानी, नीमच कैन्ट
५७४ श्रीमती शीला देवी चोपड़ा, दिल्ली
५७५ श्री जयदेवसिंह, नांगलोई दिल्ली
५७६ श्रीमती शकुन्तला देवी, नई दिल्ली
५७७ श्री राजगुरू शर्मा, महू (एम०पी०)
५७८ " बागीश कुमार, एटा (उ०प्र०)
५७९ " डी० राव, उस्मानाबाद (ए०पी०)
५८० " शरत यादव गोवर्धन, बिलासपुर
५८१ " रघुकुल भूषण शर्मा, नई दिल्ली
५८२ " सुबोध भटनागर, दिल्ली
५८३ " सुश्री लक्ष्मी जौडन, नई दिल्ली
५८४ " भगवती प्रसाद कलानी, नीमच
५८५ " शिरोमणि दत्त, नीमच कैन्ट
५८६ " विद्याभूषण प्रसाद, वैशाली
५८७ " लखनलाल गुप्त, इलाहाबाद
५८८ " केवलकृष्ण गोयल, जोधपुर
५८९ श्रीमती नारायण देवी तनेजा, नई दिल्ली
५९० श्री वेदप्रकाश बैस्ट चम्पारण, (बिहार)
५९१ श्रीमती देवकी देवी मल्होत्रा, बरेली
५९२ श्री आशुराम आर्य, चण्डीगढ़
५९३ " रामकृष्ण नन्दलाल व्यास, लातूर
५९४ " लिंगप्पा देसाई, मैसूर
५९५ " जगन्नाथ राव मैसूर
५९६ " गोबिन्दराम, नई दिल्ली
५९७ " सुमन व्यास, चम्बा
५९८ " बागीशचन्द्र, मध्यप्रदेश
५९९ " धामजी विजयकुमार, बीकानेर
६०० श्रीमती कृष्ण कुमारी, आगरा
६०१ सुश्री सरस्वती, हैदराबाद
६०२ श्री सदानन्द दण्डी, एटा (उ०प्र०)
६०३ " विजयकुमार, नई दिल्ली
६०४ " ओमप्रकाश भटनागर, दिल्ली
६०५ " हीरालाल बुद्धबानी, रायपुर
६०६ श्रीमती एस० एस० कम्बूरथ, नई दिल्ली
६०७ श्री रामस्वरूप, अजमेर
६०८ " शीतलप्रकाश शास्त्री, मेरठ
६०९ " मोहन प्रसाद सिंह, बिहार
६१० " तकदीरसिंह, रोहतक
६११ " आचार्य रामानन्द शास्त्री, पटना बिहार
६१२ " सुश्री किट्टी, अलवर
६१३ श्री रामलाल शर्मा, भटिण्डा
६१४ " महेशचन्द्र, नयी दिल्ली-१६
६१५ " एम० के० रथानी, अजमेर
६१६ " सच्चिदानन्द शास्त्री, लखनऊ
६१७ " ब्रह्मसिंह शास्त्री, मेरठ
६१८ श्री रामलखन आर्य, बिहार
६१९ सुश्री पूनम दरगन, नयी दिल्ली
६२० ,, अबधबिहारी लाल, एटा
६२१ ,, सुश्री इन्द्रा गुप्त, नयी दिल्ली
६२२ श्री एल० के० हीरालाल, चन्दूर
६२३ ,, सुभाष सी० भार्गव, नयी दिल्ली-८
६२४ ,, गुलाबीचन्द्र, गाजीपुर
६२५ सुश्री विद्या पंडित, बम्बई
६२६ श्री मास्टर निशिधन, नयी दिल्ली

६२७ सुश्री रतरी, नयी दिल्ली
६२८ श्रीमती कान्ता गुप्त, नयी दिल्ली-१४
६२९ सुश्री चन्द्रावती, नयी दिल्ली
६३० श्री क्षितीश कुमार वेदालंकार, नयी दिल्ली-१
६३१ डा० सुरेशचन्द्र शास्त्री, झांसी
६३२ श्रीमती के० भार्गव, नयी दिल्ली
६३३ ,, आनन्द ब्रह्मचारी, नई दिल्ली-५
६३४ ,, पी० गोपालन, बम्बई
६३५ श्रीमती केसरी देवी तौमर, नागपुर

12th Arya Maha Sammelan Mauritius

DELEGATES OF THE ARYA PRATINIDHI SABHA SOUTH AFRICA

1 Mr. S. Chotai
2 " P. Seebran
3 " S. Rambharose
4 " Pt. Nardev Vedalankar
5 Mr. D. Bundhoo
6 Mrs. D. Bundhoo
7 Mr. R. Chotai
8 Pt. S. Dookran
9 Mr. B. B. Maharaj
10 " G. M. Singh
11 " J. Bishoon
12 " R. Ramkissoon
13 Pt. L. Sewgolam
14 Mr. G. Baijnath
15 " K. Lalloo
16 " P. Kassiepersadh
17 " S. Satyadeva
18 Mrs. V. Singh
19 Pt. Rampurthap
20 Mr. S. Purmasir
21 " Bal Ganesh
22 Pt. S. Jugmohan
23 Mr. R. Dookran
24 " R. Marrie
25 " D. Vallabh
26 " Baghwan
27 " Pt. R. Bunwari
28 Mr. P. Mohan
29 Mrs. R. Marrie
30 " D. Vallabh
31 " Baghwan
32 " S. L. Singh
33 Mr. R. Ramesar
34 Mrs. N. D. Maharaj
35 " P. B. Singh
36 " R. RaMesar
37 Miss. Neela Peters
38 Mr. R. Latchman
39 Mrs. A. E. Mancy
40 Mrs. R. Latchman
41 " C. Budree
42 " R. Suparsad
43 Mr. D. Deoduth
44 Mrs. B. Ramkissoon
45 Mr. B. Ramkissoon
46 Miss. Balwant
47 Mrs. S. Hanooman
48 " S. Purmasir
49 " B. D. Lalla
50 Mr. Komal Ramsurjoo

51 Mrs. D. Jamdoo
52 " D. Saligram
53 Pt. A Singh
54 Miss. S. Singh
55 Mrs. Bal Ganesh
56 " P. Bangalee
57 " S. Choudree
58 " D. Bramdaw
59 Mr. N. Ramson
60 Mrs. Sevnaryan
61 Mr. Sevnaryan
62 Mrs. O. Badree
63 Mr. B. Chawda
64 " B. Gowindjee
65 Dr. H. Jibodh
66 Mrs. L Sewgolam
67 " B. Chawda
68 " K. Govindjee
69 Mr. R. Rampersadh
70 Mrs. R. Rampersadh
71 Mrs. R. Ramkisson
72 Mr. Raghunandan
73 " R. Cheddie
74 " S. Maharaj
75 " S. R. Makhan
76 Mr. Perumal
77 Mr. Hurburan
78 „ S. Sewbruth
79 Mrs. Hurburan
80 Mr. Sewbalik
81 „ P. Mohan
82 „ R. Bhika
83 Miss K. Janikce
84 Mrs. Ranjith Singh
85 „ S. Kalideen
86 „ D. Beekum
87 „ Lalitha Devi
88 Mr. S. Beekum

DELEGATES OF EAST AFRICA

1 Shree Achhra Dassjee
Secretary Arya Samaj Nairobi
2 „ Satayadevjee Vidyalankar "
3 " Mathura Dassjee "
4 Shree Banshidharjee Nairobi
5 " Krishan Raval ji Dar-es-Saalam
6 " Shiv Shanker Singhjee Zanzibar

दो उपयोगी पुस्तकमालाएँ

देश और निवासी पुस्तकमाला

रूस	☐	जगदीशचन्द्र जैन
अमेरिका	☐	प्राणनाथ सेठ
ब्रिटेन	☐	ब्रजकिशोर नारायण
जापान	☐	हरिदत्त शर्मा
मारिशस	☐	जितेन्द्रकुमार मित्तल
श्रीलंका	☐	भदन्त आनन्द कौसल्यायन
इसरायल	☐	शांतिस्वरूप
नेपाल	☐	विराज
अफ्रीका	☐	जितेन्द्रकुमार मित्तल
मिस्र	☐	आनन्द जैन
अफगानिस्तान	☐	जमनादास अख्तर
थाईलैंड	☐	जितेन्द्रकुमार मित्तल
पाकिस्तान	☐	हंसराज रहबर
बर्मा	☐	आनन्द जैन
भूटान	☐	कमला सांकृत्यायन
सिक्किम	☐	कमला सांकृत्यायन
फ्रांस	☐	ओमप्रकाश पालीवाल
इटली	☐	आनन्द जैन
इण्डोनेशिया	☐	जितेन्द्रकुमार मित्तल
चीन	☐	हंसराज रहबर
चेकोस्लोवाकिया	☐	ओमप्रकाश पालीवाल
कनाडा	☐	त्रिलोक दीप
बांग्ला देश	☐	विनोद गुप्त
जर्मनी	☐	आनन्द जैन
आस्ट्रेलिया	☐	दलजीत बग्गा

भारत-दर्शन पुस्तकमाला

आन्ध्र प्रदेश	☐	ए० रमेश चौधरी 'आरिगपूडि'
तमिलनाडु	☐	बालशौरि रेड्डी
मैसूर	☐	बालशौरि रेड्डी
गुजरात	☐	पीताम्बर पटेल, गोपालदास नागर
हरियाणा	☐	योगराज थानी
बंगाल	☐	हंसकुमार तिवारी
हिमाचल प्रदेश	☐	विराज
महाराष्ट्र	☐	हरिमोहन शर्मा
गोआ : पांडिचेरी	☐	हरिमोहन शर्मा, योगराज थानी
कश्मीर	☐	जीवनलाल 'प्रेम'
मध्य प्रदेश	☐	राजेन्द्र अवस्थी
राजस्थान	☐	यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'
पंजाब	☐	सुदर्शन चोपड़ा
बिहार	☐	सत्यदेवनारायण सिन्हा
नागालैंड	☐	जयन्त वाचस्पति
भारत के द्वीप	☐	योगराज थानी
उत्तर प्रदेश	☐	हरिदत्त शर्मा
दिल्ली	☐	रमेश बक्षी
केरल	☐	बालकृष्ण पिल्लै
असम	☐	जयन्त वाचस्पति
मेघालय	☐	वीणा श्रीवास्तव
उड़ीसा	☐	तारिणीचरण दास चिदानन्द
लद्दाख	☐	त्रिलोक दीप
त्रिपुरा-मणिपुर	☐	जयन्त वाचस्पति
अरुणाचल मिजोरम	☐	कमला सांकृत्यायन

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य चार रुपये

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६

SPARES *for* DIESEL ENGINES *and* COMPRESSORS

PISTONRINGS - CYLINDER LINERS *and* PISTONS

Manufacturers

STEELGATE PISTONRINGS INDUSTRIES

Post Box-94; AGRA (INDIA)

Gram : **'PISTONRING'**

Phones : **74398**
61809
61865

आर्य समाज स्थापना शताब्दी का क्रांतिकारी प्रकाशन

दिव्य दयानन्द दर्शन

卐 卐 卐

स्कूल, कालिज, पुस्तकालय एवं विश्वविद्यालय के लिए

एक प्रति अवश्य मंगायें

मूल्य सिर्फ तीस रुपए मात्र

★★★★

मिलने का पता—

- **सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा**
- **महर्षि दयानन्द भवन**
- **रामलीला मैदान**
- **नयी दिल्ली-१**

:: गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार की ::

सर्वोत्तम स्वास्थ्य-वर्धक औषधियां

च्यवनप्राश

उत्तम पौष्टिक रसायन है। नजला, खांसी, जुकाम में सेवन करें।

पायोकिल

दैनिक प्रयोग के लिए उत्तम है। मसूढ़ों से पीप का आना एवं रक्त आने को रोकता है।

सिद्धमकरध्वज

यौवन स्थिर रखने के लिए उत्तम पौष्टिक रसायन है। पुरुषत्व बढ़ाता है। बुढ़ापे में शक्ति बनाये रखता है।

भीमसेनी सुरमा

नेत्रों के लिये हितकर है। इसके प्रयोग से नेत्रों के अनेक रोग दूर होते हैं।

द्राक्षासव

खून की कमी, शरीर की कमजोरी, भूख न लगना आदि रोगों में सेवन करें।

वसन्त कुसुमाकर

शरीर को पुष्ट करती है। आयु वर्धक है तथा पेशाब अधिक आना आदि रोगों में लाभदायक है।

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (हरिद्वार)

औषधियां हमारे स्थानीय एजेण्ट से लें या हमें पत्र लिखें।

श्री शूरजी वल्लभदास संस्थान

●

मलाबार स्टीमशिप कम्पनी लिमिटेड,

व

वैस्टर्न इंडिया स्पिनिंग एंड मैन्युफैक्चरिंग कं० लि०
की ओर से हार्दिक शुभेच्छाएं

१. मलाबार स्टीमशिप कम्पनी लि० के जलपोत भारत के विशाल तट व विदेशों के बन्दरगाहों पर माल लाने ले जाने का कार्य कर ४० वर्षों से सेवा में संलग्न हैं।

●

२. वैस्टर्न इंडिया स्पिनिंग एंड मैन्युफैक्चरिंग कं० लि० शूरजो फैबरिक्स इस प्रख्यात नाम से उच्च कोटि के टेरिलीन व सूती वस्त्रों के कलात्मक निर्माण द्वारा राष्ट्र के वस्त्रोद्योग को प्रगतिशील बना रहे हैं।

यज्जाग्रतो दूर मुदैति दैवं, तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकम्, तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु। यजु० ३४।१।

जो सुदिव्य जाग्रत सुषुप्त भी दूर दूर तक जाता है,
जो समस्त तेजोवन्तों में ज्योतिर्मय कहलाता है,
शुभसंकल्पों का साधन हो सदैव मेरा मन।

प्रधान कार्यालय :
एक्सप्रेस टावर्स, ४ मंजिल,
नरिमान पोइन्ट, बम्बई-१

●

टेलीफोन : २५४४५५
टेलीग्राम : रूबीकान, बम्बई
टेलेक्स : ०११ २०२२
०११ ३७४२

WITH
BEST
COMPLEMENTS
FROM

Phone : **279837**

NOVELTY PROCESS

Makers of all kinds of Quaiity Blocks
Specialists in colour Works

3438, Gali Bajrang Bali, Chawari Bazar, DELHI-6

When You are in Delhi

VISIT

Phone No : **277328**

HOTEL VISHAL

MAIN BAZAR, PAHAR GANJ, DELHI-6

Near—**New Delhi, Railway Station**

GAY ATMOSPHERE

COMFORTABLE SERVICE

Estd : 1887

Grams : CARBIDE
Phone : 278198

बूड़ामल अमोलकराम
Booramal Amolakram
DEWAN HALL, CHANDNI CHAWK, DELHI-110006

Sole Distributors—**CEMA** Transistor Radios, Tape Recorders & T.V.

हमें गौरव है

कि

वैदिक सम्पदा

जिस पर इस वर्ष का वेद सम्बन्धी

पं० गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कृत

प्राप्त हुआ है वह हमारा प्रकाशन है।

पं० वीरसेन वेदश्रमी को पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति ने ससम्मान बारह सौ रुपयों का पुरस्कार एक सांस्कृतिक समारोह में दिया।

पं० उदयवीर शास्त्री लिखते हैं : प्रस्तुत ग्रन्थ "वैदिक सम्पदा" के लेखक की निजी मान्यताएं ऋषि दयानन्द की मान्यताओं की सीमा से कहीं बाहर निकल गई हों, ऐसे भय की सम्भावना नहीं है। गत चालीस-पैंतालीस वर्षों में समाज व राष्ट्र की दशा में भारी परिवर्तन आ गया है। वर्तमान सन्दर्भ में प्रस्तुत ग्रन्थ के लेखक ने ग्रन्थ में प्रतिपाद्य विषयों का जो चुनाव किया है वह समयानुसार होने से पाठकों के लिए अवश्य लाभप्रद रहेगा।

महात्मा आनन्द स्वामी जी की पुस्तकें

दो रास्ते	महामन्त्र
यह धन किसका है	आनन्द गायत्री-कथा
बोध कथाएँ	एक ही रास्ता
प्रभु मिलन की राह	मानव जीवन-गाथा
मानव और मानवता	भक्त और भगवान्
तत्त्वज्ञान	शंकर और दयानन्द
प्रभुदर्शन	सत्यनारायण व्रत कथा
प्रभुभक्ति	सुखी गृस्थ
घोर घने जंगल में	The only way
उपनिषदों का संदेश	जीवन चरित्र

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली-६

मौरिशस यात्रा से लौटकर

आने वाले आर्य बन्धुओं

के प्रति

हमारी शुभ कामनाएं

मेसर्स—आर० एस० जैन एन्ड कम्पनी

कागज

९२९ छीपी वाड़ा खुर्द

चावड़ी बाजार

देहली-६

✱ V I S H A L ✱

Phone : 585404
586605

The Finest Show House of the Capital

(FULLY AIR-CONDITIONED)

FITTED WITH LATEST PHOTOPHONE-EQUIPMENT

●

Best Sound and Light

EQIPPED WITH ALL MODERN AMENTIES

With Best Compliments

From

Delhi Brick Kiln Owners Association

Jhandewalan, New Delhi.

D. P. Channdha
Secretary,
Delhi Brick Kiln Owners
Association, New Delhi

Phone : 564642

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के उपलक्ष्य में

महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

सुनहरा अवसर

(१) चारों वेदों का सम्पूर्ण भाषा भाष्य १० भागों में (आठ भाग छप चुके हैं) १५०-००

(२) सत्यार्थप्रकाश उर्दू मूल्य ६-००

(३) सत्यार्थप्रकाश मराठी मूल्य ४-५०

(४) आत्मदर्शन (नारायण स्वामी) मूल्य ४-००

(५) नवीन और प्राचीन समाजवाद (नारायण स्वामी) ,, १-६०

(६) आर्य समाज क्या है ? (नारायण स्वामी) ,, ०-५०

(७) दर्शन तत्व विवेक (आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री) मूल्य १०-००

(८) आस्तिक नास्तिक संवाद (ओम्प्रकाश त्यागी) ,, ०-६०

(९) एक ही मार्ग (ओम्प्रकाश त्यागी) ,, ०-३०

(१०) विदेशी देन अस्पृश्यता (ओम्प्रकाश त्यागी) ,, ०-२०

(११) वैदिक संस्कृति के मूल तत्व सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार ,, ६-००

(१२) सामवेद आध्यात्मिक मुनिभाष्य (स्वा० ब्रह्ममुनि) दोनों भागों का मूल्य २०-५०

(१३) दयानन्द दर्शन (डा० वेदप्रकाश गुप्त) ,, ३-५०

(१४) सायण तथा दयानन्द के वेदभाष्यों का तुलनात्मक अध्ययन (डा० विमला) ,, १२-००

(१५) ऋग्वेद का अंग्रेजी अनुवाद, प्रथम भाग (अनुवादक, पं० धर्मदेवजी विद्यामार्तण्ड) मू० २०-००

Contribution of Aryasamaj in the Making of Modern India Radheshyam Pareek १०-००

Teachings of Dayanand (Talks and Sermons) R. P. Pathak १०-००

The Arya Samaj, its cult and Creed (Acharya Vaidyanath Shastri) १०-००

Sciences in the Vedas १२-००

Arya Samaj at a Glance ०-४

Ten Commandments of Arya Samaj (Chamupati M.A.) १-००

सत्यार्थप्रकाश

५० हजार की संख्या में सत्यार्थप्रकाश का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया गया है।

२३ × ३६।१६ आकार के इस क्रान्तिकारी ग्रन्थ का मूल्य, लागत मात्र से भी कम, केवल ३) रुपये रखा गया है।

आर्डर देने की शीघ्रता कीजिये और इसे जन-जन के कर कमलों तक पहुँचाइये।

पुस्तक विक्रय विभाग

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली-१

PRODUCTS OF DISTINCTION KNOWN THROUGHOUT THE WORLD

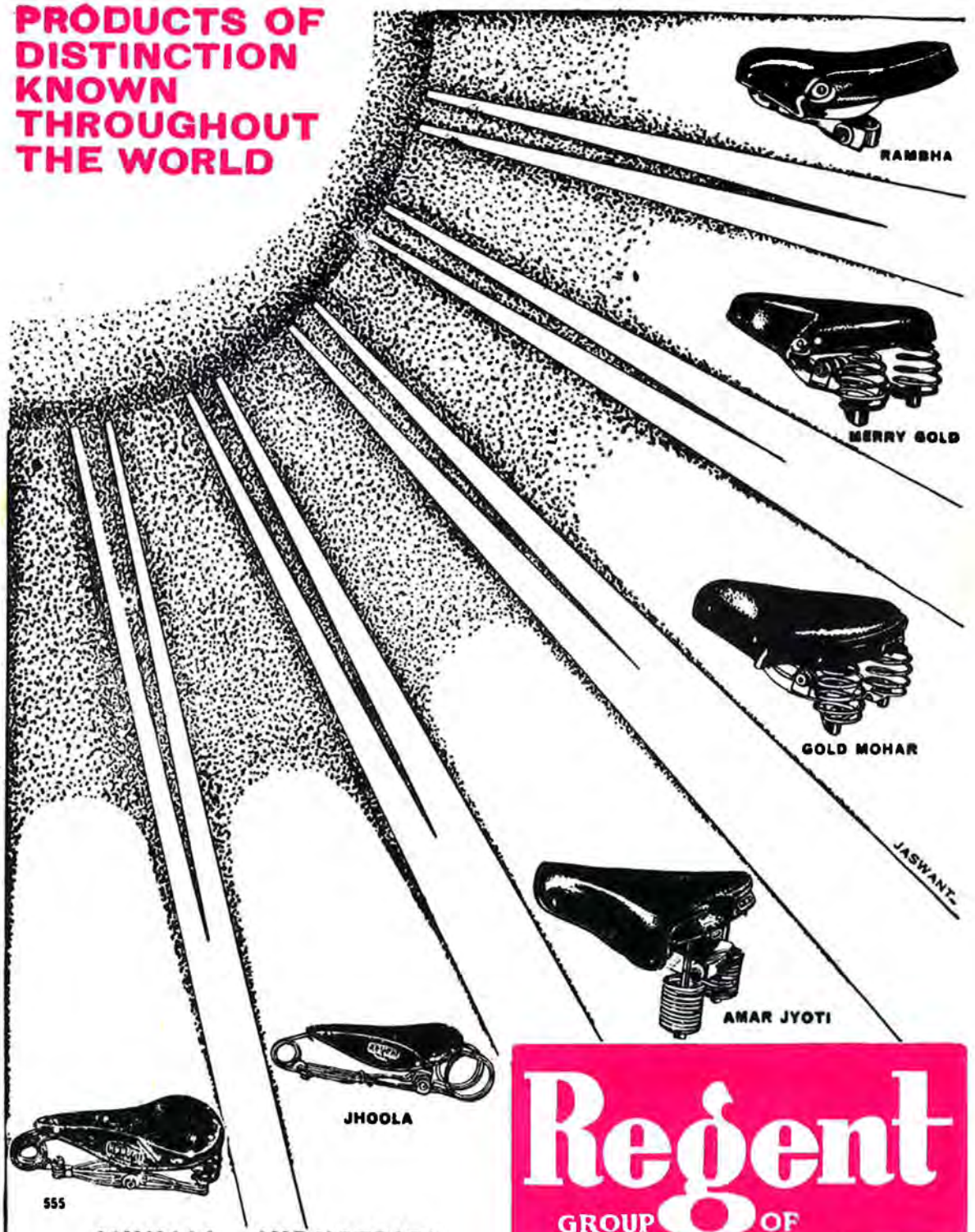

MUNJAL INDUSTRIES
713, INDUSTRIAL AREA 'B' LUDHIANA-3

Regent
GROUP OF
SADDLES

For reliability in Road Transportation
rely on

AIR TRANSPORT CORPORATION

FLEET OWNERS • OPERATORS • GOODS TRANSPORTERS

14, Tara Chand Dutt Street, Calcutta - 1 Phone : 34 - 7105 (3 lines)

REGIONAL OFFICES. BOMBAY, BANGALORE, CALCUTTA & DELHI

CIRCLE OFFICES. Ahmedabad, Bangalore, Bombay, Calcutta Cuttack
Delhi, Ernakulam, Gauhati, Hyderabad, Indore, Jaipur
Jullundur, Kanpur, Madras, Nagpur, Patna, Siliguri and Sivakasi

IN ASSOCIATION WITH

SOUTH EASTERN ROADWAYS
134/4, Mahatma Gandhi Road,
CALCUTTA-7

ROAD TRANSPORT CORPORATION
14, Tarachand Dutt Street,
CALCUTTA-1

Serving the nation with a net work of its own and
scientifically managed 300 branches controlled by
Regional, Circle and Area Offices

कवर न्यू एज प्रिंटिंग प्रे॰ नी झांसी रोड, नयी दिल्ली-११००५५ द्वारा मुद्रित